चौथी दुनिया

हिन्दी का पहला साप्ताहिक

मूल्य 20 रुपये

दिल्ली रविवार 13 सितंबर 2009

भीतर

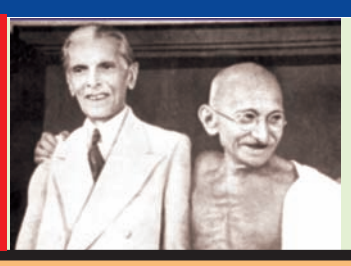

3
जिन्ना, एक बेचैन आत्मा

5
प्रधानमंत्री जी, सौ दिन का एजेंडा कहां है

14
आख़िर क्यों महत्वपूर्ण है विदेश नीति...

“आडवाणी बेहद अनुभवी राजनेता हैं. संघ प्रमुख मोहन भागवत भी उनसे उम्र और अनुभव में उन्नीस ही पड़ते हैं. शायद यही वजह है कि चौतरफा हमलों के बावजूद वह चुप्पी साधे हैं. वह केवल अपने सही वक़्त का इंतज़ार कर रहे हैं.”

आडवाणी बड़े या भागवत

“मोहन भागवत चाहते हैं कि संघ का नियंत्रण एक बार फिर से भाजपा पर स्थापित हो जाए. मुश्किल यह है कि आडवाणी की छवि इतनी बड़ी हो गई है कि उनको साधने में संघ का चाबुक भी नाकाम हो रहा है. भागवत की परेशानी की यही मुख्य वजह है.”

भारत का राजनीतिक आसमान इन दिनों अलग तरह के बादलों से घिरा हुआ है. देश का मुख्य विपक्षी दल अपने ही अंतर्विरोधों से घिरा हुआ है. उसके अपने महारथियों ने तो तलवार खींच ही ली है, आरएसएस का नियंत्रण भी भाजपा पर से मानो छूटता दिख रहा है.

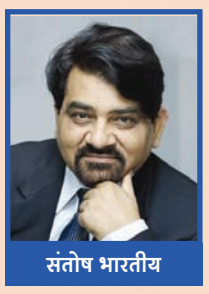

संतोष भारतीय

दरअसल मानसिक उलझन भाजपा में कम है, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ में ज़्यादा है. ऐसा नहीं है कि यह उलझन आज पैदा हुई है, यह उलझन तो सालों पुरानी है. राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और भाजपा दोनों ही अपनी मानसिक उलझन से पैदा हुई बीमारी को पहचानना ही नहीं चाहते. यह बीमारी ही उनके अंतर्द्वंद्व और सिकुड़ने का मुख्य कारण है.

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ गुरु गोलवलकर के समय जिस वैचारिक रास्ते पर चला, वह बाला साहब देवरस के संघ प्रमुख बनने के आख़िरी दिनों में अर्धविराम पर ठिठक गया. बाला साहब देवरस सन 73 में संघ प्रमुख बने और 94 तक रहे. यह समय भारतीय राजनीति में महान उथल-पुथल का रहा. इंदिरा गांधी इसी समय शीर्ष पर रहीं, वे हारी भी और जीती भी. उनकी हत्या भी इसी दौर में हुई. आपातकाल भी इसी दौर में लगा और पहली बार संघ कार्यकर्ता बड़े पैमाने पर जेल गए. संघ के नेता और कार्यकर्ता जेल से छूटे भी तथा देश भर में बात फैल गई कि अधिकांश माफी मांग कर या अंडरटेकिंग देकर छूटे है. इंदिरा गांधी की हत्या के बाद राजीव गांधी देश के प्रधानमंत्री बने और विशाल बहुमत से जीते. उनकी जीत में, कुछ संघ नेताओं का दावा था कि संघ का बहुत बड़ा हाथ है. राजीव गांधी के ख़िलाफ़ जब वीपी सिंह और विपक्ष का आंदोलन चला तो, संघ ने भी दावा किया कि वह उसका मुख्य हिस्सा है. इससे पहले इंदिरा गांधी के ख़िलाफ़ जयप्रकाश नारायण के आंदोलन में भी संघ की सक्रिय हिस्सेदारी थी. इसका सबूत नानाजी देशमुख और गोविंदाचार्य का शीर्ष पर रहना था. दोनों को ही संघ ने एक फ़ैसले के तहत जनसंघ में भेजा था और दोनों ने ही अपनी भूमिका सक्षमता से निभाई.

यही दौर था जब राजीव गांधी के ख़िलाफ़ आंदोलन चला और विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी और वामपंथियों के समर्थन से केंद्र में सरकार बनी. संघ को एक ऐसे व्यक्ति की ज़रूरत पड़ी जो सरकार और संघ और भाजपा के बीच तालमेल तो करे ही, उनके बीच पैदा होने वाली समस्याओं को भी हल करे. संघ ने यह ज़िम्मेदारी भाउराव देवरस पर डाली और उन्होंने इसे बख़ूबी निभाया. देवरस निर्णय लेने वाले व्यक्ति थे. उन्होंने ही यह रणनीति बनाई थी कि वीपी सिंह का मुक़ाबला भाजपा मंदिर आंदोलन से करें. इसके परिणामस्वरूप वीपी सिंह की सरकार गिर गई. हालांकि वीपी सिंह के बाद चंद्रशेखर प्रधानमंत्री बने, फिर नरसिम्हा राव, देवेगौड़ा और इंद्र कुमार गुजराल. अटल बिहारी वाजपेयी बहुत बाद में प्रधानमंत्री बने. लेकिन उसकी

पेज 2

चिंतन बैठक

शिमला में हल्की ठंडक थी. भाजपा के सभी नेता चिंतन बैठक में शामिल होने शिमला पहुंच चुके थे. कई मुख्यमंत्री थे. लगभग सभी राज्य के अतिथि थे. सुबह आठ बजे नाश्ते पर सब मिले क्योंकि उसके बाद बैठक शुरू होने वाली थी. जसवंत सिंह सीधे बैठक में आने वाले थे. अचानक नरेंद्र मोदी ने राजनाथ सिंह को संबोधित कर सभी को कहा कि अहमदाबाद लौट रहे हैं, क्योंकि वहां दंगों का अंदेशा पैदा हो गया है. मोदी ने जसवंत सिंह की किताब और सरदार पटेल को लेकर उनके रुख़ पर कहा कि पटेल समुदाय गुजरात में शांति भंग करने जा रहा है. कोई कुछ नहीं बोला. राजनाथ सिंह ने कहा कि बैठक से पहले पार्लियामेंटरी बोर्ड की बैठक कर लेते हैं. बैठक में राजनाथ सिंह ने कहा कि नरेंद्र मोदी का कहना है कि जसवंत सिंह पर कार्रवाई हो, नहीं तो वे गुजरात वापस जा रहे हैं. उपस्थित सभी लोगों ने कहा कि जसवंत सिंह को पार्टी से निकाल देना चाहिए. केवल आडवाणी उस बैठक में ख़ामोश रहे. बाद में उन्होंने कहा कि वे इस फ़ैसले से सहमत नहीं थे. उस बैठक में आडवाणी एक नेता की तरह नहीं, बल्कि सामान्य नेता की तरह व्यवहार करते रहे.

सभी फोटो- *प्रभात पाण्डेय*

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

सीबीआई की कार्यशैली पर चिंता

बदनाम हो चुकी, सीबीआई अब अपनी छवि सुधारने की कोशिश में लग गई है. हाल ही में सीबीआई और राज्य भ्रष्टाचार निरोधी ब्यूरो का द्विवार्षिक सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें सीबीआई प्रमुख अश्विनी कुमार ने यह घोषणा की कि आने वाले समय में सीबीआई सभी जांचों को एक साल के भीतर ही पूरा कर लेगी. यहां तक कि सम्मेलन को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने मौजूद अधिकारियों से आह्वान किया कि आक्रामक तरीक़े से उन्हें बड़ी मछलियों को पकड़ना चाहिए.

मनमोहन सिंह ने सीबीआई से जुड़े सारे मामले को तेज़ी से निपटाने के लिए पूरे देश में 71 नए सीबीआई न्यायालयों के गठन की घोषणा की. प्रधानमंत्री की बात से सहमति जताते हुए, कुमार ने कहा कि कमज़ोर आपराधिक न्याय पद्धति की वजह से ही सीबीआई द्वारा दायर 9000 मामले न्यायालयों में अभी भी लंबित हैं. हालांकि, बाबू लोगों की मानें तो, एजेंसी के नए संकल्प की असली परीक्षा तो तब होगी जब कुमार और उनके गुप्तचर अपनी इस बड़ी योजना को लागू करना शुरू करेंगे.

सीआईसी का महत्वपूर्ण फ़ैसला

आख़िरकार, मुख्य सूचना आयुक्त (सीआईसी) ने जवाबदेही अगले स्तर पर तय करने का फ़ैसला ले ही लिया. मुख्य सूचना आयुक्त वजाहत हबीबुल्लाह ने सूचना आयुक्तों के ख़िलाफ़ दर्ज़ किए गए मामलों की जानकारी लोगों को हासिल करने की मंजूरी दे दी है.

हबीबुल्लाह का यह फ़ैसला एक सूचना आयुक्त के विरूद्ध दर्ज़ आरटीआई मामले के लंबित पड़े मामले के संदर्भ में आया है. यह सारा मामला आरटीआई कार्यकर्ता ए एन तिवारी की जीत के तौर पर देखा जा रहा है, जो काफी अर्से से एक सूचना आयुक्त के ख़िलाफ़ दर्ज़ किए गए मामले और उस पर की गई कार्रवाई की जानकारी की सूचना मांग रहे थे. जबकि आयोग अभी तक ऐसी किसी भी तरह की सूचना मुहैया कराने से इंकार कर रहा था. हालांकि, हबीबुल्लाह ने बताया कि सीआईसी के पास आयुक्तों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने का कोई अधिकार नहीं है. फिर भी, सरकारी संस्थानों में पारदर्शिता और जवाबदेही तय करने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है.

साउथ ब्लॉक

अंज़ुम ए ज़ैदी

महाजन चले कोयला मंत्रालय

बिहार काडर के 1987 बैच के आईएएस अधिकारी आर के महाजन की नियुक्ति कोयला मंत्रालय में संयुक्त सचिव के तौर पर हुई है. इससे पहले वह रेल मंत्री लालू प्रसाद के पीएस थे. महाजन राजीव शर्मा के स्थान पर आए हैं. राजीव शर्मा राजस्थान काडर के 1976 बैच के आईएएस अधिकारी हैं.

अग्निहोत्री बने संयुक्त महानिदेशक

सतीश बलराम अग्निहोत्री उड़ीसा काडर के 1980 बैच के आईएएस अधिकारी हैं, जो कैबिनेट सचिवालय में संयुक्त सचिव का कार्यभार संभाल रहे थे. अब उनकी नियुक्ति शिपिंग मंत्रालय में संयुक्त महानिदेशक (जो मुंबई शिपिंग महानिदेशक के संयुक्त सचिव के समकक्ष है) के तौर पर हुई है.

बनर्जी जनजातीय मामलों के निदेशक!

विश्वजीत बनर्जी उत्तर प्रदेश काडर के बैच 1981 के आईएफएस अधिकारी हैं. वह जनजातीय मामलों के मंत्रालय में निदेशक के तौर पर कार्यभार ग्रहण कर सकते हैं. वह अनुराग वाजपेयी का स्थान लेंगे. वाजपेयी मध्यप्रदेश काडर के 1984 बैच के आईएफएस अधिकारी हैं. हाल ही में उन्होंने अपना कार्यकाल पूरा किया है.

आडवाणी बड़े या भागवत

पृष्ठ 1 का शेष

प्रधानमंत्री बने. लेकिन उसकी भूमिका तो भाऊ देवरस ने ही रखी थी.

सन 94 तक बाला साहब देवरस संघ प्रमुख रहे और भाजपा को लगा कि वह दिल्ली की सत्ता प्राप्त कर सकती है. उनके बाद 94 से 2000 तक रज्जू भइया संघ प्रमुख रहे. रज्जू भइया के समय में मंदिर बनाओ आंदोलन चला, क्योंकि देवरस जी के समय में ही बाबरी मस्जिद शहीद हो गई थी. अटल जी प्रधानमंत्री बने, सरकार नहीं चल पाई. सदन में गिर गई, फिर चुनाव हुए, भाजपा के नेतृत्व में पुनः सरकार बनी. अटल जी प्रधानमंत्री बने और वर्ष 2000 में रज्जू भइया ने अपनी बीमारी के कारण के.सी.सुदर्शन को संघ प्रमुख नामित कर दिया. यह पहली बार हुआ.

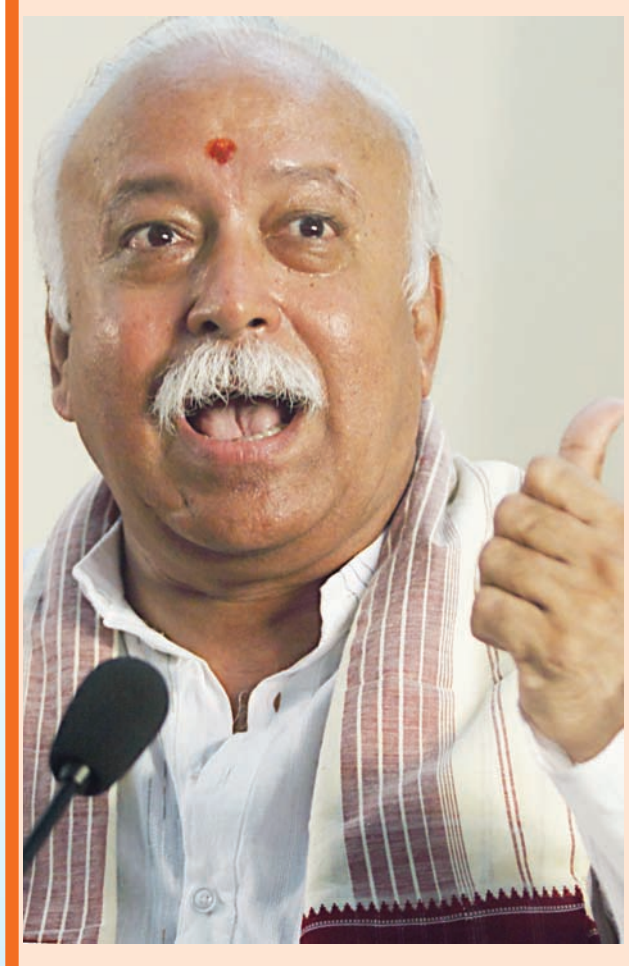

यहां से संघ के चरित्र में बदलाव शुरू हुआ. रज्जू भइया आख़िरी प्रमुख थे. जो भाजपा नेताओं में वरिष्ठ थे. सुदर्शन जी अनुभव, उम्र, काम सब में अटली जी से तो कनिष्ठ थे ही, आडवाणी जी से भी कनिष्ठ थे. अटल जी संघ के लोगों से बातें तो करते थे. पर फ़ैसले अपने मन से लेते थे. उन्होंने कभी संघ की राय सरकार चलाने में नहीं मानी और इसमें उन्हें आडवाणी जी का समर्थन मिला. जिसे भी भाजपा से संपर्क का काम संघ ने सौंपा वह ज़्यादा असरदार नहीं रहा. संघ के कुछ नेताओं को लगता था कि भाजपा ग़लतियां कर रही है, उन्होंने इसकी आवाज़ भी उठाई पर संघ प्रमुख ने इसे अनसुना कर दिया.

सन 2000 से 2009 तक सुदर्शन संघ प्रमुख रहे. भाजपा चुनाव हारी और मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री बने. संघ में कई बार चिंतित नेताओं ने सवाल उठाए कि भाजपा में बुराइयां आ गई हैं, नेता कांग्रेस के नेताओं की तरह व्यवहार कर रहे हैं, इस पर हस्तक्षेप करना चाहिए पर, यह हुआ नहीं. क्योंकि संघ नेताओं को लगता था कि उन्हें राजनीति की समझ नहीं है और वे यदि हस्तक्षेप करेंगे तो कहीं भाजपा की राजनैतिक गति रोकने का इल्ज़ाम उन पर न लग जाए. संघ के वरिष्ठ नेता सेफ गेम खेल रहे थे. भाजपा के अध्यक्षों के बारे में जानना भी दिलचस्प होगा. 80 से 86 तक अटल बिहारी वाजपेयी भाजपा के अध्यक्ष थे. सन 86 से 91 तक आडवाणी जी अध्यक्ष थे और इसी समय राजीव गांधी के ख़िलाफ़ आंदोलन चला और वी पी सिंह की सरकार बनी भी, सरकार गिरी भी. सन 91 से 93 तक मुरली मनोहर जोशी भाजपा अध्यक्ष बने जब बाबरी मस्जिद शहीद हुई. जोशी दोबारा नहीं चुने जा सके क्योंकि भाजपा पर अटल जी और आडवाणी जी का क़ब्ज़ा था. संघ ने काफी हस्तक्षेप करने की कोशिश की, पर जोशी जी ने संघ की बात पार्टी चलाने में नहीं मानी. दरअसल उन दिनों संघ आडवाणी जी की सोच को अपना राजनैतिक सोच बना चुका था. जोशी के बाद फिर आडवाणी भाजपा अध्यक्ष बनें और उन्हें संघ का पूरा समर्थन मिला. 98 से 2000 तक कुशाभाऊ अध्यक्ष रहे. कुशाभाऊ ने न कोई फ़ैसला लिया और जैसे अटल जी या आडवाणी जी पार्टी को चलाना चाहते थे, चलाने दिया. 2000 से 2001 तक बंगारू लक्ष्मण अध्यक्ष रहे और उनका मशहूर नोट कांड हुआ. बाद में जना कृष्णमूर्ति अध्यक्ष बने तथा वह भी केवल एक साल अध्यक्ष रहे. जना कृष्णमूर्ति को अध्यक्ष बनाने तथा बाद में वैंकैय्या नायडू को अध्यक्ष बनाने के पीछे कारण था कि भाजपा को दक्षिण में बढ़ाना है. दो साल का वैंकैय्या का कार्यकाल न संघ को पसंद आया और न आडवाणी को. इस समय तक अटल जी को भाजपा नेपथ्य में फेंक चुकी थी. दो हज़ार चार से दो हज़ार छह तक आडवाणी फिर अध्यक्ष बन गए लेकिन जिन्ना की समाधि पर उन्हें धर्मनिरपेक्ष बनाने पर उन्हें त्याग पत्र देना पड़ा. आडवाणी भाजपा में सबसे लंबे समय तक अध्यक्ष रहने वाले व्यक्ति हैं और उन्हें भारत के संभावित प्रधानमंत्री के तौर पर आम चुनाव लड़ने और हार जाने का गौरव भी मिल चुका है. दो हज़ार छह से दो हज़ार नौ तक राजनाथ सिंह अध्यक्ष हैं.

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

इस लंबे समय में आख़िर संघ क्यों भाजपा को राजनैतिक रूप से कमज़ोर होते देखता रहा, यह सवाल है. और इसका जवाब भी एक ही है कि जो तर्क आठ साल पहले दिया गया था संघ नेताओं द्वारा कि वे राजनीति नहीं समझते, आडवाणी जी ज़्यादा समझदार और सक्षम हैं, वही तर्क आज भी दिया जा रहा है.

संघ के नेता चाहे सुदर्शन जी रहे हों या अब नए संघ प्रमुख मोहन भागवत. ये सब आडवाणी जी से ख़ौफ खाते हैं. आडवाणी जी के नेतृत्व में भाजपा की हार के बाद भागलपुर और पटना गए संघ प्रमुख मोहन भागवत ने संघ के तीन नेताओं को आडवाणी जी से मिलकर त्यागपत्र देने का संदेश देने भेजा. तीनों नेता आडवाणी जी से मिले, लेकिन त्यागपत्र देने का मोहन भागवत का संदेश नहीं दिया. मोहन भागवत ने भागलपुर और पटना में यह बात ख़ुद उनसे मिलने गए लोगों से कही.

बीस दिन पहले मध्यप्रदेश में गुप्त रूप से संघ के सभी नेता, सुदर्शन, जोशी, भागवत सहित बैठे. इनके बीच तीन सवाल थे, 1. भाजपा को अनदेखा कर दें, 2. भाजपा को सुधारें या 3. एक नया संगठन बनाएं. बातचीत का नतीजा निकला कि तीनों काम नहीं हो सकते. इसलिए भाजपा के लोगों से ही अपील करो कि वे ख़ुद अपने को सुधारें और सार्वजनिक बयान से बचें. ऐसा ही फ़ैसला कई बार सुदर्शन जी के संघ प्रमुख रहते लिया गया. किसी की हिम्मत ही नहीं होती थी कि आडवाणी जी से कोई कुछ कहे. आडवाणी चाहते हैं कि भाजपा संघ के दबाव से मुक्त हो जाए. लेकिन वे इसे हमेशा दबी ज़ुबान से ही कहते रहे. समय से न कहने का परिणाम सामने आ रहा है कि अब उनके कुछ कहने का मतलब ही नहीं रहा गया है.

एक वक़्त था जब संघ की इज़्ज़त उसके विरोधी भी करते थे. हिंदू संस्कृति में विश्वास रखने वाले अपने बच्चों को शाखा में भेजते थे. बच्चे बड़े होकर विद्यार्थी परिषद और बाद में पार्टी में जाते थे. पर यह परिपाटी कमज़ोर हो रही है. संघ में घुन लग गया है. सत्ता दो बार मिली केंद्र में, राज्यों में भी मिली और इसने संघ को सत्ता की बीमारियों के बीच फंसा दिया. मोहन भागवत कोशिश कर रहे हैं कि वे संघ को पुनः नियंता की स्थिति में लाएं पर अब यह उनके बस में ही नहीं रह गया है. संघ की मध्यप्रदेश की गुप्त बैठक में एक नतीजा यह भी निकला कि भाजपा में बाहरी तत्व इतने ज़्यादा हो गए हैं कि भाजपा का बिगड़ना स्वाभाविक है. बाहरी तत्व से मतलब जो संघ से न संबंधित हों, केवल राजनीति से संबंधित हों.

ऐसे लोगों में सुषमा स्वराज, यशवंत सिंहा, अरुण शौरी, मेनका गांधी प्रमुख हैं. जसवंत सिंह निकाल ही दिए गए हैं. खंडूरी और मेनका गांधी अपना स्वर तीखा कर चुके हैं. भाजपा से जुड़े लोगों में, वसुंधरा राजे अलग रास्ते की तलाश में हैं.

आडवाणी क्या सत्ता की सुविधा के प्रेम में त्यागपत्र नहीं दे रहे या फिर उनका भाजपा को इस हालत में छोड़ना कर्तव्य से भागना लग रहा है. आडवाणी भाजपा के उत्थान और पतन दोनों के ज़िम्मेदार हैं. अगर वे लोकसभा के चुनावों के साथ ही त्यागपत्र दे देते तो आज वे सबसे इज़्ज़त वाले नेता माने जाते तथा भाजपा और संघ उन्हें हाथ जोड़ कर वापस बुलाते. लेकिन आडवाणी उस अवसर को चूक गए. मनोनीत या संभावित प्रधानमंत्री के प्रचार के दौर में उनके दाएं–बाएं, उनकी पुत्री प्रतिभा व पुत्र जयंत का बैठना भी भाजपा में इशारा कर गया कि यहां भी परिवारवाद की संभावना है. जसवंत सिंह के मसले पर आडवाणी का चुप रहना बताता है कि वह उस समय नहीं बोलते जब उन्हें बोलना चाहिए. लेकिन सब कुछ के बाद भी आडवाणी का कद आज भी मोहन भागवत या संघ के किसी भी नेता से बड़ा है. यही संघ और भाजपा की सबसे बड़ी मुश्किल भी है और सबसे बड़ी संभावना भी.

editor.chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 26, 7 सितंबर–13 सितंबर 2009

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के – 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के –2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनर्प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

जिन्ना, एक बेचैन आत्मा

भारतीय राजनीति के केंद्र में अभी एक पाकिस्तानी है. वह नायक था या नहीं, यह बात दीगर, लेकिन इतिहास में उसे खलनायक के तौर पर ही दिखाया गया है. जी हां, क़ायद-ए-आज़म, मुहम्मद अली जिन्ना ने भारतीय राजनीति में उथल-पुथल ला दी है. इतनी कि, यहां का मुख्य विपक्षी दल ही ताश के महल की तरह अपने अंतर्विरोधों के बोझ तले ढहा जा रहा है. आख़िर कौन थे जिन्ना? क्या थी परदे के पीछे की उनकी हक़ीक़त. ले रहे हैं जायजा, प्रख्यात पत्रकार, एम जे अकबर.खोलेंगे हम जिन्ना के व्यक्तित्व को परत-दर-परत, पढ़िए दो किस्तों में, क़ायद-ए-आज़म का सच.

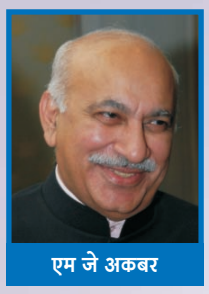

एम जे अकबर

मुहम्मद अली जिन्ना– स्वभाव से अभिजात, रुचि से कैथोलिक, राजनीति में सांप्रदायिक और पाकिस्तान के राष्ट्रपिता– शायद किसी इस्लामिक राज्य के सबसे अप्रत्याशित पिता हो सकते थे. वह भारतीयों की उस पीढ़ी में सबसे अधिक अंग्रेजों में से थे, जिन्होंने अगस्त 1947 में आज़ादी की जंग जीती. कराची के संभ्रांत क्रिश्चियन मिशन हाई स्कूल में उनका बचपन गुज़रा. उसी समय उन्होंने अपना जन्मदिन 20 अक्तूबर से बदलकर क्रिसमस के दिन कर लिया था.

लिंकन इन में छात्रावस्था के दौरान उन्होंने अपना नाम जिन्नाभाई से बदलकर जिन्ना कर लिया था. 1930 से 1933 के दौरान उन्होंने ख़ुद को हैम्प्स्टीड में स्व–आरोपित निर्वासन में धकेल दिया था, ब्रिटिश पासपोर्ट रखने लगे थे, अपनी बहन फातिमा और बेटी दीना के साथ बाक़ायदा घर बना लिया था, अपनी बेंटले कार के लिए एक ब्रिटिश शॉफर (ब्रैडले) रखा था, दो कुत्ते (एक काला डॉबरमैन और एक उजला वेस्ट हाइलैंड टेरियर) रखे थे, ख़ुद को थिएटर में झोंक दिया था (उनकी दिली ख्वाहिश पेशेवर कलाकार बनने की थी, ताकि वह हैमलेट का मंचन कर सकें) और प्रिवी काउंसिल के सामने पेश हुए थे, ताकि वह उस अदा–ओ–अंदाज को जी सकें, जिसके वह आदी थे. वह सेविल रॉ के सूट पहनते थे, खांटी कड़क शर्ट और बेहद चमकदार चमड़े या स्वेड के जूते पहनते थे. पाकिस्तान के सरकारी दफ़्तरों में जिन्ना को इस्लामी पोशाक में दिखाया जाता है, लेकिन यह शायद कम लोग जानते हैं कि जिन्ना ने पहली बार शेरवानी और इस्लामी टोपी 15 अक्तूबर 1937 को मुस्लिम लीग के लखनऊ सत्र में पहनी थी. वह उस वक़्त 61 वर्षों के थे.

क़ायद–ए–आज़म या मुसलमानों के ख़ास नेता होने के बावजूद, वह बढ़िया मात्रा में अल्कोहल का सेवन करते थे और शर्मिंदा करने वाली हद तक इस्लामी रीति से प्रार्थना के तरीक़े से अपरिचित थे. वह अंग्रेजी को छोड़कर किसी भी भाषा में असुविधा महसूस करते थे और पाकिस्तान की अपनी मांग भी–1940 में लाहौर में–उन्होंने अंग्रेजी में ही रखी थी. भले ही श्रोता और दर्शक उनका मज़ाक उड़ा रहे थे, जो उनसे वही बात उर्दू में सुनना चाह रहे थे. जिन्ना की दलील गज़ब की थी. उनका कहना था कि चूंकि दुनिया भर के प्रेस के लोग यहां इकट्ठा हैं, तो वह किसी वैश्विक भाषा में ही बात करेंगे. उनके अंदर का चालाक वकील कभी भी सहमत करने वाले तर्कों से खाली नहीं होता था.

उन्होंने एक ख़ूबसूरत पारसी लड़की रुट्टी पेटिट से शादी की थी, जो एक धनी ग़ैर–मुस्लिम खानदान की थीं. उसे उनके मां–बाप ने धर्मेतर शादी करने के लिए परिवार से निकाल दिया था. रुट्टी अपने बालों में ताज़ा फूल लगाती थीं, रेशमी कपड़े पहनती थीं, बालों में हीरे, रूबी और एमेराल्ड के पिन–क्लिप लगाती थीं और हाथी दांत के पाइप में लगाकर अंग्रेजी सिगरेट फूंकती थीं. विवाह आख़िरकार टूट ही गया, लेकिन उससे एक बेटी दीना हुई, जो अपने पिता से प्यार तो करती थीं, लेकिन उनके बनाए मुल्क़ के बारे में काफी हिचक रखती थीं. दीना भारत में ही रहीं और शायद एकमात्र भारतीय रही होंगी, जिसने 14 अगस्त 1947 को अपनी बालकनी से पाकिस्तानी झंडा लहराया होगा.जिन्ना ने अपनी आत्मकथा के लेखक हेक्टर बोलिथो(जिन्ना, क्रिएटर ऑफ पाकिस्तान, जॉन मरे, 1954) को पुलिस के साथ अपने पहले विवाद की कहानी बताई, जो वुडहाउस के कहानी की तरह तीक्ष्ण थी– मैं दो दोस्तों के साथ था, और हम स्नातकों की भीड़ से घिरे थे. हमने गली में एक कार्ट देख लिया और तब तक एक–दूसरे को धक्का देते और शोर–शराबा करते रहे, जब तक हमें गिरफ़्तार कर पुलिस स्टेशन न ले जाया गया.

यह एकमात्र समय था, जब जिन्ना जेल गए थे. इसके उलट भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, जिन्होंने हाथ की बुनी खादी के लिए सैविल रो को अलविदा कह दिया था, ने 1920 से 1947 के बीच का आधा हिस्सा अलग–अलग जेलों में गुज़ारा था.

वर्ष 1920 स्वतंत्रता आंदोलन के लिए एक बुनियादी वर्ष था. इसी साल महात्मा गांधी ने आंदोलन का नेतृत्व स्वीकारा था, और असहयोग या ख़िलाफ़त आंदोलन की शुरुआत की थी. वह भी दो विरोधी धाराओं को एक साथ लाकर. ब्रिटिश साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ आम जनता के गुस्से और मुसलमानों के खलीफा–ऑटोमन साम्राज्य के सुल्तान–कि हार के ख़िलाफ़ मुसलमानों के आक्रोश को मिलाकर गांधी ने इस लड़ाई की शुरुआत की थी. जब गांधी ने उलेमाओं के साथ मिलकर क़ानून को चुनौती दी तो जिन्ना– कांग्रेस और मुस्लिम लीग के महत्वपूर्ण नेता– ने आपत्ति जताई. उन्होंने कांग्रेस के नागपुर सत्र का बहिष्कार किया और गांधी की नेतृत्व को स्वीकारने से मना कर दिया. जैसा कि जिन्ना ने कहा– देखो युवक. मुझे राजनीति के प्रति छदम–धार्मिक रवैये से कुछ लेना देना नहीं है, मैं कांग्रेस और गांधी से अलग रास्ता अख्तियार करता हूं. मैं भीड़ की मानसिकता को उकसाने में यक़ीन नहीं रखता.

वह युवक एक पत्रकार दुर्गादास था, बूढ़ा आदमी मोहम्मद अली जिन्ना थे. यह वाक्य दुर्गादास की बेजोड़ किताब– इंडिया फ्रॉम कर्ज़न टू नेहरू एंड ऑफटर– से लिया गया है. जिन्ना ने यह बात 1920 के नागपुर सत्र के बाद कही थी जहां गांधी का असहयोग आंदोलन प्रस्ताव लगभग ध्वनि मत से पारित हुआ था.

जिन्ना का फ़ैसला पूरी तरह उनके उदारवादी और सेकुलर रवैये के मुताबिक़ था.

एक अक्टूबर 1906 को 35 कुलीन धनी और ताक़तवर मुसलमानों ने भारत के वायसराय मिंटों से मुलाक़ात की थी. जो कर्ज़न के उत्तराधिकारी थे. उनका नेतृत्व आगा ख़ान ने किया था. और पहली बार ऐसे मुहावरे का इस्तेमाल किया था जिसने पूरी 20वीं शताब्दी में अपनी धमक बनाई रखी. वह मुहावरा था भारतीय मुसलमानों के राष्ट्रीय हितों का वे एक असहिष्णु हिंदू बहुमत के ख़िलाफ़ सहायता चाहते थे. उन्होंने बड़ी विनम्रता से नौकरियों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व और काउंसिल, नगर–निगमों, यूनिवर्सिटी सिंडिकेट और हाई कोर्ट की बेंचों में अलग सीटों की मांग की. लॉर्ड मिंटों ने बाख़ुशी यह मांगें स्वीकार ली. उसी साल ढाका में दिसंबर महीने में मुस्लिम लीग की पैदाइश हुई, जिसकी सदारत नवाब सलीमुल्लाह ख़ान ने की, जो बीमार होने की वजह से उन 35 नेताओं के साथ अक्टूबर में नहीं रह सके थे. आगा ख़ान मुस्लिम लीग के पहले अध्यक्ष थे.

आगा ख़ान ने बाद में लिखा कि यह सचमुच हैरतनाक है कि लॉर्ड मिंटो ने इस काउंसिल से रबर स्टांप की तरह की उम्मीदें लगा रखीं थी. जिन्ना के पहले ही भाषण ने इस धारणा को तार–तार कर रख दिया. वह एक दूसरे गुजराती–मोहनदास करमचंद गांधी– को बचाने के लिए खड़े हुए, जो सात समंदर पार अपने लोगों के लिए काम कर रहा था. जिन्ना ने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के साथ किए जा रहे अपमानजनक व्यवहार पर घोर निराशा और क्षोभ व्यक्त किया. मिंटो ने जिन्ना द्वारा इस्तेमाल किए जा रहे मुहावरे–क्रूर व्यवहार– पर आपत्ति की. जिन्ना ने तपाक से जवाब दिया–जहांपनाह. मुझे तो इससे भी कड़े शब्दों की तलाश है.

सात मार्च 1911 को जिन्ना ने वह मसौदा पेश किया, जो ब्रिटिश भारत के इतिहास में पहला ग़ैर–अधिकारी क़ानून बन गया. वह वक़्फ वैलिडेटिंग बिल था, जिसने वक़्फ को मिले उपहारों पर 1894 के फ़ैसले को पलट दिया था. पूरे भारतीय मुसलमान इस फ़ैसले से बेहद ख़ुश और जिन्ना के आभारी थे.

जिन्ना ने लीग की पहली बैठक 1912 में बांकीपुर में शिरकत की थी. वह उस समय हालांकि इसके मेंबर नहीं बने. वह बांकीपुर में कांग्रेस के सत्र में शिरकत करने को गए थे. जब वह कुछ महीनों बाद लखनऊ में लीग के विशेष अतिथि बनकर गए थे, (वह कोई वार्षिक सत्र नहीं था) तो सरोजिनी नायडू भी उसी मंच पर उनके साथ थीं. वह कड़वाहट तब मौजूद नहीं थी, जिसने भारत का बंटवारा कर दिया. डॉक्टर एम ए अंसारी, मौलाना आज़ाद और हकीम अज़मल ख़ान ने लीग के 1914 के सत्र में शिरकत की थी. 1915 में तो लीग के खेमे में कई सारे चौंकाने वाले अतिथि थे– मदनमोहन मालवीय, सुरेंद्रनाथ बनर्जी, एनी बीसेंट, बी जी हॉर्नमैन, सरोजिनी नायडू और महात्मा गांधी. जब जिन्ना ने 1913 में लीग की सदस्याता ली, तो उन्होंने एक शर्त भी खांटी अंग्रेजी में रखी.

वह शर्त थी कि मुस्लिम लीग और मुस्लिम समाज के हितों के प्रति उनकी वफादारी किसी भी तरह और किसी भी समय व्यापक राष्ट्रीय हितों के बरक्स नहीं खड़ी होगी. (जिन्ना, हिज स्पीचेज एंड राइटिंग्स, एडिटेड बाइ सरोजिनी नायडू, 1912–1917). गोखले ने उसी साल जिन्ना को एक मुहावरे से अभिभूषित किया था.

उन्होंने जिन्ना को हिंदू–मुस्लिन एकता का राजदूत कहा था. गोखले ने कहा था– हरेक तरह की फ़िरकापरस्त राजनीति से मुक्ति ही उनको (जिन्ना को) हिंदू–मुस्लिम एकता का राजदूत बनाती है. 1914 के बसंत में, जिन्ना ने लंदन में एक कांग्रेसी प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व किया था, ताकि काउंसिल ऑफ इंडिया बिल पर चर्चा की जा सके.

जब 1915 में गांधी भारत आए, तो जिन्ना ने गुजरात सोसायटी के अध्यक्ष के तौर पर (भारत और पाकिस्तान, दोनों के ही महात्मा गुजराती थे) एक गार्डन पार्टी में भाषण देकर दक्षिण अफ्रीका के नायक का स्वागत किया. कांग्रेस और लीग के सत्र के दौरान– जो मुंबई में एक ही समय हो रहे थे– उन्होंने कांग्रेस अध्यक्ष सत्येंद्र सिन्हा और मजहरुल हक़ के साथ (एक ऐसे कांग्रेसी, जिन्होंने उस साल मुस्लिम लीग के सत्र की सदारत की थी) अनथक मेहनत की, ताकि कुछ संयुक्त प्रस्तावों पर काम किया जा सके. हक़ और जिन्ना को लीग के सत्र के दौरान मुल्लाओं ने इतना परेशान किया कि उस सत्र को ही स्थगित कर देना पड़ा. इसको अगले दिन अपेक्षाकृत सुरक्षित जगह ताजमहल होटल में आयोजित करना पड़ा. अगले साल ही जिन्ना पहली बार लखनऊ में मुस्लिम लीग के सदर बने.

(शेष अगले अंक में)

क़ायद-ए-आज़म या मुसलमानों के ख़ास नेता होने के बावजूद, वह बढ़िया मात्रा में अल्कोहल का सेवन करते थे और शर्मिंदा करने वाली हद तक इस्लामी रीति से प्रार्थना के तरीक़े से अपरिचित थे. वह अंग्रेजी को छोड़कर किसी भी भाषा में असुविधा महसूस करते थे और पाकिस्तान की अपनी मांग भी-1940 में लाहौर में-उन्होंने अंग्रेजी में ही रखी थी. भले ही श्रोता और दर्शक उनका मज़ाक उड़ा रहे थे, जो उनसे वही बात उर्दू में सुनना चाह रहे थे. जिन्ना की दलील गज़ब की थी. उनका कहना था कि चूंकि दुनिया भर के प्रेस के लोग यहां इकट्ठा हैं, तो वह किसी वैश्विक भाषा में ही बात करेंगे. उनके अंदर का चालाक वकील कभी भी सहमत करने वाले तर्कों से खाली नहीं होता था.

विडंबना है कि 1906 में हमारा सबसे कट्टर विरोधी जिन्ना था, जो मेरे और दोस्तों के किए हुए हरेक काम के तीखे विरोध में खड़ा था. वह एकमात्र मशहूर मुसलमान थे, जिन्होंने यह रवैया अख्तियार किया. जिन्ना ने कहा था कि अलग निर्वाचन क्षेत्रों की मांग दरअसल देश को बांटने वाली है.

ठीक जिस दिन, ढाका में मुस्लिम लीग बनी, जिन्ना नज़दीक कलकत्ता में ही लगभग 44 दूसरे मुसलमानों और लगभग 1,500 हिंदुओं, ईसाइयों और पारसियों के साथ थे. वह दादाभाई नौरोजी के सचिव के तौर पर काम कर रहे थे. दादाभाई बीमार होने की वजह से अपना भाषण नहीं देने की हालत में थे, जिसका काफी हिस्सा जिन्ना ने तैयार किया था और जिसे गोपाल कृष्ण गोखले ने पढ़ा था.

सरोजिनी नायडू पहली बार 30 वर्ष के जिन्ना से मिली थीं और वह उनको जाग्रत देशभक्ति के प्रतीक के तौर पर याद रखती थीं. उनका दिया हुआ जिन्ना का वर्णन बेहद सटीक है–लंबे और संभ्रांत,बेहद पतले, आदतन विलासी और असाधारण रूप से साहसी और कठिन. कुछ औपचारिक और तेज़–तर्रार, कुछ हद तक अलग और अकेले, जिन्ना काफी हद तक अपने में सिमटे व्यक्ति थे, लेकिन उनको जानने वाले जानते हैं कि वे अंदर से एक बच्चे की तरह के मानवतावादी थे, उनमें किसी औरत का ही पूर्वाभास था और उनका हास्यबोध आले दर्जे का था. जिन्ना ने कलकत्ता में सेंट्रल लेजिस्लेटिव काउंसिल (तब ब्रिटिश साम्राज्य की राजधानी) में 25 जनवरी 1910 को गए. वह गोखले, सुरेंद्रनाथ बनर्जी और मोतीलाल नेहरू के साथ गए

feedback@chauthiduniya.com

क्या नीतीश ख़तरे में है?

रूबी अरुण

नीतीश कुमार के सामने क्या विधानसभा चुनावों में परेशानी खड़ी होने वाली है? वजह, बस यह कि नीतीश सबको ख़ुश रखने में नाकाम दिख रहे हैं. उनके सामने अधिकांश जदयू सांसदों ने अपनी जिन इच्छाओं का इज़हार किया है, उन्हें पूरा करना उनके बस की बात तो नहीं ही है.

हालात इस क़दर बिगड़ चुके हैं कि सांसदों का एक बड़ा धड़ा पार्टी तोड़ने तक पर आमादा है. बैठकों का दौर जारी है. विक्षुब्ध सांसदों को एकजुट कर जदयू छोड़ किसी और पार्टी में शामिल होने की मंत्रणा की जा रही है. सबसे सशक्त विकल्प है–कांग्रेस पार्टी. इसके पीछे सोच यह है कि नीतीश कुमार को तो सबक सिखाया ही जा सके, साथ ही केंद्र में मंत्री बनने की कुछ बुज़ुर्ग नेताओं की चिर इच्छा भी पूरी हो सके. ऐसा नहीं है कि नीतीश कुमार को पार्टी के सांसदों के इस खेल का नहीं पता.

नीतीश हालात को बदलने की कोशिश में भी हैं. उन्हें लंबे अरसे से इस बात का इल्म है कि प्रदेश अध्यक्ष ललन सिंह की कार्यप्रणाली से न सिर्फ़ बिहार जदयू के नेता बल्कि सरकार में सहयोगी भारतीय जनता पार्टी के नेता भी ख़फ़ा हैं. ललन सिंह को हटाने की मांग भी वक़्त–वक़्त पर उठी, पर नीतीश ने इस मांग पर कान देने की ज़हमत नहीं उठाई. आज जब उन्हें लग रहा है कि पार्टी टूट जाएगी, तब वे इस ओर ग़ौर फ़रमा रहे हैं. इसीलिए अब बिहार में प्रदेश अध्यक्ष का चुनाव भी होने जा रहा है. यह बिहार विधानसभा के उपचुनाव के बाद होगा. पर अब बात इतने से नहीं संभलने वाली. नाराज़ सांसदों ने जद यू का बंटाधार करने का मन बना लिया है.

बिहार में जद यू के 20 सांसद हैं. नीतीश का साथ छोड़ कांग्रेस का हाथ पकड़ने के लिए बाग़ी सांसदों की संख्या 12 होनी चाहिए. चौथी दुनिया को मिले सबूत इस ख़बर को पुख्ता करते हैं कि बाग़ी सांसदों की संख्या 12 से ज़्यादा है. ये वे सांसद हैं जिनकी मुराद नीतीश ने पूरी नहीं की. ये सांसद चाहते थे कि बिहार विधानसभा उपचुनाव में नीतीश उनके भाई और बेटों को उन विधानसभा क्षेत्रों से टिकट दें जिन्हें छोड़ कर वे सांसद बने हैं. हालांकि, नीतीश ने उनकी एक न सुनी और सांसदों ने ठान लिया कि नीतीश कुमार को सबक सिखाना है.

गोपालगंज़ सुरक्षित सीट से सांसद बने पूर्णमासी राम चाहते थे कि उनके पूर्व विधानसभा क्षेत्र बेतिया से उनके बेटे विजय राम को नीतीश उम्मीदवार बनाएं. नीतीश ने उन्हें टिकट तो नहीं ही दिया, ऊपर से यह कहते हुए खरी–खोटी सुना दी कि पूर्णमासी राम सामंती विचारधारा के हैं. पूर्णमासी ने राजीव रंजन सिंह उर्फ ललन सिंह को लेकर नीतीश पर ये कहते हुए धावा बोल दिया कि सबसे बड़े सामंती तो नीतीश हैं, तभी उन्होंने ललन सिंह को जदयू नेताओं के विरोध के बावज़ूद प्रदेश अध्यक्ष पद पर बना रखा है. पार्टी नेताओं के साथ वे तानाशाह की तरह पेश आ रहे हैं. उन्हें जनतांत्रिक तरीक़े से पार्टी चलाना नहीं आता. वैसे भी पूर्णमासी अपने गुस्से के लिए कुख्यात रहे हैं. राजद सरकार में मंत्री रहते हुए भी तत्कालीन मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव से वे अक्सर ज़ुबानी ज़ोर आज़माइश कर बैठते थे.

बहरहाल, पूर्णमासी राम नीतीश की बातों से इतना ताव खा गए कि उन्होंने नीतीश के ख़िलाफ़ खुली बग़ावत कर दी . पूर्णमासी राम ने राजद अध्यक्ष लालू प्रसाद से अपने बेटे विजय राम के लिए बेतिया से टिकट मांगा. नीतीश को कमज़ोर करने का मौक़ा लालू कैसे गंवाते. उन्होंने विजय राम को बेतिया से राजद उम्मीदवार बना दिया.

मुज़फ्फरपुर से जद यू सांसद कैप्टन जयनारायण निषाद भी नीतीश के ख़िलाफ़ भरे बैठे हैं. नीतीश कुमार ने उनके कहने के बावज़ूद उनके एक भी आदमी को विधानसभा के उपचुनाव में टिकट नहीं दिया. यहां तक कि उनके बेटे का भी पत्ता काट दिया. अलबत्ता राजद से कांग्रेस में और फिर जदयू में शामिल हुए दलित नेता रमई राम को बोचहा और रमई राम के करीबी रामसूरत राम को औराई से टिकट दे दिया. इससे नाराज़ जयनारायण निषाद अब हर जगह ढिंढोरा पीटते चल रहे हैं कि नीतीश अपने सांसदों के साथ दोयम दर्ज़े का बर्ताव करते हैं. सांसद, नीतीश के गुलाम नहीं हैं कि जो नीतीश की मर्ज़ी हो उसके सामने अपना सर झुका दें. मुज़फ्फरपुर उनका क्षेत्र था फिर भी नीतीश कुमार ने एक बार भी उनसे राय नहीं ली. अब वे दोनों ही जगहों से जदयू के उम्मीदवार को हरवाने का काम करेंगे.

सीतामढ़ी से जदयू के टिकट पर सांसद बनने वाले अर्जुन राय ने भी नीतीश के ख़िलाफ़ खम ठोक लिया है. अर्जुन राय पहले औराई से विधायक थे और नीतीश सरकार में सूचना मंत्री का पद संभाल रहे थे. उनकी ख्वाहिश थी कि नीतीश कुमार उपचुनाव में उनकी पत्नी पूनम मिश्रा को जदयू का टिकट दें. पर नीतीश ने उनकी मांग यह कहते हुए खारिज़ कर दी कि उनके रहते पत्नीवाद नहीं चलेगा. अर्जुन राय इस बात से बेहद अपमानित महसूस कर रहे हैं. हालांकि पूनम मिश्रा कहीं से चुनाव नहीं लड़ रही हैं, पर अर्जुन राय ने भी जदयू के उम्मीदवार को पटकनी दिलाने का मन बना लिया है.

खगड़िया से जदयू सांसद दिनेशचंद्र यादव का भी सपना था कि उनकी पत्नी जदयू के टिकट पर विधायक बनतीं. वह अपनी पत्नी के लिए अपने पुराने विधानसभा क्षेत्र बख्तियारपुर से टिकट चाहते थे. नीतीश ने उनकी इस इच्छा पर पानी फेर दिया. अब दिनेशचंद्र यादव भी दूसरे बाग़ियों की तरह यही राग आलाप रहे हैं कि वह जदयू के उम्मीदवार को किसी भी हाल में जीतने नहीं देंगे. दिनेशचंद्र यादव, जदयू प्रत्याशी के विरोध में प्रचार भी कर रहे हैं. नीतीश कुमार को इस बात की पूरी ख़बर है पर वे चाह कर भी कुछ नहीं कर पा रहे हैं. उन्हें पता है कि अगर इस वक़्त उन्होंने कोई कार्रवाई की तो पार्टी पूरी तरह बिखर जाएगी.

जहानाबाद के जदयू सांसद जगदीश शर्मा की पत्नी घोषी से निर्दलीय चुनाव लड़ रही हैं. जगदीश शर्मा ने भी चाहा था कि नीतीश उनकी पत्नी को जद यू से उम्मीदवार बनाएं. पर ऐसा हुआ नहीं. अब जगदीश शर्मा न केवल बग़ावती मिजाज़ में हैं बल्कि नीतीश कुमार के निर्देशों की खुलेआम अवहेलना भी कर रहे हैं. आसार इस बात के हैं कि जगदीश शर्मा की पत्नी चुनाव जीत सकती हैं. क्योंकि घोषी विधानसभा क्षेत्र जगदीश शर्मा का बेहद पुराना कर्मक्षेत्र है और वहां उनका बड़ा ही प्रभाव है.

यही हाल जमुई से जद यू सांसद बुद्धदेव चौधरी का भी है. बुद्धदेव चौधरी चाहते थे कि उनके बेटे मनीष को टिकट मिले. पर नीतीश ने उनकी इस मांग को ठुकरा दिया. नीतीश ने उनके बेटे का पत्ता साफ कर बिहार विधानसभा अध्यक्ष उदयनारायण चौधरी के भाई को टिकट दे दिया. अब तक नीतीश का गुणगान करने वाले बुद्धदेव चौधरी अब नीतीश से खार खाए बैठे हैं.

झंझारपुर से जद यू सांसद मंगनीलाल मंडल की अलग कहानी है. मंगनीलाल मंडल के साथ सगे संबंधियों को टिकट नहीं देने का कोई मसला नहीं है. पर फिर भी वे नीतीश कुमार को खुलेआम अपशब्दों से नवाज़ते रहते हैं. अपने घर में लगे दरबार में अपने समर्थकों के सामने वे नीतीश के ख़िलाफ़ विष वमन कर बड़े ही ख़ुश होते हैं. राजद और कांग्रेस के नेता उनके दरबार में इसलिए हाज़िरी लगाते हैं ताकि उन्हें नीतीश की बखिया उधेड़ने का मौक़ा मिल सके.

मंगनीलाल मंडल को नीतीश के ख़िलाफ़ ख़ूब भड़काया जा सके. जदयू टूट कर बिखर जाए और विरोधियों का सपना साकार हो जाए. मंगनीलाल मंडल इसलिए नाराज़ हैं कि उनके संसदीय क्षेत्र के प्रशासनिक अधिकारी उनकी बातों पर कान नहीं देते. वे अपने मतदाताओं के किसी काम की पैरवी अगर ज़िले के एसपी–डीएसपी या डीएम–बीडीओ से करते हैं तो कोई उनकी नहीं सुनता. मंगनीलाल ने इस सिलसिले में कई बार नीतीश कुमार से बात भी की पर नीतीश हमेशा मुस्कुरा कर बात टाल जाते हैं. अब मंगनीलाल मंडल जैसे शख्स के लिए इतनी वज़ह काफ़ी है नीतीश के लिए विष वमन करने की.वैसे मंगनीलाल मंडल की गाली देने की आदत पुरानी रही है. वे जिसके साथ रहते है उसका हित कभी सोचते ही नहीं. उसी पर वार करना अपनी शान समझते हैं. उनका यही सच जान कर फ़िलहाल नीतीश ने भी चुप लगा रखी है.

उधर, लालू प्रसाद यादव के पुराने साथी और पाटलिपुत्र से जदयू सांसद रंजन यादव के तेवर भी नीतीश कुमार के लिए शुभ संकेत नहीं हैं. पिछले दिनों कई मसलों पर रंजन यादव की नीतीश कुमार से तनातनी हो चुकी है. लालू प्रसाद यादव के साथ होते हुए शिक्षा मंत्री के तौर पर रंजन यादव की जो धमक हुआ करती थी,उससे सभी वाक़िफ़ हैं.

रंजन चाहते हैं कि उनका वही जलवा नीतीश राज में भी बरकरार रहे. सूबे में, सरकार में उनकी धमक क़ायम रहे. राजकाज के मसलों पर नीतीश उनकी भी राय लें. बात सुनें. पर नीतीश तो नीतीश हैं. जब वे जद यू के राष्ट्रीय अध्यक्ष शरद यादव की नहीं सुनते तो भला रंजन यादव क्या चीज़ हैं. वैसे, रंजन यादव ने तो न लालू प्रसाद से वफ़ा की न ही बुरे वक़्त में सहारा देने वाले लोजपा सुप्रीमो रामविलास पासवान का भरोसा तोड़ने में देर लगाई. ज़ाहिर है, नीतीश के साथ भी उनका रवैया कमोबेश वैसा ही रहने वाला है. बाग़ी नेताओं और सांसदों के साथ इन दिनों रंजन यादव ख़ूब समय बिता रहे हैं. विचार–विमर्श का दौर तो चल ही रहा है,योजनाएं भी आकार ले रही हैं. वैसे भी रंजन यादव के शुभचिंतक और खुद रंजन यादव का भी मानना है कि अब तो उन्हें केंद्रीय मंत्री बन ही जाना चाहिए. जाहिर है, जदयू में रह कर फ़िलहाल यह हसीन सपना पूरा नहीं होगा. इसके लिए तो उन्हें पार्टी छोड़नी होगी . वह भी दूसरे 11 सांसदों के साथ.

चेनारी सासाराम के जद यू सांसद महाबली सिंह भी खुले तौर पर नीतीश के लिए अपनी नाराज़गी व्यक्त करते फिर रहे हैं. वे भी अपनी वंश बेल को राजनीति में फलता फूलता देखने की तमन्ना रखते हैं. लिहाज़ा उन्होंने भी नीतीश से अपनी पुरानी सीट काराकाट से अपने रिश्तेदार को खड़ा करने की पेशकश नीतीश के सामने कर दी. टिकट तो नहीं मिला. लोगों के सामने ही फटकार ज़रूर मिल गई.

हाजीपुर संसदीय सीट से लोजपा अध्यक्ष रामविलास पासवान जैसी राजनीतिक हस्ती को जदयू के टिकट पर हराकर सांसद बनने के बाद भी रामसुंदर दास को करार नहीं मिल रहा.

केन्द्र में मंत्री बनने की हसरत उन्हें पार्टी के बागियों के साथ मिलने–बैठने को विवश कर दे रही है. उनके समर्थकों ने उन्हें समझा दिया है कि पता नहीं अगली बार क्या हो. शायद आप हार जाएं. फिर उम्र भी तो हो चुकी है. इसके लिए पार्टी छोड़नी पड़े या तोड़नी पड़े यानी कुछ भी किया जाए तो ग़लत नहीं होगा. बाबूजी केंद्रीय मंत्री तो बन जाएंगे.लिहाज़ा जोड़–तोड़ जारी है.

और, अब बात बेगूसराय के सांसद मोनाज़िर हसन की. मोनाज़िर हसन ज़रा सदाशयी किस्म के सांसद हैं. उन्हें अपने घरवालों के लिए जद यू के टिकट की दरकार नहीं थी, बल्कि वह तो अपने पीए मुश्ताक अहमद को विधायक बनाना चाहते थे. मोनाज़िर को इस बात का बड़ा गुमान था कि नीतीश उनकी बात को अनसुना कर ही नहीं सकते. बड़ी ठसक के साथ मोनाज़िर नीतीश से बात करने पहुंचे. पर तब तक तो नीतीश ने मुंगेर विधानसभा क्षेत्र के प्रत्याशी का नाम तय भी कर लिया था. मोनाज़िर ठगे से रह गए. नीतीश से बहस मुसाहिबा भी हुआ. नतीज़े में टिकट तो नहीं पर फटकार ज़रूर मिली. मोनाज़िर हसन तिलमिलाए से घूम रहे हैं. अपने समर्थकों को कड़ी हिदायत दे रहे हैं कि किसी भी क़ीमत पर जद यू का प्रत्याशी नहीं जीतना चाहिए.

बहरहाल, जो खिचड़ी बिहार जद यू में पक रही है उसके बीच अगर जद यू के राष्ट्रीय अध्यक्ष का जिक्र न हो तो बात अधूरी रह जाएगी. जितने भी नाराज़ सांसद हैं, उनमें से ज़्यादातर शरद यादव के खास हैं. खास बात यह भी कि इन लोगों से कुछ ने पहले भी केंद्र में मंत्री बनने की खातिर राजद को तोड़ने का काम किया है.

कुर्सी के लिए एक पार्टी छोड़ कर दूसरी पार्टी का दामन कैसे पकड़ा जाए ,इसमें महारत हासिल है. ख़ैर, सांसदों के बीच सत्ता का जो खेल चल रहा है उससे शरद यादव वाक़िफ़ भी हैं. पर उन्होंने खामोशी अख्तियार कर रखी है. शायद वह तेल और तेल की धार देख रहे हैं. समय की रफ़्तार और उसका रुख़ भांप रहे हैं. वाजिब भी है. राजनीति तो है ही संभावनाओं का खेल. तय दिख रही चीज़ें, ग़लत साबित हो जाती हैं और आकलन झूठे पड़ जाते हैं. हां, फिलहाल नीतीश कुमार अपनों से ही घिरे ज़रूर दिख रहे हैं.

ruby@chauthiduniya.com

मंगनी लाल मंडल

रामसुंदर दास

शरद यादव

राजीव रंजन सिंह

पूर्णमासी राम

रंजन यादव

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

मुज़फ्फरपुर से जदयू सांसद कैप्टन जयनारायण निषाद भी नीतीश के ख़िलाफ़ भरे बैठे हैं. नीतीश कुमार ने उनके कहने के बावज़ूद उनके एक भी आदमी को विधानसभा के उपचुनाव में टिकट नहीं दिया. यहां तक कि उनके बेटे का भी पत्ता काट दिया. अलबत्ता राजद से कांग्रेस में और फिर जदयू में शामिल हुए दलित नेता रमई राम को बोचहा और रमई राम के करीबी रामसूरत राम को औराई से टिकट दे दिया. इससे नाराज़ जयनारायण निषाद अब हर जगह ढिंढोरा पीटते चल रहे हैं कि नीतीश अपने सांसदों के साथ दोयम दर्ज़े का बर्ताव करते हैं.

प्रधानमंत्री जी, सौ दिन का एजेंडा कहां है?

मनीष कुमार

मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली सरकार के 100 दिन पूरे हो गए. सरकार सौ दिन के एजेंडे को पूरा करने में विफल रही. सरकार असफल रही, तो विपक्ष भी अपने ही उलझनों में उलझी रही. मुख्य विपक्षी दल सरकार से यह पूछना भूल गया कि राष्ट्रपति के अभिभाषण के ज़रिए सरकार ने जो वादे किए थे, वे कहां है. प्रधानमंत्री ने दूसरी पारी की शुरुआत किसी धुआंधार बल्लेबाज की तरह की थी. सरकार ने टारगेट और टाइम तय करके काम करने की पेशकश की थी. ऐसा लगा था कि इस बार की यूपीए सरकार पिछली बार की तरह ढीली-ढाली नहीं होगी. मनमोहन सिंह इस बार अपनी छवि के मुताबिक काम करेंगे, इसलिए जनता ने पहले से ज्यादा मज़बूत बना कर कांग्रेस के हाथ में देश की कमान दी थी. 100 दिन के एजेंडे का ऐलान करने के लिये सरकार के अलग-अलग मंत्रालयों ने ताबड़तोड़ प्रेस कांफ्रेंस किए. वादों और घोषणाओं की झड़ी लग गई. ऐसा लगने लगा था कि मंहगाई पर लगाम लगेगी, किसानों को राहत मिलेगी, मज़दूरों के लिए कल्याणकारी योजनाओं की शुरुआत होगी, भ्रष्टाचार पर लगाम लगेगा. अफ़सोस की बात यह है कि 100 दिनों के पूरे होने के बाद सारे मंत्रियों ने मौन धारण कर लिया है. अधिकारी 100 दिनों के एजेंडे पर बात करना नहीं चाहते. विपक्षी पार्टियां अपने घर को संभालने में लगी हैं. देश चलाने वालों की आदत पुरानी है- जो वादा करते हैं उसे नहीं निभाते हैं. ख़बर यह भी है कि मनमोहन सिंह उन मंत्रियों से नाराज़ हैं जो लक्ष्य को पूरा करने में असफल हुए हैं.

मनमोहन सरकार के 100 दिन ने कई उतार चढ़ाव देखे. सरकार ने कुछ ऐतिहासिक काम किए, जैसे कि शिक्षा के अधिकार का क़ानून बनना. साथ ही सूखा, मंहगाई, मंदी, महिला आरक्षण बिल और स्वाइन फ्लू सरकार की दूसरी पारी की शुरुआती मुश्किलें बन कर सामने आई. संसद के अंदर शर्म-अल-शेख में जारी भारत पाकिस्तान का साझा बयान सरकार की सबसे ज़्यादा परेशानी का सबब रहा. मनमोहन सिंह ने प्रधानमंत्री कार्यालय में 100 दिन के एजेंडे के कामकाज पर नज़र रखने के लिए एक *सेल* भी बनाया है. सरकार ने हर मंत्रालय से 100 दिन के कामकाज पर एक रिपोर्ट भी मांगी है.

मनमोहन सिंह सरकार की दूसरी पारी ऐसे माहौल में शुरू हुई, जो आर्थिक दृष्टि से ठीक नहीं कही जा सकती है. पिछले 100 दिनों में सूखा ने हाहाकार मचाया. मानसून ने देश के उपजाऊ इलाक़ों में धोखा दिया और महंगाई ने सरकार की कमर तोड़ दी. आर्थिक क्षेत्र, रोज़गार क्षेत्र, उद्योगों में सुधार, मूलभूत ढांचे का विकास और क़ीमतों पर लगाम कसने में

सभी फोटो- *प्रभात पाण्डेय*

सरकार ने क्या क्या किया

राष्ट्रपति के अभिभाषण में महिला आरक्षण बिल पर सबसे ज़्यादा ज़ोर दिया गया था. इसके तहत संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 फ़ीसदी आरक्षण देने का प्रावधान है. इस मुद्दे पर संसद में जमकर बहस हुई. अच्छी बहस हुई. सौ दिन बीत गए, लेकिन इस बिल पर सरकार एक इंच भी आगे नहीं बढ़ पाई है. राहत की बात यह है कि कैबिनेट ने नगरपालिकाओं और पंचायतों के चुनावों में महिलाओं के लिए 50 फ़ीसदी आरक्षण की स्वीकृति दे दी है. वहीं सरकारी नौकरी में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बढाने के लिए कुछ प्रगति नहीं हुई है.

महिला आरक्षण के साथ-साथ सरकार ने घोषणा की थी कि अगले 5 सालों में झुग्गी झोंपड़ी को ख़त्म कर दिया जाएगा और ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वालों को हर महीने 3 रुपए किलो की दर से 25 किलो अनाज दिया जाएगा. हाल यह है कि दाल और चीनी की क़ीमतों ने सारे रिकार्ड तोड़ दिए. मंदी की मार से परेशान सरकार को मानसून ने और भी मुश्किल में डाल दिया. इस बार का सूखा पिछले 20 सालों में सबसे भयानक है. देश के 626 ज़िलों में से 252 ज़िले को सूखाग्रस्त घोषित किया गया है. आकलन यह है कि इस बार 60 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर धान की खेती को नुकसान हुआ है. सौ दिनों का एजेंडा ना पूरा होने पर सरकार की दलील है कि सौ दिन के एजेंडे से पहले सूखे और महंगाई से निपटना ज़रूरी है. सरकार का ध्यान अब खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने पर है.

यूपीए सरकार ने इस बार ग्रामीण विकास और बुनियादी ढांचे को मजबूत करने को काफी महत्व दिया है. सरकार ने रोज़ाना 20 किलोमीटर और हर साल 700 किलोमीटर सड़क बनाने का लक्ष्य रखा था. फ़िलहाल देश में हर रोज़ दो किलोमीटर सड़क बन पा रही है. बिजली के क्षेत्र में 5653 मेगावाट बिजली उत्पादन का लक्ष्य भी फिलहाल अधूरा ही है. उर्जा मंत्रालय के मुताबिक़ पर्याप्त ईंधन उपलब्ध न होने की वजह से टारगेट पूरा नहीं हो सका. सरकार ने यह दावा किया था कि राजीव गांधी विद्युतीकरण योजना के तहत 2012 तक 50,000 गांवों तक बिजली पहुंचाई जाएगी.

ऐसा कहना भी ग़लत होगा कि पिछले 100 दिनों में सरकार ने कुछ नहीं किया. पिछले 100 दिनों में मानव संसाधन मंत्रालय काफी सक्रिय नजर आया. मंत्रालय ने दसवीं-बोर्ड परीक्षा की जगह ग्रेडिंग सिस्टम लागू करने में कामयाब रही. साथ ही डीम्ड यूनिवर्सिटी की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने, शिक्षा कर्ज़ पर सब्सिडी देने और पीपीपी (पब्लिक पीपल पार्टिसिपेशन) मॉडल पर स्कूल खोलने आदि जैसे काम प्रगति पर हैं. देश में ऑल इंडिया मेडिकल इंस्टीट्यूट जैसे 8 संस्थानों को खोलने और 18 राज्य स्तरीय स्वास्थ्य संस्थान खोलने की भी घोषणाएं भी इसी सौ दिनों में की गईं.

100 दिन के एजेंडे को सबसे आगे वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी ने बढ़ाया. वित्त मंत्रालय ने इनकम टैक्स के नए कोड का प्रारूप तैयार किया है. नए कोड से नौकरी पेशे वालों को तो राहत ज़रूर मिलेगी. इसे लागू होने में अभी दो साल लगेंगे. प्रणव मुखर्जी ने बजट में ग्रामीण विकास को प्रमुखता देकर सरकार के एजेंडे को आगे बढ़ाया है. इसके तहत कई योजनाओं की शुरुआत हुई और पुराने योजनाओं की आवंटित राशि में वृद्धि हुई. सरकार ने राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार योजना के लिये 391 बिलियन रुपए और भारत निर्माण योजना के लिए पिछले बार से 114 फ़ीसदी अधिक धन आवंटित किया है. इससे यह बात समझी जा सकती है कि मनमोहन सरकार ग्रामीण इलाक़ों की ख़ुशहाली पर ध्यान देना चाहती है. छोटे छोटे शहरों में सुविधाओं के विकास पर सरकार ने 11,400 करोड़ रुपए ख़र्च करने का फ़ैसला किया है साथ ही कश्मीर और पश्चिमोत्तर में सड़क निर्माण पर 13,397 करोड़ रुपए आवंटित किए हैं. किसानों के लिए राहत की बात यह है कि के वल छह प्रतिशत ब्याज दर पर कर्ज़ दिया जाने लगा है. साथ ही सरकार ने स्विस बैंको में जमा काले धन के मामले में बातचीत भी शुरू कर दी है. इस बारे में निर्णायक बैठक दिसंबर में होने वाली है.

गंगा को साफ-सुथरा करने का वादा भी अधर में है. यूपीए सरकार की तरफ से भरोसा दिया गया था कि नदियों की सफाई और सौंदर्यीकरण के लिए ठोस काम किए जाएंगे जिसकी शुरुआत गंगा से होगी. 100 दिन के बीत जाने के बाद भी इस मसले पर कोई सार्थक पहल नहीं हुई है. सरकार ने यह ऐलान किया था कि राष्ट्रीय स्वयंसेवी युवा दल द्वारा नदियों की साफ-सफाई और उसके सौंदर्यीकरण का कार्यक्रम बनाया जाएगा, लेकिन इसमें भी कोई प्रगति नहीं हुई है. यह ज़रूर है कि इस बीच इस तरह की भी ख़बरें आने लग गई हैं कि गंगा अपने उद्गम में ही मैली हो चुकी है. जांच से पता चला है कि गंगा का पानी गंगोत्री से ही पीने के लायक नहीं रहा.

सरकार के 100 दिन के एजेंडे में शामिल ऐसी कई योजनाएं हैं जिस पर काम शुरू हो चुका है जैसे कि बैकवार्ड रिजन्स ग्रांट फंड (पिछड़ा क्षेत्र अनुदान कोष) को फिर से बनाना, पब्लिक डाटा पॉलिसी (सार्वजनिक दस्तावेज नीति) बनाना, ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना में पारदर्शिता और जवाबदेही लाने के काम में भी प्रगति होना. पोस्ट ऑफिसों और बैंकों के अतंर्गत छात्रवृति और सामाजिक सुरक्षा की योजनाएं और स्मार्ट काड्र्स के द्वारा पैसों के लेन-देन का काम भी जारी है. सरकार ने सभी पंचायतों में भारत निर्माण कॉमन सर्विस सेंटर के तहत ई-गवर्नेंस की स्थापना करने का ऐलान किया है.

इसके अलावा क़ानून के स्तर पर सरकार ने सूचना के अधिकार को और अधिक मज़बूत बनाने का ऐलान किया था, लेकिन इस मामले में कोई प्रगति नहीं हो पाई है. यशपाल कमेटी और नेशनल नॉलेज कमीशन की सिफ़ारिश के तहत उच्च शिक्षा के लिए नेशनल काउंसिल का गठन किया जाना है, जिससे रेगुलेटरी इंस्टिट्यूशन में सुधार लाया जा सके. यह अभी शुरुआती दौर में ही है. विश्व के प्रतिभावान छात्रों को अपने यहां आकर्षित करने के लिए ब्रेन-गेन पॉलिसी को विकसित करने योजना पर भी काम चल रहा है. इसे 11वीं योजना में इनोवेशन यूनिवर्सिटी के तहत प्रस्तावित किया गया है. सरकार न्यायिक सुधार को लेकर भी आगे बढ़ रही है. क़ानून मंत्रालय को छह महीने के अंदर खाका तैयार करने और इसे समय सीमा के तहत लागू करने की बात की गई. जजों की संपत्ति को लेकर पूरे देश में बहस जारी है. मीडिया में तरह-तरह के विचार सामने आ रहे हैं. जहां तक सरकार का सवाल है तो जजों की संपत्ति सार्वजनिक करने संबंधी बिल का मसौदा तैयार हो चुका है, लेकिन इसे पेश नहीं किया गया है.

विपक्ष ने क्या किया?

जब हम सरकार के 100 दिनों के एजेंडे का हिसाब ले रहे हैं, तो यह भी ज़रूरी है कि हमें विपक्षी दलों का भी आकलन करना चाहिए कि पिछले 100 दिनों में इन लोगों ने क्या किया. यह इसलिए भी ज़रूरी है, क्योंकि प्रजातंत्र में सरकार के साथ-साथ विपक्ष की भी ज़िम्मेदारी होती है. यह भी समझना ज़रूरी है कि मनमोहन सिंह ने सरकार बनते ही सौ दिनों के एजेंडे का ऐलान तो कर दिया लेकिन यह शुरुआत से ही काफी महत्वाकांक्षी था. सरकार ने ख़ुद को बदलने की पहल तो की, लेकिन विपक्षी दलों ने अपने आप को नहीं बदला. 100 दिन पूरे होते ही विभिन्न राजनीतिक दलों ने प्रेस में बयान दिए. ये बयान महज खानापूरी जैसा ही है. संसद के पिछले सत्र में भारत-पाकिस्तान साझा बयान के ख़िलाफ़ विपक्ष के तेवर देखने योग्य थे. खेद की बात यह है कि विपक्ष के वही तेवर महंगाई, बेरोज़गारी और सूखे की मार जैसे विषयों पर देखने को नहीं मिला. संसद सत्र में यह किसी ने नहीं पूछा कि सरकार अपने 100 दिनों को एजेंडे को लागू करने में कितनी कामयाब हुई है, या फिर 100 दिन के एजेंडा को ठंडे बस्ते में रख दिया गया है.

सरकार के 100 दिन पूरे होने के बाद जब मीडिया ने इन बातों पर बहस शुरू की, तो अलग-अलग राजनीतिक दलों के बयान आने लगे. विपक्षी दल इस बात को लेकर एकमत हैं कि पिछले सौ दिनों में आम जनता ज़्यादा परेशान रही और सरकार ने ठीक से काम नहीं किया. भाजपा के मुताबिक़ सरकार आर्थिक और देश की सुरक्षा के क्षेत्र में अपने वायदों को पूरा करने में विफल रही है. कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया ने यूपीए सरकार के कामों को असंतोषजनक बताया, वहीं कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सवादी) के मुताबिक़ सरकार पिछले 100 दिनों में सरकार का पूरा ध्यान किसानों और मजदूरों और मंहगाई पर लगाम लगाने की बजाय व्यवसायिक घरानों को रियायत देने पर रहा. वहीं यूपीए को बाहर से समर्थन देने वाली समाजवादी पार्टी ने सरकार पर बेरोज़गारी पर काबू पाने पर असफल होने का आरोप लगाया. इन बयानों पर इस लिए ग़ौर देने की ज़रूरत है, क्योंकि इन बयानों से यह साफ लगता है कि सरकार के 100 दिन के एजेंडे को लेकर किसी भी राजनीतिक दल ने होमवर्क नहीं किया है. वैसे भी भाजपा और सीपीएम चुनाव में हारने के बाद अपने घर को दुरुस्त करने में लगे हैं. वाममोर्चा को ममता बनर्जी का ख़तरा सता रहा है, तो भारतीय जनता पार्टी अपने ही संगठन और नेताओं से परेशान है. इनकी परेशानी इतनी गंभीर है कि इन्हें सरकार के कामकाजों पर नज़र रखने और उस पर सवाल उठाने का वक़्त नहीं मिला.

पिछले सौ दिनों में सरकार को कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा. पहली परेशानी सरकार बनाने के दौरान हुई जब यूपीए को समर्थन देने वाली पार्टियों ने मंत्रालय के बंटवारे के दौरान दीवारें खड़ी की. मनमोहन सिंह चाहते थे कि इस बार युवाओं और अनुभवियों में तालमेल बिठा कर मंत्रियों को चुना जाए, ताकि यूपीए के बचे हुए कामों को पूरा किया जा सके. यूपीए सरकार को नरेगा और भारत निर्माण योजना जैसे पायलट प्रोजेक्ट्स पर निगरानी रखने की ज़रूरत है. इन योजनाओं को सही ढंग से चलाने के लिये सरकार को पूरे तंत्र में पारदर्शिता लाने की ज़रूरत पड़ेगी. अधिकारियों की जवाबदेही तय करने की ज़रूरत होगी और साथ ही इन योजनाओं को सफल बनाने के लिए स्थानीय लोगों और ग़ैर-सरकारी संस्थाओं को इन योजनाओं में शामिल करना भी महत्वपूर्ण होगा.

मनमोहन सिंह के 100 दिन के एजेंडे को हमें सरकार के प्रति आम जनता के भरोसे को मज़बूत करने की एक पहल के रुप में देखने की ज़रूरत है. मनमोहन सिंह ने इस एजेंडे के जरिए उस धारणा को बदलने की कोशिश की है कि

पिछड़ गई है. बजटीय घाटा कम नहीं हो पा रहा है, साथ ही वैश्विक आर्थिक मंदी के कारण मांग में भारी कमी देखी जा रही है. यह बात भी सही है कि कई मंत्रालयों ने तो आधा वक़्त 100 दिन का एजेंडा तैयार करने में लगा दिया. यही वजह है कि 100 दिन के एजेंडे को लागू करने में ज्यादातर मंत्रालय पूरी तरह से विफल रहे. स्वास्थ्य मंत्रालय का पूरा ध्यान स्वाइन फ्लू पर जा टिका, कृषि मंत्रालय सूखे की चपेट में आ गया. कुछ मंत्रियों ने तो यहां तक मान लिया कि 100 दिन के एजेंडे पर प्रगति नहीं हो पाई है.

सरकार ने 100 दिनों के एजेंडे में मंहगाई पर काबू, बुनियादी ढांचे का विकास, नरेगा को अन्य योजनाओं के साथ जोड़ने, महिला आरक्षण, मुफ्त शिक्षा, स्विस बैंक में जमा काले धन को वापस लाने, कर सुधार, छंटनी पर रोक लगाने, प्रति दिन 20 किलोमीटर सड़क बनाना, पब्लिक सेक्टर कंपनियों में विनिवेश और बिजली उत्पादन में वृद्धि आदि विषयों को शामिल किया था.

सरकार के काम का हिसाब अब सालों में नहीं दिनों में दिए जाएंगे. इसमें कोई शक़ नहीं है कि मनमोहन सिंह ने 100 दिन के एजेंडे को पेश कर सरकार की विश्वसनीयता और जवाबदेही बढ़ाने की अच्छी कोशिश की है. 100 दिन का एजेंडा अपने आप में काफी महत्वाकांक्षी है. भारत में सिर्फ तीन महीने में किसी भी योजना को लागू करना लगभग असंभव जैसा है. यह पहले से ही तय था कि सौ दिनों के बाद जब जायज़ा लिया जाएगा तो इसमें सरकार की असफलता भी शामिल होगी.यह बात भी सही है कि मनमोहन सरकार सौ दिन के एजेंडे को पूरी तरह से पूरा करने में कामयाब नहीं रही है, लेकिन यही सरकार के कामों को आकलन करने का कोई मापदंड नहीं हो सकता. दुनिया मंदी के दौर में हैं और भारत इससे अछूता नहीं है. मनमोहन सरकार के सामने कई चुनौतियां हैं. कुछ चुनौतियां काफी मुश्किल भी है. सरकार इन चुनौतियों का सामना कैसे करती है ये अभी देखना बाक़ी है.

manish@chauthiduniya.com

अपने ही सांसदों से जदयू हलकान

फोटो–*सुनील मल्होत्रा*

सुरेंद्र किशोर

जनता दल यू के दो लोक सभा सदस्य डा. जगदीश शर्मा (जहानाबाद) और पूर्णमासी राम (गोपालगंज) पार्टी के लिए परेशानी का कारण बने हुए हैं. यह जदयू के परिवारवाद विरोधी रुख़ के कारण हो रहा है. देखना है कि नीतीश कुमार अपने इन दबंग सांसदों से कैसे निपटते हैं.

यहां बताना लाज़िमी होगा कि बिहार के 18 विधानसभा चुनाव क्षेत्रों में इसी महीने उप चुनाव हो रहे हैं. मतदान 10 और 15 सितंबर को होंगे. विधायकों के इस्तीफे के कारण ये उपचुनाव हो रहे हैं. इनमें से कुछ विधायकों ने लोक सभा चुनाव जीत जाने के कारण इस्तीफा दिया, कुछ को दल-बदल लेने के कारण विधानसभा की सदस्यता से इस्तीफा दिया. लोकसभा के लिए चुने जाने से पहले जदयू के डा.जगदीश शर्मा घोसी से जदयू विधायक थे. इस बार वे अपनी पत्नी शांति शर्मा के लिए जदयू से टिकट चाहते थे. इसी तरह पूर्णमासी राम बगहा से अपने पुत्र अजय राम के लिए जदयू टिकट चाहते थे. हालांकि, नीतीश कुमार ने दलील दी कि यदि वह भी नेताओं के परिवार के लोगों को टिकट देने लगे, तो उनमें और राजद में क्या फर्क़ रहेगा? अब अजय राम बगहा से राजद उम्मीदवार हैं. शांति शर्मा घोसी में निर्दलीय उम्मीदवार हैं.

इस बार भाजपा ने भी किसी नेता के परिवारजन को टिकट नहीं दिया है. नवादा के भाजपा सांसद डा.भोला सिंह अपने पुत्र के लिए अपनी छोड़ी हुई सीट बेगूसराय से भाजपा से टिकट चाहते थे. भाजपा ने इन्हें उपकृत नहीं किया. भाजपा में तो विद्रोह नहीं हुआ, पर जदयू के इन दो सांसदों ने अपने संबंधियों को चुनावी मैदान में खड़ा कर दिया. हालांकि जगदीश शर्मा और पूर्णमासी राम ने अलग-अलग कहा है कि हम वहां से जदयू के अधिकृत उम्मीदवार के ख़िलाफ़ चुनाव प्रचार नहीं करेंगे, लेकिन ज़ाहिर है कि उनके ये परिजन इन सांसदों के प्रभाव का लाभ उठाने के लिए ही चुनाव मैदान में उतरे हैं. अब देखना है कि जदयू के ख़ुफ़िया तंत्र को बगहा और घोसी से क्रमश: पूर्णमासी राम और जगदीश शर्मा और इनके खास समर्थकों की चुनावी गतिविधियों के बारे में कैसी ख़बरें मिलती हैं? यदि इन सांसदों ने भीतर-भीतर पार्टी विरोधी गतिविधियां चलाईं तो क्या शरद यादव और नीतीश कुमार इन सांसदों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करेंगे? यदि नहीं करेंगे तो इसका संगठन के अनुशासन पर कैसा असर पड़ेगा?यह देखना दिलचस्प होगा.

नीतीश कुमार क्या यह भी साबित करेंगे कि इन्हें पार्टी विरोधी गतिविधि भी मंजूर नहीं है? बड़े व प्रभावशाली नेताओं के परिजन को टिकट नकार देना इन दिनों की स्वार्थपरक राजनीति में मुश्किल काम होता जा रहा है. हालांकि नीतीश कुमार इतने चतुर हैं कि वह ऐसे ख़तरे उठाने के फ़ायदे जानते हैं. वह समझते हैं कि इस तरह के बर्ताव से आम जनता ख़ुश होती है. आख़िरकार, वह मामला वोटों में बदल कर ही रहता है. उनके इस क़दम से जदयू के आम कार्यकर्ता भी ख़ुश हैं. इस परिवारवाद विरोधी कदम से भाजपा के कार्यकर्ताओं में भी ख़ुशी देखी जा रही है. दरअसल इस देश की अनेक परिवारवादी पार्टियां वास्तविक राजनीतिक कार्यकर्ताओं के लिए फांसी घर बनी हुई हैं. बिहार में जदयू और भाजपा ने फांसी के इस फंदे को काट दिया है. इससे कार्यकर्तागण स्वतंत्रता महसूस कर रहे हैं. पहले भी नालंदा से जदयू सांसद रामस्वरूप प्रसाद के पुत्र को जदयू ने उपचुनाव में इस्लामपुर विधानसभा चुनाव क्षेत्र में पार्टी का टिकट देने से इनकार कर दिया था. इस कारण रामस्वरूप बाबू विद्रोही हो गए. राम स्वरूप प्रसाद के इस्तीफे के कारण इस्लामपुर सीट खाली हुई थी. सन् 2005 में मुख्यमंत्री बनने के बाद नालंदा में हुए उपचुनाव के ज़रिए राम स्वरूप प्रसाद को लोक सभा में भेजा गया था, पर परिवार के मोह में राम स्वरूप बाबू ने अपना राजनीतिक करियर भी ख़राब कर लिया. जाहिर है कि इन चुनाव क्षेत्रों में बगहा और घोसी में जदयू ने भी अपने उम्मीदवार दिए हैं. दो दबंग और प्रभावशाली सांसदों के पूर्व विधानसभा क्षेत्रों में मुक़ाबला कुछ अलग ढंग का होगा. डॉ. जगदीश शर्मा का घोसी और पूर्णमासी राम का बगहा में दल के अलावा व्यक्तिगत असर भी रहा है. इस उपचुनाव में इस बात का फ़ैसला होगा कि वहां नीतीश मॉडल की राजनीति को जनता पसंद करती है, या जगदीश शर्मा व पूर्णमासी मॉडल की राजनीति को. हाल में राज्य की लोकसभा की 40 में 32 सीटें जीत कर राजग उत्साहित तो है ही. परिवारवाद विरोधी जदयू कार्यकर्तागण नीतीश कुमार से यह भी उम्मीद कर रहे हैं कि यदि उपर्युक्त दो सांसदों के ख़िलाफ़ चुनाव में अनुशासनहीनता के मामले सामने आते हैं, तो पार्टी इन पर भी कार्रवाई करे. भ्रष्टाचार, अपराध, जातिवाद, संप्रदायवाद और परिवारवाद आज की राजनीति की प्रमुख बुराइयां हैं. नीतीश कुमार पिछले चार वर्षों से इनसे लड़ने की कोशिश कर रहे हैं. भले कुछ मामलों से उनके दामन पर भी दाग लगे हैं. इस बार राजद में तो एक अजीब-गरीब राजनीतिक घटना हो गई. परिवारवादी राजनीति के इस युग में जगदानंद सिंह ने भी अपने परिवार के किसी सदस्य के लिए टिकट नहीं मांगा. वह एक ऐसे दल में हैं, जहां परिवारवाद को बुरा नहीं माना जाता है. इनके इस्तीफे के कारण ही रामगढ़ विधान सभा क्षेत्र में भी उप चुनाव हो रहा है. जगदानंद बक्सर से राजद सांसद हैं. यदि वे चाहते तो इनकी जाति कौन कहे, इनके परिवार के किसी सदस्य को भी राजद टिकट दे सकता था. जगदानंद ने पार्टी को सलाह दी कि रामगढ़ से राजद के अंबिका सिंह यादव को ही टिकट दिया जाए और दिया भी गया. ऐसा इस बात के बावजूद हुआ कि आज़ादी के बाद से आज तक राम गढ़ से किसी भी दल का कोई यादव नेता चुनाव नहीं जीत सका है. प्रमुख राजनीतिक दल किसी यादव को वहां से उम्मीदवार तक नहीं बनाता. अंबिका सिंह यादव अच्छे राजद कार्यकर्ता हैं तो इन्हें टिकट क्यों नहीं मिलना चाहिए? ऐसा काम इन दिनों राजनीति में दुर्लभ है. इससे नए कार्यकर्ता पार्टी से जुड़ते हैं. राजनीति में जातपांत का असर कम होता है. सबसे बढ़कर तो यह कि किसी अच्छे कार्यकर्ता को यह भी महसूस होता है कि वे भी विधायक या सांसद बन सकते हैं. ये सारे पद किसी परिवार विशेष के लिए रिजर्व नहीं है.

नीतीश कुमार क्या यह भी साबित करेंगे कि इन्हें पार्टी विरोधी गतिविधि भी मंजूर नहीं है? बड़े व प्रभावशाली नेताओं के परिजन को टिकट नकार देना इन दिनों की स्वार्थपरक राजनीति में मुश्किल काम होता जा रहा है. हालांकि नीतीश कुमार इतने चतुर हैं कि वह ऐसे ख़तरे उठाने के फ़ायदे जानते हैं. वह समझते हैं कि इस तरह के बर्ताव से आम जनता ख़ुश होती है. आख़िरकार, वह मामला वोटों में बदल कर ही रहता है. उनके इस क़दम से जदयू के आम कार्यकर्ता भी ख़ुश हैं. इस परिवारवाद विरोधी कदम से भाजपा के कार्यकर्ताओं में भी ख़ुशी देखी जा रही है.

feedback@chauthiduniya.com

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मध्ययुग हावी

पूर्व का ऑक्सफोर्ड कहे जाने वाले इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अब एक नई प्रथा शुरू हो गई है. यहां अनुशासन के नाम पर मध्ययुगीन आदर्शों को लागू किया जा रहा है. सज़ा देने का एक नया और मौलिक तरीक़ा यहां खोज लिया गया है. इस विश्वविद्यालय में छात्रों को मुर्गा बनाकर दंड-बैठक करवाने की प्रथा शुरू की गई है. वाकई यह अनूठी पहल है. वैसे यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस काम को कुछ सीनियर छात्र नहीं कर रहे, बल्कि विश्वविद्यालय-प्रॉक्टर के निर्देशानुसार इसे अंजाम तक पहुंचाया जा रहा है. अगस्त माह में यहां के प्रॉक्टर ने कुछ छात्रों को परिचय पत्र न होने की वजह से पहले कमरे में बंद कर दिया और बाद में परिसर में उन्हें मुर्गा बनवाकर दंड-बैठक लगवाई. उसमें से एक छात्र-जिसके घुटने में चोट लगी थी-दंड बैठक नहीं कर सकता था. इस पर प्रॉक्टर महाशय ने उसे ज़मीन पर लिटा ज़मीन चाटने को कहा. इतना होने के बाद जब इलाहाबाद के मानवाधिकार संगठन और जनसंगठन के लोग सक्रिय हुए तो मीडिया ने भी इस मामले की तह तक पहुंचने की कोशिश की.

अगस्त माह में यहां के प्रॉक्टर ने कुछ छात्रों को परिचय पत्र न होने की वजह से पहले कमरे में बंद कर दिया और बाद में परिसर में उन्हें मुर्गा बनवाकर दंड-बैठक लगवाई. उसमें से एक छात्र-जिसके घुटने में चोट लगी थी-दंड बैठक नहीं कर सकता था. इस पर प्रॉक्टर महाशय ने उसे ज़मीन पर लिटा ज़मीन चाटने को कहा. इतना होने के बाद जब इलाहाबाद के मानवाधिकार संगठन और जनसंगठन के लोग सक्रिय हुए तो मीडिया ने भी इस मामले की तह तक पहुंचने की कोशिश की.

इसी दौरान इलाहाबाद स्थित एक अख़बार के संवाददाता ने जब प्रॉक्टर से इस मामले पर बात की तो प्रॉक्टर जटाशंकर त्रिपाठी ने कहा कि छात्रों को विश्वविद्यालय परिसर में मुर्गा बनाना उनके नियम के दायरे में आता है. यह बात अलग है कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है और यहां का माहौल अन्य विश्वविद्यालयों के मुक़ाबले काफी बेहतर माना जाता है. इस विश्वविद्यालय ने देश को दर्जनों राजनेता, बुद्धिजीवी, पत्रकार और वकील दिए हैं. यहां पर छात्र आंदोलनों की एक लंबी परंपरा रही है और लोकतांत्रिक हक़ के लिए यहां के छात्र कई बार सड़क पर उतर चुके हैं. ऐसे में प्रॉक्टर का यह व्यवहार सभी के लिए चौंकाने वाला था. इस सब के बाद जब संवाददाता ने कुलपति प्रोफेसर आर जी हर्षे से इस बारे में बातचीत करनी चाही तो छूटते ही उन्होंने इस तरह की किसी भी घटना से इंकार कर दिया. उन्हें जब ब्योरा दिया गया तो वह उत्तेजित होकर बोले-पत्रकार की क्या हैसियत जो मुझसे बात करे? मैं राज्यपाल का प्रतिनिधि हूं. उन्होंने धमकी भरे लहज़े में पत्रकार से कहा कि मैं तुम्हारे ख़िलाफ़ एफआईआर भी दर्ज़ करा सकता हूं. यह बता देने में हर्ज़ नहीं कि इस विश्वविद्यालय के कुलपति राज्यपाल के नहीं बल्कि राष्ट्रपति के नुमाइंदे होते हैं. इसके बाद कर्नलगंज थाने में राघवेंद्र प्रताप सिंह के ख़िलाफ़ प्रॉक्टर की तरफ़ से मामला भी दर्ज़ करा दिया गया. बात इतनी बढ़ गई कि इस मुद्दे को लेकर इलाहाबाद और लखनऊ दोनों जगह मीडिया और मानवाधिकार संगठनों ने तीखा विरोध प्रकट किया. इंडियन फेडरेशन ऑफ वर्किंग जर्नलिस्ट ने इस घटना को दुर्भाग्यपूर्ण बताते हुए प्राक्टर के ख़िलाफ़ कड़ी कार्रवाई करने की मांग की है. लखनऊ श्रमजीवी पत्रकार यूनियन के अध्यक्ष सिद्धार्थ कल्हंस ने कहा कि यह विश्वविद्यालय प्रशासन की तानाशाही है. विश्वविद्यालय के प्रॉक्टर ने एक तरफ़ अमानवीय तरीक़े से छात्रों को परेशान किया और बाद में पत्रकार को फर्ज़ी मामले में फंसाने की कोशिश की है. उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा कि यह मामला अगर तुरंत वापस नहीं लिया गया तो वे इसके ख़िलाफ़ सड़कों पर उतरने को बाध्य होंगे. दूसरी तरफ़ इलाहाबाद विश्वविद्यालय छात्रसंघ के पूर्व अध्यक्ष के के राय और लाल बहादुर सिंह ने इसे अभिव्यक्ति की आज़ादी पर हमला बताया है. उन्होंने इस मामले में विश्वविद्यालय प्रशासन के दोषी अधिकारियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई की मांग की है. पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज ने भुक्तभोगी छात्रों और प्रत्यक्षदर्शियों ने मिलकर उनके बयान की सीडी बनाई है, जिसे वह केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय, मानवाधिकार आयोग और यूजीसी के सामने पेश करेगा. पीयूसीएल के प्रदेश संगठन सचिव शाहनवाज ने कहा कि संवाददाता पर से तत्काल मुक़दमा वापस लिया जाए नहीं तो पीयूसीएल और अन्य जनसंगठन मिलकर इसे अदालत में चुनौती देंगे. शाहनवाज के मुताबिक़ एक और मामला ध्यान देने लायक़ है. इस घटना में भी विश्वविद्यालय प्रशासन की संवेदनहीनता का पता चलता है. इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र हिमांशु राय-जिन्होंने इसी साल स्नातक की परीक्षा पास की है- पिछले सप्ताह अपना माइग्रेशन निकलवाने विश्वविद्यालय आए थे. हिमांशु जैसे ही माइग्रेशन फार्म लेने काउंटर पर पहुंचे इसी बीच उसके साथ पत्रा-चार माध्यम से एमए की जानकारी लेने विश्वविद्यालय आए धनंजय को प्रॉक्टर जटाशंकर त्रिपाठी के साथ रहने वाले सुर-क्षाकर्मियों ने उठाकर बगल में खड़ी गाड़ी में ठूंस दिया, वहां पहले से ही कुछ छात्र बंधक बने हुए थे. इसके बाद उन सभी छात्रों को गाड़ी से कुलानुशासक कार्यालय ले जाया गया. वहां उन सभी को दो घंटों तक बंधक बनाकर रखा गया. इस दरम्यान सुरक्षाकर्मियों ने उन्हें गालियां देते हुए लगातार जेल भेज देने की धमकी भी दी. बहरहाल, इस कांड के बाद सारे राजनीतिक दलों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने कमान संभाल ली है, और ज़ोरदार शब्दों में प्रॉक्टर की निंदा की. सपा और कांग्रेस समेत सभी राजनीतिक दलों ने इसे प्रॉक्टर का तानाशाह रवैया बताया है और उनकी अविलंब विदाई की मांग की है.

राजीव यादव

feedback@chauthiduniya.com

आख़िर क्यों महत्वपूर्ण है विदेश नीति...

शशि थरूर

स्वतंत्रता के छह दशकों में पूरी दुनिया नेहरू जी की कल्पना से भी अधिक एक-दूसरे के साथ जुड़ गई है. आज यह कहना उचित ही होगा कि वे देश-जो अपने धन, ताक़त अथवा दूरी के कारण- जो कभी अपने आपको बाहरी ख़तरों से सुरक्षित मानते थे, ने भी अपना स्टैंड बदला है. वे भी इस बात को पूर्णत: स्वीकार करते हैं कि हर जगह लोगों की सुरक्षा सिर्फ स्थानीय सुरक्षा बलों पर ही नहीं, अपितु आतंकवाद के विरुद्ध अपने आपको संरक्षित रखने, प्रदूषण, बीमारियों, अवैध नशीली दवाओं तथा सामूहिक विनाश के हथियारों के वैश्विक प्रसार को रोकने और मानवाधिकारों, लोकतंत्र तथा विकास को बढ़ावा देने पर निर्भर करता है.

नौकरियां भी अब स्थानीय फर्मों और कारखानों पर निर्भर नहीं रह गई हैं, बल्कि ऐसी अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं पर निर्भर करती हैं जो सामानों, सेवाओं और व्यक्तियों की मुक्त आवाजाही को सुविध-ाजनक बना सके. संक्षेप में आज एक ऐसी प्रणाली की आवश्यकता है, जो लगातार एकीकृत हो रहे विश्व को समर्थन प्रदान कर सके.

आज चाहे आप दिल्ली अथवा डिली, डर्बन अथवा डार्बिन, अलीगढ़ अथवा अलबामा में रहते हों चाहे आप नोएडा के हों या न्यूयार्क के हों, सिर्फ अपने देश के बारे में सोचना बिल्कुल यथार्थपूर्ण नहीं होगा. इन उदार ताकतों के साथ-साथ अनुदार ताकतें भी हैं और उनका स्वरूप भी समान रूप से वैश्विक है. हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि 9/11 ने वैश्विक ग्राम के बारे में हमारी पुरानी बात को ही स्पष्ट कर दिया है. इसने इस बात को प्रदर्शित कर दिया कि यदि किसी दूरस्थ गांव के किसी कोने में अवस्थित फूस की झोंपड़ी अथवा धूल भरे किसी शिविर में आग लगती है, तो यह हमारे वैश्विक ग्राम के दूसरे छोर पर अव-स्थित ऊंची-ऊंची इमारतों में लगे इस्पात की चादरों को पिघला सकती है.

ऐसे विश्व में जो मुद्दे कभी दूर के लगते थे, अब वे आपके आंगन में आ गए हैं. हमारा विकल्प स्पष्ट है. यदि हमें अपने देश में अपनी इच्छा के अनुरूप समाज का सृजन करना है और इसे कायम रखना है, तो हमें वैश्विक स्तर पर भी निश्चित रूप से सक्रिय रहना होगा. देश में हमारी स्वतंत्रता इस बात की सर्वोत्तम गारंटी है कि विदेश में भी हम सम्मानित होंगे और हमारी आवाज़ को सुना जाएगा.

हमारे देश के राजनीतिक परिदृश्य में शायद ही कभी विदेशी चीजों के प्रति संदेह की अनुपस्थिति रही. भारत में आज़ादी के बाद चार से अधिक दशकों तक आत्मनिर्भरता और आर्थिक आत्मसंतोष ने मंत्रों के रूप में कार्य किया. वास्तव में पहले तो इस बात के संबंध में भी संदेह किया जाता था कि क्या देश को विश्व अर्थव्यवस्था के समक्ष और खोला जाना चाहिए?

वर्ष 1991 में आए विश्वव्यापी वित्तीय संकट के फलस्वरूप वास्तव में हमारी सरकार को अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के समर्थक ऋण को बनाए रखने के लिए अपने स्वर्ण भंडार को लंदन भेजना पड़ा. यदि हम ऐसा नहीं करते, तो हमसे ऋण अदायगी में चूक हो सकती थी. इस घटना के बाद ही भारत ने हमारे तत्कालीन वित्त मंत्री मनमोहन सिंह के दिशानिर्देश में अपनी अर्थव्यवस्था को उदार बनाने की प्रक्रिया आरंभ की. इसके बाद से हम वैश्वीकरण के उदहारण बन गए हैं. शेष विश्व के साथ के बिना विकास और समृद्धि प्राप्त करना हमारे लिए असंभव होगा.

क्या आप नहीं चाहेंगे कि आपकी सरकार उन चुनौतियों का सामना करने के लिए नीतियां बनाए, जो आपके जीवन को प्रभावित करती हैं और एक दिन आपके बच्चों के जीवन को भी प्रभावित कर सकती हैं? क्या उत्तरोत्तर अंतर्निर्भर हो रहे इस विश्व में इन नीतियों को विदेशी नीतियों का नाम दिया जा सकता है? विदेश नीति महत्वपूर्ण क्यों है, इसका एक कारण यह भी है कि विदेश नीति अब विदेशी नहीं रह गई है; आप जहां कहीं भी हों, वहीं ये आपको प्रभावित करेंगी. आप चाहते हैं कि आपकी सरकार 21वीं शताब्दी के विश्व में उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाए और साथ ही विश्व में मौजूद जोखिमों और ख़तरों का प्रबंधन तथा समाधान भी करे, तो इसके लिए ज़रूरी है कि एक कारगर विदेश नीति भी हो.

भारत पर अंतरराष्ट्रीय घटनाक्रमों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है. यदि दूसरे शब्दों में कहें, तो हम जिस अनाज का उत्पादन करते हैं और खाते हैं, जिस हवा में सांस लेते हैं. यहां तक कि हमारा स्वास्थ्य, हमारी सुरक्षा, समृद्धि और जीवन की गुणवत्ता उत्तरोत्तर इस बात से प्रभावित हो रही है कि सीमाओं के उस पार क्या हो रहा है और इसीलिए हम पड़ोस में होने वाली घटनाओं को नजरंदाज करने का साहस नहीं कर सकते, चाहे ये घटनाएं दूर में घटती प्रतीत क्यों न हो रही हों. अज्ञानता कोई कवच नहीं है, यहां तक कि अब यह कोई बहाना भी नहीं रह गया है. आज के विश्व में दूसरों के संबंध में जानकारी रखने के अनेक लाभ हैं.

चूंकि आज के विश्व में घरेलू और अंतरराष्ट्रीय के बीच विद्यमान अंतर निरंतर कम होता जा रहा है इसलिए जब हम विदेश नीति के बारे में सोचते हैं तो हमें इसके घरेलू निहितार्थों के बारे में भी अवश्य सोचना चाहिए. किसी भी देश की विदेश नीति का अंतिम प्रयोजन अपने नागरिकों की सुरक्षा और हित कल्याण को बढ़ावा देना होता है. हम ऐसा विश्व चाहते हैं जो हमें शांति और सुरक्षा का ऐसा परिवेश उपलब्ध करा सके जिसमें हम विदेशी शोषण से सुरक्षित रहते हुए और बाहरी अवसरों का लाभ उठाते हुए आगे बढ़ें और फले-फूलें.

इसके साथ हमारे देश में इस संबंध में सर्वसम्मति है कि भारत को अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा और समृद्धि, सुव्यवस्थित एवं न्यायसंगत विश्व तथा

लोकतांत्रिक एवं सतत विकास के लिए अनुकूल विश्व के प्रति अपना योगदान देना चाहिए. दरअसल, वैश्विक शासन की संस्थाएं अब स्वयं संयुक्त राष्ट्र से भी आगे बढ़ रही हैं. अभी जी-8 जैसे चुनिंदा तंत्र, नाटो जैसे सैनिक गठबंधन, पश्चिमी अफ्रीकी राज्य आर्थिक समुदाय जैसे उप-क्षेत्रीय समूह तथा परामाणु आपूर्तिकर्ता समूह जैसे एक मुद्दे पर आधारित संगठन विद्यमान है. लेखक अंतरराष्ट्रीय पीईएन के अंतर्गत, फुटबाल खिलाड़ी फीफा के अंतर्गत, एथलीट अंतरराष्ट्रीय ओलंपिक समिति के अंतर्गत और महापौर विश्व संयुक्त नगर और स्थानीय सरकार संगठन के अंतर्गत एक दूसरे के साथ मिलकर कार्य कर रहे हैं. बैंकर्स, बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेटलमेंट्स की बात सुनते हैं और व्यवसायी इंटरनेशनल अकाउंटिंग स्टैंडर्ड्स बोर्ड की बात सुनते हैं. अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से परे उपर्युक्त मानवीय क्रियाकलापों को नियमित बनाने की प्रक्रिया इतनी व्यापक पहले कभी नहीं रही है.

अंतरराष्ट्रीय सहयोग के इन तत्वों के साथ निश्चित रूप से हमें बहुपक्षीय क्रियाकलापों के लिए नए निकायों और नई व्यवस्थाओं की वास्तविक वर्णमाला का भी तड़का लगाना होगा. भारत आईबीएसए, ब्रिक तथा सार्क से लेकर पूर्वी एशियाई शिखर सम्मेलन का सदस्य होने के साथ-साथ जी-20 तथा एशियाई क्षेत्रीय मंच का भी सदस्य है. इसे एससीओ की बैठकों में पर्यवेक्षक का दर्जा प्राप्त है और यह जी-8 की बैठकों में भाग लेता है. संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे सार्वभौमिक और सुविख्यात संगठनों में अपने हितों को बढ़ावा देने के साथ भारत आईओआर एआरसी जैसे लघु और गुमनाम संगठनों का भी सदस्य है.

हमें सिर्फ बहुपक्षीय संगठनों के बारे में ही नहीं सोचना चाहिए. अन्य मायनों में भी विश्व बदल गया है. आज सर्वोत्तम कार्यकारी जेटों का निर्माण ब्राजील की कम्पनी एम्ब्रेयर द्वारा किया जा रहा है, फिलहाल विश्व की सबसे ऊंची इमारत दुबई में है जो अभी एक अपूर्ण ढांचा है और जिसने ताइपेई में विश्व की सबसे ऊंची इमारत को पीछे छोड़ दिया है. विश्व के सबसे बड़े विमान का निर्माण रूस और उक्रेन में किया जा रहा है, विश्व का सबसे बड़ा फेरी ह्वील सिंगापुर में है, सबसे बड़ा शॉपिंग माल बीजिंग में है तथा फोर्ब्स सूची में विश्व के सबसे समृद्ध 10 व्यक्तियों में सबसे अधिक संख्या भारतीयों की है. हमारे चार अरबपतियों, जिनकी कुल संपत्ति एक समय में 180 बिलियन अमरीकी डालर आंकी गई थी- की संपत्ति संयुक्त राष्ट्र के अधिकांश सदस्य राज्यों की संपत्ति से अधिक है. 30 वर्ष पूर्व इन सभी श्रेणियों में अमरीका का बोलबाला था. अभी भी अमरीका विश्व का एक मात्र सुपर पावर है, परन्तु अन्य देश भी अब विभिन्न क्षेत्रों में उसका मुकाबला कर रहे हैं. भारत को भी ऐसे विश्व के अनुकूल बनना चाहिए. संसद और मीडिया में विदेश नीति पर होने वाली बहस मुख्य तौर पर पाकिस्तान अथवा क्षणिक मामलों से संबंधित होती है. विदेश नीति इतना महत्वपूर्ण मुद्दा है कि इसे सिर्फ विदेश मंत्रालय के भरोसे ही नहीं छोड़ा जा सकता. हमारा पूरा समाज और विशेष रूप से हमारे शिक्षित युवाओं को विश्व मंच पर भारत की जगह के बारे में सोचना चाहिए और हमारे अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण को आकार देने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए.

आज भारत के सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में अंतरराष्ट्रीय संबंध का शिक्षण किया जा रहा है, लेकिन विभागों में अध्यापकों का अभाव है, बुनियादी ढांचा अत्यंत कमजोर है, पाठ्यचर्या भारी-भरकम है तथा अनुसंधान के अवसर अत्यंत सीमित हैं. इनमें से आधे से अधिक विभागों के पास इंटरनेट की सुविधा तक नहीं है और इस प्रकार वे ऑनलाइन संसाधनों के धन से महरूम हैं, जबकि विश्व में अन्य देशों के छात्रों के पास यह सुविधा उपलब्ध है. पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं की भी बेहतर आपूर्ति नहीं हो पाती है. विशेष क्षेत्रों अथवा भारत के हित से जुड़े देशों में भी बहुत अधिक विशेषज्ञता अर्जित नहीं की जा सकी है. हम शायद 1950 के दशक के नेहरू के दिनों से भी पीछे चले गए हैं जब हमने सप्रू हाउस तथा भारतीय विश्व कार्य परिषद जैसे निकायों की स्थापना की थी जबकि इन संस्थाओं का महत्व भी धीरे-धीरे घटता गया.

मेरे मित्र कांति बाजपेयी का तर्क है कि ऐसा प्रतीत होता है कि उदीयमान ताकतों को अंतरराष्ट्रीय संबंधों का यथावश्यक ज्ञान प्राप्त हो जाता है. परन्तु यह इतनी आसानी से नहीं होगा. हमें अपने देश के भावी नेताओं और वर्तमान नेताओं का अंतरराष्ट्रीय संबंधों के बारे में सोचने का तरीका बदलने की आवश्यकता है.

जैसा कि मैंने पहले भी कहा, अंतरराष्ट्रीय संबंधों पर होने वाली चर्चाएं सिर्फ दिल्ली में सेमिनार रूम तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिए और इसीलिए 11 अगस्त, 2009 को कोचीन में भारत-अरब संबंधों पर आयोजित सेमिनार के फलस्वरूप मुझे काफी हर्ष हुआ. सभी भारतीयों का, चाहे वे देश की राजधानी से 2000 किमी. दूर क्यों न रहते हों, भी हमारी विदेश नीति के विकास में महत्वपूर्ण हित छिपा है. 26/11 की दुखद घटना से पुन: इस बात की पुष्टि हुई कि सुरक्षा और अन्य अंतरराष्ट्रीय मुद्दों में शामिल एजेंसियों एवं विभिन्न कार्यक्रमों के बीच कितने बेहतर सहयोग की आवश्यकता है और भारत को सुरक्षित रखने के लिए हमारे घरेलू और अंतरराष्ट्रीय उपकरणों का आधुनिकीकरण कितना आवश्यक है. दूसरे शब्दों में हमारी अंतरराष्ट्रीय नीति की निरंतरता भारत सरकार के नेतृत्व और भारतीय युवाओं की सक्रिय भागीदारी दोनों बातों पर निर्भर करती है. सरकार आप सबकी वैश्विक नागरिकता को संरक्षित रखने और इसे बढावा देने के लिए वचनबद्ध है परंतु ऐसा आपकी भागीदारी के बिना नहीं किया जा सकता है. मुझे विश्वास है कि विश्व युवाओं के अनुकूल जा रहा है. आप भारतीयों की उस नई वैश्विक और जागरूक पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं जो पुरानी पीढ़ियों के सीमित वैश्विक दृष्टिकोण तक ही सीमित नहीं है और यह सही ही है. आपके विश्व का क्षितिज निरंतर व्यापक होता जा रहा है. अंतरराष्ट्रीय क्रियाक्लाप, व्यापक समृद्धि और सीमाविहीन सफलता की संभावनाएं इतनी उज्जवल पहले कभी नहीं थीं. परंतु विश्व को आपकी प्रतिबद्धता की भी आवश्यकता है. मैं आपसे भारत और विश्व के बारे में-विश्व में भारत के बारे में सोचने के लिए और यह सब सीखने में आपकी स्वयं की भूमिका, इसे आकार देने तथा मुझे आशा है कि एक दिन नेतृत्व करने में सहायता करने के लिए अपने आपको प्रतिबद्ध करने का आह्वान करता हूँ.

लेखक विदेश राज्य मंत्री हैं.

feedback@chauthiduniya.com

महाजनों के ख़िलाफ़ यौनकर्मियों का बैंक

विमल राय

भारत की दूसरी सबसे बड़ी सेक्स मंडी सोनागाछी की यौनकर्मी सरस्वती विश्वास अब इस बदनाम बस्ती में नहीं रहती. ऊषा मल्टीपर्पज़ को-आपरेटिव सोसाइटी लिमिटेड से उसने ढाई साल पहले घर ख़रीदने के लिए दो लाख का कर्ज़ लिया. शरीर बेचकर ही सही, पर उसने ढाई साल में सारा कर्ज़ चुका दिया. 31 अगस्त को गिरवी रखे ज़मीन के काग़ज़ात लेने आई सरस्वती के चेहरे पर सिर से एक बड़ा बोझ उतरने की चमक साफ देखी जा सकती है. बुरे दिनों में काम आने के लिए या इस दलदल से निकलकर बेहतर ज़िंदगी शुरू करने के लिए सरस्वती जैसी हज़ारों पतिताओं में बचत का नशा पैदा हुआ है. आज सरस्वती बरासात के पास एक साफ-सुथरी बस्ती में रहकर अपने दो भाइयों, एक बहन और दो बच्चों का पालन-पोषण कर रही है, हालांकि पेशे के लिए वह आज भी सोनागाछी में चोरी-चोरी आती है, पर समाज की नज़र में उसका सम्मान जस का तस है.

सोनागाछी की ही यौनकर्मी काजल दास ने तय कर लिया था कि वह अपनी बेटी सपना को इस पेशे से दूर रखेगी. मुर्शिदाबाद में एक रिश्तेदार के घर में उसका लालन-पालन हुआ. जवान होने पर उसकी शादी के लिए कुछ रुपये कम पड़ रहे थे. काजल ने दस साल पहले 1500 रुपये का कर्ज़ लिया, जिसे उसने 10.80 प्रतिशत ब्याज दर से 125 रुपये की मासिक क़िश्तों में चुकाया. अगर उसने यह कर्ज़ किसी स्थानीय महाजन से लिया होता, तो उसे हर माह 150 रुपये केवल ब्याज के ही देने पड़ते. बीमारी, बुढ़ापा और ऑफ सीज़न में यौनकर्मियों को इन महाजनों पर ही निर्भर रहना पड़ता है. ये मनमाना नियम बनाते हैं और मनमाना सूद लेते हैं. मिसाल के तौर पर अगर कोई यौनकर्मी 500 रु का कर्ज़ लेती है तो उसे हर दिन 10 रुपये का ब्याज देना पड़ता है. करार के मुताबिक़ दो माह 12 दिन में कर्ज़ चुकाना होता है. अगर इस अवधि से दो-चार दिन भी ज़्यादा हो गये तो जुर्माना लगा दिया जाता है. चटा सूद प्रणाली में 100 रुपये के कर्ज़ पर 30 दिनों तक रोज़ 20 रुपये सूद के देने होते हैं और यह शर्त होती है कि राशि एकमुश्त चुकाई जाएगी. सोचिए अगर कोई यौनकर्मी 1000 का कर्ज़ ले तो उसका कितना आर्थिक शोषण होता होगा. वर्ष 1995 में दुर्वार महिला समन्वय समिति के गठन के साथ ऊषा मल्टीपर्पज़ सोसाइटी भी बनी. हालांकि इसके पंजीकरण में कई बाधाएं आयीं. सोसाइटी के गठन के लिए एक धारा है कि इसे खोलनेवालों का चरित्र अच्छा होना चाहिए. यौनकर्मियों ने विरोध किया कि अच्छे चाल-चलन या चरित्र की कोई तयशुदा परिभाषा नहीं है. इस विवाद को दूर किया बंगाल सरकार के तत्कालीन सहकारिता मंत्री सरल देव ने. इसके अलावा सोसाइटी कम से कम 50 हज़ार रुपये की शुरुआती रक़म जमा करने के बाद ही शुरू की जा सकती है, पर यौनकर्मियों के पास महज़ सात हज़ार रुपए थे. मंत्री महोदय व सरकार के मानवतावादी रुख़ के चलते सोसाइटी का गठन हो पाया. इस तरह वेस्ट बंगाल को-आपरेटिव सोसाइटी एक्ट 1983 के तहत 1995 में सोसाइटी के गठन के बाद के तीन सालों में सदस्य संख्या 13 से बढ़कर 125 हो गयी. मार्च 1997 में सोसाइटी का मुनाफा 25, 343 रुपए दर्ज़ किया गया. वर्तमान में सोसाइटी का कुल कारोबार लगभग 11 करोड़ रुपए का है. पिछले 31 जुलाई तक कुल 3222 यौनकर्मियों ने ढ़ाई करोड़ का कर्ज़ लिया था. अब इसके सदस्यों की संख्या 12884 तक पहुंच गयी है. सोसाइटी की कार्यकारी पूंजी करीब सवा आठ करोड़ की है. सोसाइटी की सचिव ममता नंदी ने बताया कि पूरे राज्य में इसकी 12 शाखाएं खोलने की योजना है. 12 साल पहले केवल 13 सदस्यों को लेकर शुरू की गयी सोसाइटी के सदस्यों की संख्या 20 हज़ार करने का लक्ष्य रखा गया है. सोनागाछी प्रोजेक्ट के निदेशक डॉ समरजीत जाना ने चौथी दुनिया को बताया कि दुर्गापूजा के बाद कूचबिहार, दीनहाटा, अलीपुरद्वार, इस्लामपुर और कांजीपाड़ा में सोसाइटी की शाखाएं चालू हो जायेंगी. डॉ जाना ने यह भी बताया कि दुर्वार महिला समन्वय समिति की इस सोसाइटी ने बारुईपुर में 15 एकड़ ज़मीन ख़रीदी है, जिसमें आर्गेनिक खेती के अलावा मुर्गी व बत्तख पालने की भी योजना है. इस कार्य में उन यौनकर्मियों को शामिल किया जायेगा, जो उम्र या बीमारी के कारण अक्षम हो चुकी हैं. इस तरह सोसाइटी ने यौनकर्मियों की उन दिक़्क़तों को दूर किया है, जो किसी दूसरे बैंक में ख़ाता खोलने के दौरान आती हैं. अब सोसाइटी की लेन-देन कंप्यूटराइज्ड की जा रही है. हालांकि सामान्य बैंक की तुलना में इसके नियम क़ायदों में काफी रियायत दी गई है. कुछ ऐसी यौनकर्मी हैं जो लिख-पढ़ नहीं सकतीं, वे लेन-देन में अंगूंठे के निशान लगाती हैं. जिन यौनकर्मियों ने बैंक में ख़ाता खोलना चाहा, उनमें बहुत कम ही कामयाब हो पाईं, क्योंकि यौनकर्मियों का परिचय कराने के लिए कोई तैयार नहीं होता. इस हाल में सोसाइटी ने यौनकर्मियों की ज़िंदगी में एक नया रंग भरा है. सोसाइटी की मदद से सोनागाछी में कंडोम का प्रयोग बढ़ा है और एचआईवी का ख़तरा भी कम हुआ है. अब ज़्यादातर यौनकर्मी नो कंडोम, नो सेक्स के नारे को लागू कर रही हैं, जो पहले आमदनी कम हो जाने के डर से संभव नहीं था. यौनकर्मियों की नेटवर्किंग विभाग के प्रमुख मृणल कांति दत्त ने बताया कि सोसाइटी की एक बासंती सेना भी है, जो यौनकर्मियों को सुरक्षित यौन संपर्क का संदेश देती है. सस्ते दर पर सामान मुहैया कराने के लिए डिपार्टमेंटल स्टोर और देह व्यापार छोड़ने वाली यौनकर्मियों के लिए स्व-रोज़गार मुहैया कराने के लिए कुछ योजनाएं बनाई गई हैं, जिन्हें केंद्र सरकार व अन्य स्वयंसेवी संगठनों को भेजा जाना है. इस तरह पुलिस, गुंडों, नेताओं और महाजनों की चांडाल चौकड़ी में फंसी यौनकर्मियों ने अपनी तस्वीर बदलने की जो जिद की, उसके कुछ अच्छे परिणाम भी दिख रहे हैं. सोनागाछी की यौनकर्मियों की आबादी की तुलना में सोसाइटी की पहुंच आधी से भी कम भले ही हो, पर इसने एक उम्मीद की एक लौ जलाई है. सोसाइटी का नारा भी है- राखछी टाका, गड़छी दल, बाड़छे सबार, मनेर बल. (हम पैसा जमा कर रहे हैं, सामुदायिक भावना जगा रहे हैं, इससे सबका मनोबल बढ़ रहा है)

feedback@chauthiduniya.com

भारत में एचआईवी-एड्स : एक व्यापक परिदृश्य

संकीर्ण सोच, आंकड़ों की बाज़ीगरी और ग़रीबी

रूपा चिनॉय

एचआईवी पॉजिटिव होने का मतलब मौत नहीं है. यह शरीर के लिए एक रेड-अलर्ट चेतावनी है कि प्रतिरोधक क्षमता को जल्द ही दुरुस्त करने की ज़रूरत है. साथ ही, इस परिवर्तित जीवन-शैली के लिए सही खानपान के माध्यम से पोषक-तत्वों की ज़रूरत तो है ही, सामाजिक-स्तर पर सहयोग की भी आवश्यकता है. भारत सरकार द्वारा एड्स संबंधी कार्यक्रमों पर काफी अधिक पैसा ख़र्च करने के बावजूद, यह लोगों को तक अपनी बात पहुंचाने में नाकामयाब रहा है. इसके डराने वाले संदेशों की वजह से ही कई एड्स रोगियों ने आत्महत्या तक कर ली. इसके प्रति अज्ञानता और पूर्वाग्रहों से निपटने के लिए जागरूकता भरे सार्वजनिक बहस की ज़रूरत है.

5 अगस्त 2008 को मुंबई में एचआईवी पोजीटिव के शिकार बाबू ईश्वर (39) और अमोथी(33) युवा जोड़े ने 6 से 10 साल के अपने तीन बच्चों की हत्या करने के बाद ख़ुद आत्महत्या कर ली. वह भी सर्फ इस बात पर कि यह घातक वायरस उनके सबसे छोटे बच्चे में है.

यह बीमारी होने से पहले ही एड्स का कलंक कईयों की जान ले चुका है, लेकिन ऐसी आत्महत्याएं और इसके पीछे की वजहें शायद ही सार्वजनिक तौर सामने आ पाती है. शरीर की प्रतिरोधक पद्धति और इसे प्रभावित करने में एड्स एक महत्वपूर्ण कड़ी है. समाज में इस बीमारी के बारे में कम जानकारी होने की वजह से निर्दोष लोगों को, इसकी काफी ख़ौफनाक क़ीमत चुकानी पड़ रही है.

अभी जबकि हम इसके इलाज के बारे में कुछ नहीं जानते, ऐसे में इसके कारणों का पता लगाना काफी मुश्किल है. इसके इलाज का पता लगाने के लिए दूसरी किसी भी बीमारी की अपेक्षा सबसे अधिक वित्तीय सहायता मिलने के बाद भी कुछ हासिल नहीं हो पाने की वजह से अब पूरी दुनिया में तेज़ी से इस पर सवाल खड़े होने लगे हैं. काफी लंबे समय से चले आ रहे इस मसले का कोई ठोस समाधान निकलना चाहिए. हमारा प्रयास है कि बाबू और अमोथी थेवर जैसे परिवार की जान बचाने के लिए इसका समाधान ढूंढने की ज़रूरत है.

व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य

मैंने बोस्टन के हवॉर्ड स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्थ से जर्नलिस्ट फेलोशिप की पढ़ाई साल 1993 मे पूरा किया, उसके बाद पब्लिक हेल्थ के क्षेत्र में प्रतिष्ठत अंतरराष्ट्रीय अनुभव रखने वाले डॉ जोनाथन मन जैसे विशेषज्ञ शिक्षकों से काफी प्रभावित हुआ. उनका मानना था कि एड्स जैसी नई बीमारियों का होना, इन बीमारियों और ग़रीबी के बीच के संबंधों, संपूर्ण स्वास्थ्य प्रणाली के कामकाज की जांच की ज़रूरत, रोकथाम वाली स्वास्थ्य सूचनाओं की आम लोगों तक पहुंच और इसके सभी शारीरिक, मानसिक और सामाजिक पहलुओं की सहयोग जैसी मूलभूत मुद्दों की जांच के लिए एक बेहतर अवसर हैं.

मुंबई में रहते हुए एचआईवी और एड्स महामारी की कई ख़ुलासों का मैं गवाह रही हूं कि कैसे यह भारत की एड्स राजधानी बना और दशकों से इस पर बड़े पैमाने से रिपोर्ट बनाए गए. उस समय, पूरा चिकित्सा समुदाय इस बीमारी के इलाज करने से हिचकते थे. नतीजतन, रोगी एक छोटे चिकित्सक समुदाय के चुंगल में फंसे गए, जिन्होंने उन रोगियों को डराने-धमकाने और यहां तक कि वे अपने मरीजों पर अवैध टीकों के परीक्षण का भी कोई अवसर नहीं छोड़ा. किसी तरह का सहयोग का न मिल पाने के कारण एचआईवी पीड़ित, एचआईवी मतलब मौत समझने लगे. शुक्र है, जब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यह सुर्ख़ियों में आया और कई चिकित्सकों के समूह और ग़ैर-सरकारी संगठनों ने इन रोगियों के इलाज के लिए अपनी इच्छा जताई ,तब कहीं उन चिकित्सकों के चुंगल से ये आज़ाद हुए जो उनको डराते और उन पर अवैध टीकों का परीक्षण करते थे. पब्लिक हेल्थ के क्षेत्र में भारत में बहुत ही कम, लेकिन कुछ ऐसे महत्वपूर्ण समुदाय हैं जो एड्स के प्रति जागरूकता लाने का काम कर रहे हैं. उनमें से अधिकांश ने हाशिए पर रहे समुदाय, व्यापक समुदाय और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को महत्वपूर्ण सूचना मुहैया की है. यह प्रक्रिया उन लोगों को जागरूक बनाती है जो पहले चुप और उपेक्षित थे, साथ ही उनको भी जिन्हें प्राथमिक स्तर पर सहयोग की ज़रूरत है.

हालांकि, उस व्यापक क्षति की तुलना में यह एक छोटी सफलता है. भारत के सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्र में एचआईवी-एड्स के प्रति संकीर्ण और घटिया सोच घर कर चुकी है. इसके इलाज के विस्तार के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य आधारित एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाए जाने की तत्काल ज़रूरत है, ताकि विकासशील देशों में जहां एक आम आदमी पहले ही दूसरी बीमारियों के बोझ तले दबा जा रहा है, इसका लाभ उठा सके. प्राथमिक स्वास्थ्य प्रणाली में सुधार से एड्स सहित अन्य घातक बीमारियों से निपटने में व्यापक असर पड़ेगा.

आंकड़ों की बाज़ीगरी

भय और अदूरदर्शी भरे इस माहौल में कई मिथक पैसा कमाने का ज़रिया भी बने. ख़ासतौर पर एड्स से मरने वाले की संख्या काफी बढ़ाचढ़ा कर पेश की गई. एड्स प्रभावित लोग मक्खियों की तरह मरेंगे, इस तरह की कई चेतावनियां पिछले दो दशकों में सुने और देखे गए. केंद्रीय जांच एजेंसियों, ज्वाइंट यूनाइटेड नेशन्स प्रोग्राम ऑन एचआईवी एंड एड्स और विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुमानित आंकड़ों के मुताबिक भारत में एड्स के लगभग पांच से बीस मिलियन मामले हैं. जिन स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय समूहों ने इन संख्याओं पर सवाल उठाए, उन्हें काफी आलोचना का सामना करना पड़ा.

अंतत: अनुमान ही सही साबित हुआ. किस तरह एड्स लॉबी ने लोगों को गुमराह किया बग़ैर इसे स्वीकार किए ही वह अपनी पटरी से उतर गया. यूएनएआईडीएस के मुताबिक पूरी दुनिया में एचआईवी की अनुमानित संख्या 39.5 मिलियन से घटकर 33.5 मिलियन हो चुकी है. लेकिन फिर भी एड्स से निपटने के लिए 2010 तक 9 मिलियन डॉलर से बढ़ाकर 42 मिलियन डॉलर और 2015 तक के लिए 54 मिलियन डॉलर रुपए की मांग की जा रही है.

भारतीय नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे ने सामान्य सामुदायिक स्तर पर इन आंकड़ों की हक़ीक़त से जुड़ी रिपोर्ट पेश किया और जिसकी वजह से अंतरराष्ट्रीय एजेंसियां को उन आंकड़ों को कम करने पर मज़बूर होना पड़ा. एक अनुमान के मुताबिक भारत में एचआईवी-एड्स की कुल संख्या 2.5 मिलियन है, जबकि पहले भारत सरकार की अनुमानित आंकड़ों के हिसाब से इससे प्रभावित लोगों की संख्या 5 मिलियन से भी अधिक थी.

पूरी दुनिया में 3.7 फीसदी लोगों की मृत्यु एचआईवी से होती है जबकि सभी स्वास्थ्य सेवाओं का 25 फीसदी अनुदान इसे मिलता है. इसके अलावा, घरेलू ख़र्च का एक बड़ा हिस्सा इस पर ख़र्च किया जाता है, जबकि विकासशील देशों में स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार के लिए काम करने वाले हेल्थ सिस्टमस वर्कशॉप के अध्यक्ष रॉबर्ट इंगलैंड के मुताबिक यह घरेलू स्वास्थ्य बजट के हिसाब से कहीं ज़्यादा है.

ऐसे बड़े-बड़े अनुमान कैसे लगभग पहले स्थान पर आ गए, इनका विश्लेषण काफी महत्वपूर्ण है. साथ ही यह भी कि किस तरह बिना किसी जांच-पड़ताल के अधिकारियों ने उसे स्वीकार भी कर लिया. इसकी ज़मीनी हक़क़ीत और इस बीमीरी के संदर्भ में भारत के वास्तविक अनुभवों का पता लगाना, हमारे लिए काफी महत्वपूर्ण है.

जेनेवा में साल 2008 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने एशियन और अफ्रीकन पत्रकारों के साथ एक वर्कशॉप के दौरान इन त्रुटिपूर्ण आंकड़ों के लिए संबंधित देशों को ही ज़िम्मेदार ठहराया. संगठन ने बताया कि डब्ल्यूएचओ के पास इन आंकड़ों की निगरानी के लिए कोई तंत्र नहीं है और यह आंकड़ा भारत सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई सूचनाओं पर ही आधारित था. दिल्ली और वाशिंगटन के नीति-निर्धारकों ने विकासशील देशों की स्थानीय भौगोलिक और सांस्कृतिक परंपराओं की स्वास्थ्य-ज़रूरतों को बग़ैर ध्यान में रखे ही एक वैश्विक मानदंड लागू कर दिए थे.

भारतीय एचआईवी-एड्स निगरानी प्रणाली ने ये नमूने, क्लिनिक्स फॉर एनटेनटल मदर्स, एसटीडी(सेक्सुअली ट्रांसमिटेड डिजीज़) उपचार केंद्र, ब्लड बैंक और पुरुषों के साथ यौन संबंध रखने वाले के लिए (एमएसएम) काम करने वाले ग़ैर सरकारी संगठनों, सेक्स वर्कर्स और उनके ग्राहकों से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर तैयार किया.

इन स्रोतों से लिए गए नमूनों की समस्या यह है कि ये समाज के आम वर्गों का प्रतिनिधित्व नहीं करते. वे अधिक जोखिम वाले समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं. हालांकि, जो महिलाएं सरकारी प्रसव अस्पतालों में आई थीं वे आम समाज से तो थीं, लेकिन वे भी निम्न आर्थिक-सामाजिक स्तर वाले समूहों का प्रतिनिधित्व करती हैं. इन नमूनों में कई ख़ामियां हैं, जो पूरे हालात की सही तस्वीर पेश नहीं करते.

आम रोगी भारत में जो शहरी-सार्वजनिक क्षेत्र की सेवा के लिए आए थे, वे प्रवासी हैं और शहरों में वे तनावपूर्ण हालातों में ज़िंदगी जी रहे हैं. वे कुपोषण और बीमारी से ग्रसित हैं जिससे उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित होती है. अगर उनका एचआईवी परीक्षण किया जाए तो उसके नतीजे नकारात्मक आने की पूरी संभावना है क्योंकि विकासशील देशों में संक्रमण के कई और वजह भी होते हैं. सार्वजनिक क्षेत्र से लिए गए आंकड़े भारत की एक अलग तस्वीर पेश करती है. एक अध्ययन के मुताबिक 70 फीसदी भारतीय अपने इलाज के लिए सबसे पहले निजी अस्पतालों का रूख़ करते हैं. ऐसा इसलिए कि सार्वजनिक क्षेत्रों द्वारा उपलब्ध कराए गए प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा पूरी तरह उपेक्षित और बर्बाद हो चुके हैं. पैसों के अभाव में अथवा ग़लत इलाज की वजह से उन्हें सरकारी अस्पतालों में रेफर किए जाने पर या किसी छोटे इलाज की स्थिति आने पर ही वे सरकारी अस्पतालों में जाते हैं. इस तरह, एचआईवी-एड्स निगराणी प्रणाली की तु-लनात्मक आंकड़ों से भारत की बड़ी आबादी ग़ायब है. और जो भी यहां आते हैं वे अच्छी तरह स्वस्थ और तंदुरूस्त हैं. उन पर किया गया एचआईवी परीक्षण अलग नतीजे दे सकते हैं.

मुंबई के सभी प्रमुख निजी अस्पतालों में जिन मरीजों ने दाख़िले के समय एचआईवी परीक्षण कराए उनके आंकड़े आसानी से उपलब्ध हैं. एक निजी अस्पताल के प्रशासक ने तो अपने यहां मौजूद एचआईवी रोगियों की संख्याओं को बताया भी, जो अधिक नहीं थे. उन रोगियों की भी संख्या कम है जो शहरों के निजी अस्पतालों में इसकी बदनामी की वजह से अपना इलाज कराने नहीं आते. यह बेहद ही आश्चर्य की बात है कि राष्ट्रीय गणना प्रणाली (नेशनल सर्विलेंस सिस्टम) ने ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्र के आंकड़ों को छोड़ दिया.

आख़िर क्यों शोधकर्ता और वैज्ञानिक सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में एचआईवी-एड्स प्रभावित लोगों के आंकड़ों की तुलना में दिलचस्पी नहीं लेते ? और समाज के ग़रीब तबके की तुलना में खाते-पीते और अमीर वर्ग के लोगों को एड्स और दूसरी बीमारियों के संक्रमण का ख़तरा कम क्यों रहता है?

5 अगस्त 2008 को मुंबई में एचआईवी पॉजिटिव के शिकार बाबू ईश्वर (39) और अमोथी(33) युवा जोड़े ने 6 से 10 साल के अपने तीन बच्चों की हत्या करने के बाद ख़ुद आत्महत्या कर ली. वह भी सिर्फ़ इस बात पर कि यह घातक वायरस उनके सबसे छोटे बच्चे में है.

feedback@chauthiduniya.com

ग्रामीण भारत और एचआईवी की रोकथाम

इरशाद अहमद

भारत में जिस तरह से एड्स की बीमारी अपने पांव पसार रही है, उससे लोगों की चिंता बढ़नी स्वाभाविक है. शहर तो शहर, अब भारत के गांवों में भी यह बीमारी पूरी तरह दस्तक दे रही है. यही वजह है कि अब ग्रामीण भारत में भी इससे निबटने के लिए पंचायत प्रतिनिधियों और महिला सदस्यों ने इसके ख़िलाफ़ कमर कस ली है. मुरादाबाद ज़िले के कई गांवों की पंचायत प्रतिनिधियों ने कार्यशाला वग़ैरह कर गांववालों को जागरूक करने के प्रयास शुरू कर दिए हैं. इनमें से ही एक अगवानपुर गांव की महिला प्रधान कमला देवी का कहना है कि उनको मालूम है कि एचआईवी एड्स काफी तेज़ी से बढ़ रहा है. लोगों का प्रतिनिधि होने के नाते हमारी यह ज़िम्मेदारी बनती है कि इसकी रोकथाम के लिए हम लोगों को जागरुक करें. 49 वर्षीय कमला देवी सहित कई महिला प्रधानों का मानना है कि जागरुकता से ही ग्रामीणों में इस महामारी को फैलने से रोका जा सकता है. उनका मानना है कि महिलाओं को ख़ुद को चारदीवारी के ही अंदर बंद नहीं रखना चाहिए, बल्कि समाज सेवा के लिए भी आगे आना चाहिए. ख़ुद का उदाहरण देते हुए कमला देवी ने बताया कि बचपन से ही उन्हें समाज सेवा में दिलचस्पी थी लेकिन शादी के बाद शुरुआत में वह घर तक ही सीमित रहीं, पर धीरे-धीरे उनके पति ने उनकी नेतृत्व क्षमता और समुदाय के कल्याण के लिए काम करने की इच्छा को महसूस किया. उसके बाद उन्हें स्थानीय राजनीति में प्रवेश के लिए प्रोत्साहित किया. फिर कमला देवी ने चार साल तक पंचायत सदस्य के तौर पर काम किया. भारतीय संविधान के 73 वें संशोधन अधिनियम के तहत 1993 में गांव से लेकर ज़िला स्तर तक एक तीन स्तरीय शासन प्रणाली की व्यवस्था शुरू की गई. इस क़ानून के तहत, ग्राम पंचायत स्तर पर महिलाओं को आरक्षण दिया गया. ज़मीनी स्तर पर महिलाओं को आरक्षण देना इस दिशा में पहला संवैधानिक क़दम था. इस क़ानून में राज्यों के ढांचे को बदलने की क्षमता थी. रसोईघर से लेकर पंचायतों तक की पहुंच ने अनिच्छा से ही सही, लेकिन उनकी नेतृत्व क्षमता को स्वीकार करने पर लोगों को मज़बूर किया. पंचायत नेताओं के तौर पर उनकी पहचान सक्रिय नागरिकों के रूप में हो रही है. जब अगवानपुर पंचायत को महिलाओं के आरक्षित घोषित किया गया, तब कमला देवी प्रधान की चुनाव लड़ी और जीत भी गईं. शुरुआत में कमला देवी को कर्तव्यों के निर्वाह में कुछ दिक़्क़तें आईं, लेकिन बहुत जल्द ही उन्होंने अपने मजबूत संकल्प से इस चुनौती को पार कर लिया और पिछले चार साल से सफल प्रधान के रूप में काम कर रही हैं. कमला देवी ने कहा कि प्रधान बन जाने के बाद मैं अपने बच्चों के सपने को पूरा कर सकती हूं. एक एनजीओ एसएआरडीएस, जो कार्यशाला और प्रशिक्षण के माध्यम से एचआईवी-एड्स की रोकथाम में लोगों को जागरूक कर रहा है और विभिन्न परियोजनाओं को भारतीय समाज के पिछड़े वर्गों में लागू कर रहा है. इसके द्वारा आयोजित कार्यशाला में भाग लेने के बाद कमला देवी ने लोगों को एचआईवी-एड्स के कारण और उसके प्रभाव के बारे में बताकर एक नई पहल की. महिलाओं को एक नहीं, कई स्तरों पर समस्याओं का सामना करना पड़ता है. उन्हें स्वास्थ्य-संबंधी समस्या के साथ-साथ बच्चों को कुपोषण, बाल विवाह, घरेलू हिंसा और अवैध व्यापार का सामना करना पड़ रहा है. आईसीडीएस के माध्यम से प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधा, आजीविका के लिए नरेगा का प्रावधान और एचआईवी को रोकने के लिए लोगों को जागरूक किया जा रहा है, पिछले कुछ वर्षों से मुरादाबाद के गांवों में इसके लिए मुख़र आंदोलन चलाया जा रहा है.

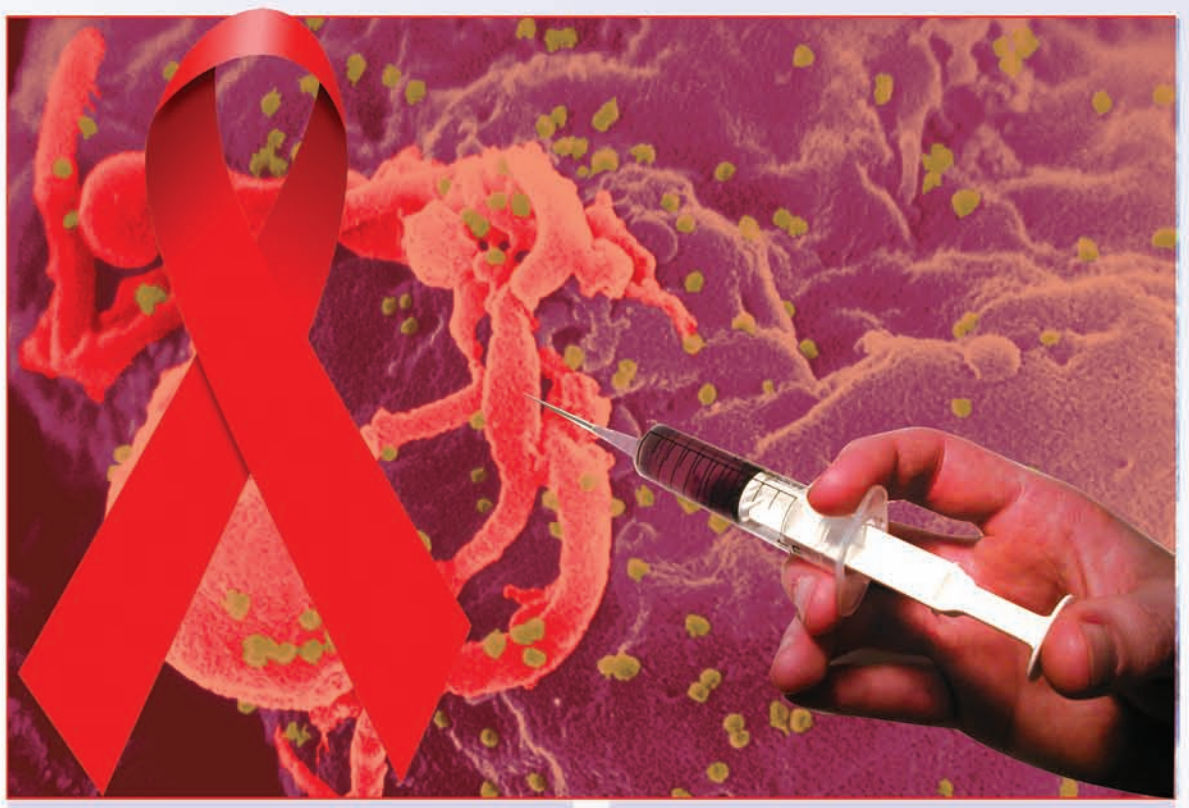

उत्तरप्रदेश में सबसे अधिक जोख़िम (एचआईवी-एड्स के नज़रिए से) वाले ज़िला मुरादाबाद की इस महिला प्रधान ने पारंपरिक मानसिकता और घिसी-पिटी सामाजिक मान्यताओं को अपनी कार्यक्षमता से लगातार चुनौती दी है. हालांकि, इनके लिए एचआईवी-एड्स जैसी समस्याओं से जूझना कोई नई बात नहीं थी. फिर भी उसे विभिन्न जाति और मान्यताओं वाले समुदाय में प्रचलित इससे संबंधित मिथकों और इस पर लगे कलंकों का सामना करना था. इसके प्रति प्रतिबद्धता ने ही उसे इन चुनौतियों से लड़ने में मदद की. वह स्वीकार करती हैं कि सोसायटी फॉर ऑल राउंड डेवलपमेंट (एसएआरडी) के प्रयासों ने इसके लिए प्रतिबद्ध होने में मदद की. वे कहती हैं कि इस संगठन द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यशाला में उनके साथ कई महिला प्रधानों ने भाग लिया. जिसमें सभी को एचआईवी और एड्स से जुड़े कई आयाम और उससे हमारे गांव को होने वाले ख़तरे को बताया गया.

सोसायटी फॉर ऑल राउंड डेवलपमेंट (एसएआरडी) ऑक्सफेम इंडिया के सहयोग से चलने वाला राष्ट्रीय-स्तर का एक ग़ैर-सरकारी संगठन है. जो उत्तरप्रदेश के बांदा, मऊ, इटावा, देवरिया और मुरादाबाद ज़िलों के सभ्य समाजों सहित चुनिंदा मंत्रालयों, विभागों, औद्योगिक घरानों और उनके संबंधित कार्यक्षेत्रों की मदद से मेनस्ट्रीमिंग एचआईवी-एड्स इंटरवेंशन्स परियोजना को प्रभावशाली तरीक़े से लागू कर रहा है. परियोजना का उद्देश्यएच आईवी मुख्य-धारा को सरकारी कार्यालयों और नेताओं, नीति-निर्धारकों और दूसरे कार्यकर्ताओं सहित छह मंत्रालयों तक अपनी पहुंच बनाता है, ताकि एचआईवी और सेक्सुअल एंड रिप्रोडक्टिव हेल्थ (एसआरएच) से जुड़ी सूचनाओं तक पहुंच के लिए एक अच्छा माहौल बन सके. एसएआरडी के सीईओ सुधीर भटनागर का मानना है कि इसकी शुरुआत आईसीटीसी, एआरटी केंद्रों, एएससीएस और एचआईवी नेटवर्किंग समूहों जैसे विभागों, सरकारी प्रयासों की सदद से एक एचआईवी और लिंग नीति बनाकर की जा सकती है. जिससे परियोजना में अच्छे नतीजे हासिल किए जा सकते हैं. संगठन का मानना है कि विभिन्न विकास प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरूप ही एचआईवी-एड्स की वजह है. इसलिए एक प्रभावी और कुशल नज़रिया से ही इसका समाधान खोजा जा सकता है. इस परियोजना ने इन पंचायती राज संस्थाओं को ग्रामीण और ताल्लुका स्तर पर जागरूकता फ़ैलाने में काफी मदद मिली. संगठन का मानना है कि इन पीआरआई सदस्यों को गांवों में एचआईवी के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए काफी सक्रिय भूमिका निभाने की ज़रूरत है.

कमला देवी ने वॉल-पेंटिंग जैसी कई दूसरे पहलों के साथ इस बीमारी से ग्रामीणों को जागरूक करने का काम किया है और उन जैसी कई महिला पीआरआई में इसकी समझ एसएआरडी-ऑक्सफेम द्वारा दिए गए प्रशिक्षण के माध्यम से आई. इन वॉल-पेटिंग के ज़रिए लोगों तक जागरूकता संदेश पहुंचाने में काफी मदद मिली है. इसके लिए महिला प्रधानों ने उन वॉल-पेंटिंग को ऐसी जगह लगाया कि सभी इस जानकारी से अवगत हो सकें. वॉव-पेंटिंग के अलावा उन्होंने ग्राम-सभा और घर-घर तक जा कर भी एचआईवी और एड्स के प्रति लोगों को जागरूक बनाने का अभियान चलाया. इस दौरान शहरों से गांवों में आए लोगों को उन्होंने नियमित एचआईवी जांच के लिए भी प्रोत्साहित किया. महिला ग्राम प्रधानों ने बताया कि ऐसे पहल की वजह से ही गांव वाले ख़ासकर महिलाएं एचआईवी-एड्स की रोकथाम और उसके प्रति जागरूक हो रही हैं. एक ग्राम-सभा के दौरान महिला प्रधानों ने गर्व से कहा कि आज अगवानपुर ग्राम पंचायत इस महामारी से निपटने के लिए जागरूक और सक्षम है.यह धीरे-धीरे हो रहा है, लेकिन बदलाव की प्रक्रिया चल रही है. ऑक्सफेम इंडिया की कार्यक्रम अधिकारी रिचा कालरा कहती हैं, संभवत: इस समस्या ने हमें अधिक भयभीत नहीं किया है, लेकिन हम इससे भी लड़ने के लिए तैयार हैं. रसोई से पंचायतों तक, ये महिलाएं परिवार और समुदायों में लैंगिक संबंधों की स्थिति बदलने की शुरुआत भर हैं. हालांकि, ऐसी ऐतिहासिक पहल महिला पीआरआई की मदद से की गई है, लेकिन एसएआरडी को लगता है कि एचआईवी-एड्स के प्रसार को रोकने के लिए और भी कड़े क़दम उठाए जाने की ज़रूरत है.

(लेखक डेवलपमेंट कम्युनिकेशन कंसल्टेंट हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

एड्स के ख़िलाफ़ महिला प्रधान सक्रिय...

मुरादाबाद ज़िले के चौधरपुर पंचायत की 44 वर्षीय महिला प्रधान नीता देवी ने एसएआरडी-ऑक्सफैम द्वारा एचआईवी-एड्स पर आयोजित दो परीक्षण कार्यशाला में हिस्सा लिया और वह बड़े गर्व से कहती हैं कि एचआईवी-एड्स पर आयोजित प्रशिक्षण में अपने ज़िले से भाग लेने वाली वह पहली महिला प्रधान थीं.

उत्तरप्रदेश के मुरादाबाद ज़िले में, ख़ासकर गांवों में एचआईवी-एड्स की रोकथाम से जुड़े मुख्य-धारा के लोग महिला पंचायती राज सदस्यों (पीआरआई) को जवाबदेह बनाने की क़वायद में लग गए हैं. ग़ौरतलब है कि तेज़ी से फैल रहे इस बीमारी से ग्रामीणों को बचाने के लिए महिला प्रधान सभी ज़रूरी क़दम उठा रही हैं. मुरादाबाद ज़िले के चौधरपुर पंचायत की 44 वर्षीय महिला प्रधान नीता देवी ने एसएआरडी-ऑक्सफैम द्वारा एचआईवी-एड्स पर आयोजित दो परीक्षण कार्यशाला में हिस्सा लिया और वह बड़े गर्व से कहती हैं कि एचआईवी-एड्स पर आयोजित प्रशिक्षण में अपने ज़िले से भाग लेने वाली वह पहली महिला प्रधान थीं. इस प्रशिक्षण का मक़सद निर्वाचित पंचायती राज महिला सदस्यों को स्थानीय स्तर पर एचआईवी-एड्स की गंभीरता और इसके विभिन्न पहलुओं से अवगत कराने के साथ-साथ उन्हें इस महामारी से निपटने के लिए उनकी ज़िम्मेदारियों से वाक़िफ़ कराना था.

इस प्रशिक्षण के दौरान महिला प्रधानों को देश में एचआईवी-एड्स की मौजूदा हालात के बारे में भी बताया गया. साथ ही उनके राज्य, ख़ासतौर पर औद्योगिक ज़िले मुरादाबाद में इसकी स्थिति के बारे में भी उन्हें जानकारी दी गई. उन्हें यह भी बताया गया कि इस तरह के अधिक जोख़िम वाले समूह उद्योगों में मौजूद हो सकते हैं और कैसे एचआईवी-एड्स किसी व्यक्ति और औद्योगिक कार्यक्षमता को प्रभावित करता है. नीता देवी कहती हैं कि अब मुझे पता चला कि, एचआईवी एक विषाणु (वायरस) है जो किसी एचआईवी संक्रमित व्यक्ति में पाया जा सकता है. इसके संक्रमण से कोई दूसरा भी प्रभावित हो सकता है. हमें यह भी पता चला है कि यौन संचरित संक्रमण (एसटीआई) और प्रजनन संक्रमण (आरटीआई) दोनों अलग-अलग कारक हैं. साथ ही यह भी कि किसी व्यक्ति में एसटीआई की वजह से एचआईवी-एड्स होने की संभावना तीन से दस गुणा अधिक होती है. हमें आरटीआई और एसटीआई के लक्षणों और इसके लिए चिकित्सीय सलाह लेने के बारे में भी बताया गया. संक्रमण के चार तरीक़ों में से किसी के भी द्वारा यह फैल सकता है, इस लिहाज से महिला और पुरुष दोनों में संक्रमण का ख़तरा अधिक होता है. इस शिविर में रोग प्रतिरोधक उपचार(एआरटी) और हमारे ज़िले में मौजूद एआरटी केंद्रों की सूची के बारे में भी बताया गया...अब हम यह भी जानते हैं कि इसकी जांच मुफ़्त होती है और इसकी जानकारी भी गुप्त रखी जाती है.

एचआईवी-एड्स की रोकथाम के लिए इस प्रशिक्षण ने महिला प्रतिनिधियों को इसके इलाज और एचआईवी पॉज़िटिव लोगों के सहयोग में पंचायतों की भूमिका समझने में काफी मदद की.

प्रशिक्षण के दौरान इन महिला पीआरआई सदस्यों से कुछ गतिविधियां कराने को कहा गया, जिसके माध्यम से वह एचआईवी की रोकथाम, संक्रमित लोगों और उनके परिवार की देखभाल पर जानकारी बांट सकें. सबसे अधिक सक्रिय भागीदारों में एक नीता देवी ने कई जागरूकता भरे कार्यक्रम आयोजित करने और लोगों को एकीकृत परामर्श और जांच केंद्रों (आईसीटीसी) पर एचआईवी की जांच के लिए प्रोत्साहित करने का वादा किया. इसके अलावा महिला पीआरआई सदस्यों ने चौपाल और मासिक बैठकों के ज़रिए पंचायत स्तर पर जागरूकता भरे संदेशों के प्रसार के लिए भी अपनी प्रतिबद्धता जताई. साथ ही ग्रामीण युवक-युवतियों को भी एचआईवी-एड्स से जागरूक करने की बात कही.

भारतीय समाज में हाशिए पर चले गए समुदाय को जागरूक करने के लिए प्रशिक्षण, कार्यशाला और कई कार्यक्रम चलाने वाले ग़ैर-सरकारी संगठन द्वारा दिए गए.

प्रशिक्षण से पर्याप्त जानकारी हासिल करने के बाद आज नीता देवी एचआईवी-एड्स की रोकथाम के लिए लोगों को जागरूक करने वाले कार्यक्रमों की अगुआई कर रहीं हैं.

उनके नेतृत्व में चौधरपुर जैसे गांव एचआईवी-एड्स के प्रति न केवल जागरूक हो रहे हैं, बल्कि इस बीमारी से जुड़े मिथकों और कलंकों को दूर करने में भी कारगर साबित हो रहे हैं. मैं इस बात से आश्वस्त हूं कि इन महिला समूहों की पहुंच एचआईवी-एड्स की रोकथाम से जुड़ी सूचनाओं तक है और वे इन्हें दूसरी ग्रामीण महिलाओं तक भी पहुंचा रही हैं. नीता देवी गांवों में स्कूल शिक्षक, आंगनवाड़ी और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के सहयोग के लिए हमेशा तैयार रहती हैं. वह बताती हैं- महिलाओं और बच्चों के लिए सामुदायिक स्वास्थ्य की पहल के कारण अब गांव वाले अपने जीवन की गुणवत्ता सुधारने के लिए स्वास्थ्य की महत्ता समझने लगे हैं. अपने इन्हीं प्रयासों की वजह से, मुरादाबाद के सुदूर क्षेत्रों में एचआईवी-एड्स की रोकथाम के लिए आत्मविश्वास, साहस और बुद्धिमत्ता से काम करने वाली नीता देवी आज अपने समुदाय और पंचायत के लिए आदर्श बन चुकी हैं.

इरशाद अहमद

feedback@chauthiduniya.com

एम जे अकबर

सबसे आवश्यक, एक मज़बूत विपक्ष

भारतीय जनता पार्टी ने चूंकि 1947 पर अपनी बहस ख़त्म नहीं की है, तो ज़ाहिर तौर पर 2009 तक पहुंचने में उसे कुछ वक़्त लगेगा. वामदलों के तटस्थ होने के साथ और मध्यमार्गी दलों के अपनी ही पूंछ का पीछा करते रहने के बीच, मतदाताओं के बीच भला और क्या विकल्प बच जाते हैं?

वामदल अगर गंभीर रहते, तो उनको गंभीरता से लिया जा सकता था. इससे एक बहुप्रचारित कहावत की याद आती है. वह कुछ यों है कि हमेशा समय पर रहनेवाले कॉमरेड गोर्बाचेव-जिन्होंने इतनी अधिक मेहनत की कि पूरे सोवियत संघ को ही ढाह दिया-एक बार फ्रेंच प्रतिनिधिमंडल से मुलाक़ात करने में समय पर नहीं पहुंच पाए. उन्होंने अपने अतिथियों को सफाई देते हुए कहा कि खेती की एक समस्या की वजह से उनको देर हो गई. जब फ्रेंच

> वामदल अगर गंभीर रहते, तो उनको गंभीरता से लिया जा सकता था. इससे एक बहुप्रचारित कहावत की याद आती है. वह कुछ यों है कि हमेशा समय पर रहनेवाले कॉमरेड गोर्बाचेव-जिन्होंने इतनी अधिक मेहनत की कि पूरे सोवियत संघ को ही ढाह दिया-एक बार फ्रेंच प्रतिनिधिमंडल से मुलाकात करने में समय पर नहीं पहुंच पाए. उन्होंने अपने अतिथियों को सफाई देते हुए कहा कि खेती की एक समस्या की वजह से उनको देर हो गई.

प्रतिनिधि ने उनसे पूछा कि समस्या शुरू कब हुई, तो गोर्बाचेव का जवाब था- 1917 ईस्वी में.

कोई भी लोकशाही विपक्ष के बग़ैर लड़खड़ा जाती है. क्या हम राष्ट्रीय स्तर पर भी हरियाणा को दुहराने के लिए अभिशप्त हैं? जहां, सरकार दौड़ में कांखते-कांपते भी इस वजह से जीत जाती है, क्योंकि चुनौती देनेवाला कोई दूसरा घोड़ा मौजूद ही नहीं है? हरियाणा कोई एक अकेला राज्य नहीं है. 1967 से 1972 के बीच के परेशान करने वाले वक्फे में भी आयाराम गयाराम तर्ज़ की सरकारों (और उनकी दलबदल की नीति) ने लोकशाही को इतना नुकसान पहुंचाया कि इसने ग़ैर-कांग्रेसी दलों की विश्वसनीयता ही ख़त्म कर दी. यह ध्यान देने वाली बात है कि जिन भजनलाल ने अपने सभी विधायकों और ऑफिस के टाइपराइटर के साथ कांग्रेस छोड़ दी थी, वह अभी भी राज्य चुनाव में एक अहम भूमिका निभाएंगे. अब उन्होंने मायावती से हाथ मिला लिया है, तो वह ज़ाहिर तौर पर सब कुछ देख ले सकने का दावा कर सकते हैं. भजनलाल जब मुख्यमंत्री होंगे, तो मायावती घुटनों के बल चल रही होंगी. हालांकि, बीते वक़्त की यादें आपको वोट नहीं दिलातीं. वोट उनको मिलते हैं, जो भविष्य बेचते हैं, उनको नहीं जो भूतकाल को सुनहरी पन्नी में लपेट कर पेश करते हैं.

राजनीति और प्रकृति में एक चीज़ समान है. दोनों ही शून्य से नफ़रत करते हैं. कुछ राज्यों में कांग्रेस अपनी पूरी कोशिश कर ख़ुद का ही विपक्ष तैयार कर रही है. इसने लालू प्रसाद की तरफ से आते बार-बार के प्रलोभन को भी नकार दिया. यादव के पास अभी सोचने का इतना मसाला इकट्ठा है कि अगले आम चुनाव तक वह लगातार सोचते रह सकते हैं. महाराष्ट्र में कांग्रेस ने अपने गठबंधन सहयोगी पवार पर छींटाकशी शुरू कर दी है और उनको चीनी पर रोक लगाने वाला और उसके दाम को खुला छोड़ देने वाला जिन्न करार दिया है. कांग्रेस इस यथास्थिति का आनंद ले रही है, जहां उसका पहला ध्येय तो अपने साझीदारों को नकारा साबित कर देना है. पवार की प्रतिक्रिया और कुछ नहीं..भेड़ की भेड़ सरीखी प्रतिक्रिया है. यह याद रखना हालांकि फायदेमंद होगा कि कुछ भेड़ें सही मौके पर अपना कलेवर बदल लेती हैं. कांग्रेस ने, हालांकि चतुराई से नई पीढ़ी में निवेश कर कुछ बीमा तो करवा ही लिया है. पवार और पी ए संगमा की बेटियों के राहुल गांधी के साथ बेहतर समीकरण हैं, बनिस्बत उनके पिताओं के सोनिया गांधी के साथ के.

हालांकि, फ़िलहाल संसद में कांग्रेस की सीटों की संख्या राजीव गांधी वाली सरकार (1985) के मुक़ाबले आधी है, विपक्षी दलों की सामूहिक तंद्रा ने कांग्रेस नेताओं को इस बात का यक़ीन दिला दिया है कि वे राजीव गांधी का करिश्मा आगामी आम चुनाव-2014 में दुहरा सकते हैं. इससे भी बड़ी बात यह कि विपक्षी नेता दो दशक वृद्ध हैं, कुछ ने अपनी आख़िरी जंग लड़ ली है, और दूसरे अपने अंतिम दौर में होंगे, जबकि कांग्रेस का नेता ताज़ा और केवल 44 साल का होगा.

अहम बात यह कि, बड़े विरोधी दल या तो भौगोलिक या वैचारिक सीमाओं में बंद नज़र आ रहे हैं. उनके काडर कुछ अर्थों में तो संपदा हैं, तो कुछ अर्थों में ज़िम्मेदारी भी. मुलायम सिंह यादव-जिनकी राजनीतिक क्षमता को किसी संकट में कमतर नहीं आंकना चाहिए और इसे पिछले लोकसभा चुनाव में उन्होंने साबित भी किया है-भी उत्तर प्रदेश के बाहर फैलने में असफल रहे हैं. लालू के साथ का यादव-गठजोड़ वास्तव में लालू की तुनकमिज़ाजी के आधार पर तय होता है. भाजपा ने अपनी व्याख्या विवाद के साथ फिर से कर दी है, और उसके अंदर की उठापटक अपनी निरर्थकता में सांस रोक देने वाली है. वामदल एक ऐसी जगह पर फिसल चुके हैं, जहां इसके उम्मीदवार की कोलकाता में जमानत ज़ब्त हो गई क्योंकि बंगाल में कोई भी नहीं समझ पाता कि बुद्धदेव भट्टाचार्य किसका प्रतिनिधित्व करते हैं.

हालात लगभग 1985-86 सरीखे हैं. हालांकि, प्रकृति जो शून्य के ख़िलाफ़ है, ने तब एक व्यक्ति को उत्प्रेरक के तौर पर काम करने के लिए तैयार कर दिया था. कोई वी पी सिंह केवल केंद्र से ही पैदा हो सकता है. दक्षिण या वाम से किसी भी दावेदार को अपनी स्थिति फिर से बनानी होगी. अटल बिहारी वाजपेयी इसलिए स्वीकार्य हुए क्योंकि वह सामाजिक मसलों पर भाजपा के वाम मे और अर्थव्यवस्था के मसले पर वाम के दक्षिण में खड़े हो गए. यही वह जगह है, जहां भारतीय राजनीति की नब्ज़ धड़कती है.

व्यक्तिगत गतिशीलता को ख़ास हालात की ज़रूरत होती है. साथ ही, छुपे हुए राजनीतिक खेमेबाज़ी को भी न भूलें. सिंह सफल इसलिए हुए कि उनके हाथ बेहद कुशल थे. उन्होंने एक हाथ से माकपा को साधा तो दूसरे से भाजपा को. इस बीच उन्होंने ख़ुद को एक ईमानदार नेता के रूप में तो स्थापित किया ही, जो अल्पसंख्यकों के हितों के लिए सोचता हो. इसके लिए काफी कुशलता की ज़रूरत होती है. साथ ही, अंतिम उत्पाद इतना अस्थायी हुआ कि इसने दिल्ली की राजनीति को एक दशक से भी अधिक समय तक असंतुलित बनाए रखा.

इतिहास ख़ुद को नहीं दुहराता, लेकिन क्या यह अपनी नक़ल करता है? जवाब आने में कुछ वक़्त लगेगा.

feedback@chauthiduniya.com

रवि किशोर

सामूहिक जागरूकता की जीत

अंततः सुप्रीम कोर्ट के जजों की संपत्ति की घोषणा के मसले पर सामूहिक विवेक की जीत हुई. इसके साथ ही सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों ने सर्वसम्मति से इस संकल्प को अपनाया कि वे अपनी संपत्ति को सार्वजनिक करेंगे और इसे सुप्रीम कोर्ट की वेबसाइट पर डालेंगे. हालांकि कई इसकी सत्यता पर दावा कर सकते हैं, लेकिन इसका अंत आख़िरकार सत्यमेव जयते में ही होता है. यह सच की जीत है. इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि इस संकल्प के लिए सुप्रीम कोर्ट के जजों ने जो रास्ता अपनाया है वह सहज नहीं था और उच्च न्यायपालिकाओं के कुछ सदस्यों द्वारा विरोधाभाषी रवैया अपनाया गया. उससे भारतीय जनता के मन में कई सवाल उठने लगे.

इस पूरे मसले पर माननीय मुख्य न्यायाधीश के जी बालकृष्णन द्वारा लिया गया पहले का फ़ैसला काफी कठोर था. जनता उनके पक्ष में नहीं थी और उसे इस तर्क में कोई दम नहीं दिखाई दे रहा था कि जजों के द्वारा संपत्ति की घोषणा करने से न्यायाधीशों का उत्पीड़न होगा. इस रुख़ का सभी लोगों के साथ-साथ सुप्रीम कोर्ट के सेवानिवृत न्यायाधीशों और वकीलों के अलावा आरटीआई कार्यकर्ताओं ने विरोध किया. जिस बिंदु को सराहा गया वह यह कि 1997 में भारत में आरटीआई का कोई अस्तित्व नहीं था. सुप्रीम कोर्ट के जजों ने प्रस्ताव पारित कर मुख्य न्यायाधीश के समक्ष संपत्ति की घोषणा करने का एक सराहनीय कदम उठाया. हालांकि बदलते परिदृश्य में जजों को इस मसले पर जनता के अधिक दबाव का इंतजार नहीं करना चाहिए.

क़ानून मंत्री इस बिल को राज्य सभा में पारित करने में विफल रहे. प्रस्तुत बिल, जिसमें जजों की संपत्ति को सार्वजनिक करने का प्रावधान नहीं था. विपक्ष के साथ-साथ सत्ता पक्ष के कुछ सदस्यों ने इसका कड़ा विरोध किया. इसके चलते क़ानून मंत्री ने इसे संसद में नहीं पेश करने का फ़ैसला लिया. माननीय मुख्य न्यायाधीश के नेतृत्व में सुप्रीम कोर्ट के जजों ने इसके लिए एक क्यू फॉर्म लिया और स्वेच्छा से वे अपनी संपत्ति की घोषणा और सार्वजनिक करने के लिए राज़ी हो गए, लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हुआ और मुख्य न्यायाधीश अपने रुख़ पर अड़े रहें. नतीजतन, मुख्य न्यायाधीश के इस रुख़ के ख़िलाफ़ लोगों का स्वर मुखर होने लगा.

आम जनता की नज़र में मुख्य न्यायाधीश पर अधिक दबाव कर्नाटक हाई कोर्ट के न्यायाधीश कुमार के कड़े रुख़ की वजह से पड़ा होगा. इस विषय पर लिया गया उनका फ़ैसला विरोधाभासी है और यह मुख्य न्यायाधीश के रुख़ से बिल्कुल विपरीत है. वास्तव में कुमार के इस रुख़ को असंतोष की आवाज के तौर पर व्यक्त किया जा सकता है. संपत्ति की घोषणा के मामले में मुख्य न्यायाधीश के इस रुख़ को पहली बार किसी वर्तमान जज ने विरोध किया. कर्नाटक हाई कोर्ट के न्यायाधीश डी वी शैलेंद्र कुमार ने कहा कि यह सोचना एक मिथक जैसा लगता है कि उच्च न्यायालयों के जज अपनी संपत्ति को सार्वजनिक करने के लिए तैयार नहीं हैं.

एक दैनिक अख़बार में न्यायाधीश कुमार ने लिखा है कि सबसे हानिकारक और अनपेक्षित प्रभाव लोगों के मन में उत्पन्न हुआ है कि उच्च न्यायलायों के जजों को अपनी संपत्ति के ख़ुलासे से बचने के लिए संवैधानिक सुरक्षा प्रदान की गई है और वह इस जानकारी को बचा कर रख सकते हैं और किसी संभावित ख़तरे और गलत अधिग्रहण से भी. मुख्य न्यायाधीश के जी बालकृष्णन की टिप्पणी का हवाले देते हुए कहा कि अगर उनकी संपत्ति को सार्वजनिक किया गया तो इससे जजों का उत्पीड़न हो सकता है. इस विषय पर न्यायाधीश कुमार ने लीगल प्लान का तर्क दिया. मुख्य न्यायाधीश को उच्च न्यायालय के सभी जजों के बारे में बोलने का अधिकार नहीं है- न तो सुप्रीम कोर्ट के लिए और न ही हाई कोर्ट के लिए- जब तक कि उन दोनों में किसी एक को मुख्य न्यायाधीश पर भरोसा नहीं हो और दूसरे की ओर से बोलने का अधिकार

न दिया गया हो. इसी बीच पंजाब और हरियाणा हाई कोर्ट के न्यायाधीश एम के कन्नन और न्यायाधीश कुमार ने अपनी संपत्ति की घोषणा की, जबकि मद्रास हाई कोर्ट के न्यायाधीश के चंद्रू ने संपत्ति की घोषणा करने की इच्छा व्यक्त की.

हालांकि इस मसले पर न्यायाधीश कुमार ने जो रुख़ अपनाया भारत के मुख्य न्यायाधीश ने उसका स्वागत नहीं किया. मुख्य न्यायाधीश ने इस मसले पर पलटवार करते हुए कहा कि जज केवल लोकप्रिय होना चाहते थे.

लोगों के बढ़ते दबाव और शायद इस मसले पर उच्च न्यायपालिका के जजों के एकजुट न होने को महसूस करते हुए, सुप्रीम कोर्ट के जजों ने अपनी संपत्ति को सार्वजनिक करने का फ़ैसला किया. सुप्रीम कोर्ट ने यह फ़ैसला जजों की बैठक में मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में ली और सर्वसम्मति से संपत्ति का ब्योरा देने को पारित कर दिया. ग़ौरतलब है कि यह ब्यौरा पहले से ही भारत के मुख्य न्यायाधीश के कार्यालय में किसी न किसी रूप में उपलब्ध है. उसको सुप्रीम कोर्ट की वेबसाइट पर जल्द से जल्द डाल दिया जाएगा.

प्रस्ताव के पास होने के बाद भारत के मुख्य न्यायाधीश के जी बालकृष्णन ने सुप्रीम कोर्ट के सभी जज से संपत्ति की घोषणा के मामले में 1997 के प्रस्ताव का पालन करने को कहा और इस रिपोर्ट का खंडन किया कि इसे ठीक तरीक़े से लागू नहीं किया जा रहा था. पत्रकारों से बात करते हुए उन्होंने कहा कि 26 अगस्त 2009 को इस प्रस्ताव को जजों ने सर्वसम्मति से पास किया और सुप्रीम कोर्ट के जजों को 1997 के प्रस्ताव का सख्ती से पालन करना था, जिसके तहत जानकारी को सार्वजनिक नहीं किया जाता था, लेकिन अब परिस्थिति बदल जाने से हमलोगों को पूरी जानकारी कोर्ट की वेबसाइट डालनी होगी.

7 मई 1997 को जो दो प्रस्ताव कोर्ट की पूर्ण बैठक में अपनाया गया वे निम्नलिखित हैं :-

भारत के मुख्य न्यायाधीश को आंतरिक प्रक्रिया को हल करने के लिए जजों के ख़िलाफ़ उपचारात्मक कार्रवाई तैयार करनी चाहिए. जो अपने काम के द्वारा न्यायिक जीवन के महत्व को स्वीकार नहीं करते. इसे तुरंत हल करते हुए कि सभी जज को अपनी संपत्ति की घोषणा करनी चाहिए, चाहे वह रीयल एस्टेट के रूप में हो या निवेश के रूप में(चाहे संपत्ति उसके-उसकी नाम से हो या उसके -उसकी पत्नी के नाम से हो या फिर कोई व्यक्ति जो उस पर निर्भर हो). वह भी ऑफिस में पद ग्रहण करने के निश्चित समय के अंदर. वर्तमान जज के मामले में इस प्रस्ताव को अपनाने के उचित समय के भीतर. उसके बाद जब कभी भी इस तरह के नियम को अपनाया जाता है. एक निश्चित समय के भीतर इसका ख़ुलासा होना चाहिए. मुख्य न्यायाधीश रिकॉर्ड के प्रयोजन से ठीक इसी तरह की घोषणा करता है. न्यायाधीश और जजों द्वारा की गई घोषणा को हो सकता है कि गोपनीय रखा जाएगा.

मुख्य न्यायाधीश ने 26 अगस्त 2009 के प्रस्ताव का हवाला देते हुए सुप्रीम कोर्ट के सभी जजों से कहा कि वे अपनी संपत्ति की घोषणा 1997 के प्रस्ताव के अनुसार ही करें. ताकि जानकारी को वेबसाइट पर डाला जा सके. उन्होंने कहा कि हमने इसका निर्णय नहीं लिया कि संपत्ति की घोषणा किस प्रारूप के तहत की जाएगी. इसमें कुछ समय लगेगा. इस पूरी प्रक्रिया में एक या उससे अधिक महीना लगेगा. इसके लिए कई देशों में विभिन्न तरह की प्रक्रिया अपनाई जाती है. अमेरिका में जजों द्वारा इस तरह की घोषणा को सूचना के अधिकार से बाहर रखा जाता है. अर्जेंटीना में दूसरी पद्धति अपनाई जाती है. हमें अब इसके प्रारूप के बारे में निर्णय करना है.

जब न्यायाधीश बालकृष्णन से पूछा गया कि संपत्ति संबंधी प्रश्न ध्यान में लिए जाएंगे, तो उन्होंने कहा कि हमने इस मसले पर कोई निर्णय नहीं लिया है. जब उनसे यह पूछा गया कि क्या वह हाईकोर्ट को इसी के जैसे किसी प्रस्ताव को अपनाने के लिए कहेंगे तो उन्होंने कहा कि वह इसे अपनाने के लिए बाध्य नहीं करेंगे. यहां तक कि कई हाई कोर्ट ने 1997 के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया था.

हालांकि इस मुद्दे से संबंधित कई विषय पर बहस भी हुई है जैसे मुख्य न्यायाधीश का रोल, कार्य और अधिकार. न्यायाधीश कुमार द्वारा लिया गया रुख़ कि भारत के मुख्य न्यायाधीश को उच्च न्यायलाय के सभी जजों के बारे में बोलने का अधिकार नहीं है. एक मज़दूर और आम आदमी मुख्य न्यायाधीश को न्यायपालिका के प्रधान के तौर पर समझता है. उनको सभी जजों का प्रतिनिधित्व करने का अधिकारी भी मानता है. संविधान के अनुच्छेद 124 सुप्रीम कोर्ट के गठन के लिए दिशा निर्देश देता है. नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधीश ही सबसे अहम हैं. जैसे कि नियुक्ति समय उन्हें सुप्रीम कोर्ट के अन्य जजों से परामर्श लेने की जरूरत है.

तुरंत ही सीनियर एडवोकेट सोली सोराबजी ने इस फ़ैसले का स्वागत किया और कहा कि यह सही दिशा में लिया गया फ़ैसला है. उन्होंने कहा कि यह न्यायिक भ्रष्टाचार नहीं था और छुपाने के लिए कुछ नहीं था, लेकिन कुछ ग़लतफ़हमी की वजह से ऐसा हुआ. सुप्रीम कोर्ट के प्रगतिशील फ़ैसले को बरक़रार रखते हुए सुभाष चंद्र अग्रवाल, जिन्होंने जजों की संपत्ति को सार्वजनिक करने के लिए केंद्रीय आयोग का दरवाज़ा खटखटाया था, उन्होंने न्यूज़ एजेंसियों से कहा कि थोड़ी देर ज़रूर हो गई, लेकिन यह सही फ़ैसला है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback@chauthiduniya.com

प्रिय संपादक जी,

चौथी दुनिया (अख़बार) का नया अंक (6 सितंबर) पढ़ा. हर बार की तरह इस बार भी बहुत अच्छा लगा. कवर स्टोरी बहुत ज्ञानवर्धक और ख़ास थी. मैं आपकी बात से पूरी तरह सहमत हूं कि एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए मज़बूत विपक्ष बेहद ज़रूरी है. इस बार ***साहित्य दुनिया*** में प्रकाशित ***देवानंद की प्रेम कहानियां*** शीर्षक स्टोरी काफ़ी रोचक लगी. देवानंद साहब अपने समय के रोमांटिक हीरो में शुमार रहे हैं. उनके बारे में विस्तार से जानना वाकई मेरे लिए एक नया अनुभव रहा. इस लेख को पढ़ने के बाद यह स्पष्ट हुआ कि अभिनेता और अभिनेत्री फिल्म के अलावा व्यक्तिगत जीवन में भी एक-दूसरे से संबद्ध हो सकते हैं. एक ख़ास बात जो मुझे महसूस हुई, वह आपके अख़बार में पूर्वोत्तर राज्यों से संबंधित किसी ख़बर का होना है. इस बार भी अरुणाचल प्रदेश से संबंधित आई, ख़बर पढ़कर काफी अच्छा लगा. आपने अपने अख़बार में पूर्वोत्तर राज्यों की ख़बर को ज़गह देकर इसे राष्ट्र की मुख्यधारा में जोड़ने की कोशिश की है, जो सराहनीय है. उम्मीद है कि आगे भी आपका यह जज़्बा बरक़रार रहेगा. संपादकीय पेज एक तरह से ज्ञान का भंडार है. इसमें प्रकाशित लेख बेहद उपयोगी होते हैं. आशा करता हूं कि आगे भी आप इस तरह की जानकारियां प्रकाशित करते रहेंगे.

आपका
दुर्गेश सिंह
शक्करपुर, दिल्ली 92

जब तोप मुक़ाबिल हो

कांग्रेस के लिए आ गई परीक्षा की घड़ी

> आख़िर में बिहार विधानसभा उपचुनावों में लालू यादव, रामविलास पासवान, कांग्रेस और नीतीश कुमार की साख किस स्तर पर है, देखने लायक़ होगी. सभी ताल ठोंक रहे हैं, पर नीतीश कुमार के दल में शोर थोड़ा ज़्यादा ही है. सभी नेता अपने बेटों या बेटियों को लड़ाना चाहते हैं, पर नीतीश चाहते हैं कि वंशवाद का सिक्का उन पर न चिपके. दिल्ली में हुए अपने दल के सम्मेलन में भी उन्होंने यही बात कही.

महाराष्ट्र और हरियाणा में चुनावों की घोषणा हो चुकी है. महाराष्ट्र कांग्रेस के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहां कांग्रेस के नेतृत्व में सरकार भी है और कांग्रेस सरकार बनाना भी चाहती है. दूसरी ओर, अभी तक कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस की आपस में सीटों के तालमेल के बारे में बातचीत भी नहीं चल रही है. बल्कि चल रही है तलवारबाज़ी. विलासराव देशमुख और दिग्विजय सिंह बयान पर बयान दिए जा रहे हैं कि एनसीपी का कांग्रेस में विलय होना चाहिए, जबकि ऐसा होना संभव ही नहीं है. कांग्रेस को कब समझ में आएगा कि बेकार की बयानबाज़ी आम लोगों को पसंद नहीं आती.

महाराष्ट्र के लोग उत्तरप्रदेश और बिहार से प्रेरणा ले रहे हैं, जहां कांग्रेस ने लोकसभा चुनावों में अच्छा प्रदर्शन किया था. उत्तरप्रदेश में 21 सीटें जीतीं और बिहार में उसका वोट प्रतिशत बढ़ा. पर दोनों के अलग-अलग कारण थे. उत्तरप्रदेश के विधानसभा उपचुनावों में एक भी सीट कांग्रेस नहीं जीत पाई और बिहार में अभी विधानसभा उपचुनाव होने हैं, जिसका फ़ैसला महाराष्ट्र से पहले आने वाला है. अच्छा होता कि दोनों एक-दूसरे की आंख फोड़ने की जगह अपने साझा दुश्मन भाजपा-शिवसेना का सामना करने की रणनीति बनाते. कांग्रेस को भूलना नहीं चाहिए कि यदि राज ठाकरे की पार्टी अलग से लोकसभा में उम्मीदवार नहीं उतारती तो उसके सभी उम्मीदवार मुंबई में हार जाते. कांग्रेस इसी पर आस लगाए बैठी है कि उसे विधानसभा चुनावों मे भी इसका फ़ायदा मिलेगा और भाजपा-शिवसेना गठबंधन हार जाएगा. कांग्रेस के लिए ज़रूरी है कि वह दोस्तों की शान बढ़ाए न कि दुश्मनों की. अगर एनसीपी अलग चुनाव लड़ती है और उसका समझौता भाजपा-शिवसेना गठबंधन से हो जाता है, तब क्या होगा? इस स्थिति को नहीं आने देना चाहिए. क्या करेंगे राज ठाकरे, उद्धव ठाकरे अभी नहीं पता, पर महाराष्ट्र में आम धारणा है कि चुनावों के बाद तीनों मिलकर सरकार बनाएंगे. महाराष्ट्र का असर झारखंड और बिहार के आने वाले विधानसभा चुनावों पर पड़ेगा ही, इसलिए कांग्रेस को इसका ध्यान रखना चाहिए.

शिवसेना अपनी पूरी तैयारी के साथ विधानसभा चुनावों में उतर रही है क्योंकि भाजपा ने कहा है कि उद्धव ठाकरे के मुख्यमंत्री बनने पर उसे कोई एतराज़ नहीं है. शिवसेना अभी तक अपना सौम्य चेहरा दिखा रही है क्योंकि उसे उत्तर भारतीयों के वोट चाहिए और ऐसा वह भाजपा के कहने पर ही कर रही है. भाजपा महाराष्ट्र में भी थोड़ी परेशानी में है क्योंकि दिल्ली में चल रही लड़ाई उसके पक्ष में महाराष्ट्र में कोई माहौल नहीं बना पा रही है. महाराष्ट्र भाजपा ने इसीलिए न तो अपने यहां भाजपा की कार्यकारिणी होने दी और न ही

> महाराष्ट्र के लोग उत्तरप्रदेश और बिहार से प्रेरणा ले रहे हैं, जहां कांग्रेस ने लोकसभा चुनावों में अच्छा प्रदर्शन किया था. उत्तरप्रदेश में 21 सीटें जीतीं और बिहार में उसका वोट प्रतिशत बढ़ा. पर दोनों के अलग-अलग कारण थे. उत्तरप्रदेश के विधानसभा उप-चुनावों में एक भी सीट कांग्रेस नहीं जीत पाई और बिहार में अभी विधानसभा उप-चुनाव होने हैं, जिसका फ़ैसला महाराष्ट्र से पहले आने वाला है. अच्छा होता कि दोनों एक-दूसरे की आंख फोड़ने की जगह अपने साझा दुश्मन भाजपा-शिवसेना का सामना करने की रणनीति बनाते.

चिंतन बैठक क्योंकि उसे डर था कि ऐसा होने पर भाजपा का झगड़ालू चेहरा जनता के सामने आएगा.

कांग्रेस ने बस एक अच्छा काम किया और वह यह कि उसने राज्यसभा के उप-सभापति के रहमान ख़ान को महाराष्ट्र विधानसभा के चुनावों का प्रभारी बनाया और उन्हें सभी मुस्लिम विधानसभा क्षेत्रों की ज़िम्मेदारी दे दी. के रहमान ख़ान की छवि अच्छी है और उन्हें महाराष्ट्र में मुसलमानों का समर्थन मिल भी रहा है. लेकिन ख़तरा इस बात का है कि यदि कांग्रेस अकेली लड़ती नज़र आती है तो कहीं लोगों का उत्साह न ठंडा हो जाए.

महाराष्ट्र विधानसभा चुनावों में एनसीपी भी परेशानी में है क्योंकि मराठों के अलावा पिछड़ों का समर्थन भी वह लेना चाहती है. उनके एजेंडे में मुसलमान कभी नहीं हैं, हां किसान ज़रूर हैं, पर लोकसभा चुनावों में उन्हें बहुत सफलता नहीं मिली और अब विधानसभा चुनाव सामने है. शरद पवार अपने बाद किसे नेतृत्व सौंपते हैं, इसकी झलक भी इन विधानसभा चुनावों में देखने को मिल सकती है.

महाराष्ट्र और हरियाणा के विधानसभा चुनाव लोकसभा के बाद पहली बार देश की जनता का संकेत देने वाले हैं. हरियाणा में मायावती जी की बहुजन समाज पार्टी और भजनलाल की हरियाणा विकास पार्टी मिलकर कांग्रेस के लिए ख़तरा बन सकती है. कांग्रेस के लिए चैन की बात है कि वहां चौटाला और भाजपा मिलकर अब चुनाव नहीं लड़ेंगे, लेकिन चुनावों के बाद भी नहीं मिलेंगे, यह अभी तय नहीं है. मायावती का ख़तरा महाराष्ट्र में कम है लेकिन वह वहां अपने उम्मीदवार खड़े कर रही हैं. साथ ही महाराष्ट्र में दलित संगठन अंत तक एक होते हैं या नहीं, यह भी देखना दिलचस्प होगा. प्रकाश आंबेडकर अभी तक किसी दलित संगठन के साथ अपनी पार्टी को मिलाना नहीं चाहते.

और आख़िर में बिहार विधानसभा उपचुनावों में लालू यादव, रामविलास पासवान, कांग्रेस और नीतीश कुमार की साख किस स्तर पर है, देखने लायक़ होगी. सभी ताल ठोंक रहे हैं, पर नीतीश कुमार के दल में शोर थोड़ा ज़्यादा ही है. सभी नेता अपने बेटों या बेटियों को लड़ाना चाहते हैं, पर नीतीश चाहते हैं कि वंशवाद का सिक्का उन पर न चिपके. दिल्ली में हुए अपने दल के सम्मेलन में भी उन्होंने यही बात कही.

ये थोड़ी झलकियां हैं जो भारतीय राजनीति में आ रही एकरसता को तोड़ेंगी. अभी तक केवल भाजपा के झगड़े का नगाड़ा हर जगह गूंज रहा था, अब कुछ दिनों तक सभी दलों के नगाड़े बजेंगे. जनता पहले भी तमाशबीन थी, अभी भी तमाशबीन ही रहेगी क्योंकि उसे तो बुरों में से सबसे कम बुरे को चुनना है. उसके पास अच्छा उम्मीदवार चुनने का विकल्प ही नहीं है.

संपादक

editor.chauthiduniya.com

सूचना के अधिकार को मज़बूती देनी होगी

सौमित्र मोहन

अक्टूबर 2005 में सूचना का अधिकार अधिनियम (आरटीआई) लागू हुआ था. उस घटना को तीन साल से ज़्यादा हो गए हैं. इसके लागू होने के कुछ ही दिनों के अंदर लोग यह भी आशंका व्यक्त करने लगे कि इस अधिनियम को लागू करने में पूरी ईमानदारी नहीं बरती जा रही. यह लग रहा था कि कुछ लोगों के स्वार्थ के कारण इस अधिनियम की आत्मा को मारा जा रहा था.

जब सरकार की ओर से इस अधिनियम के कुछ प्रावधानों को कमज़ोर करने की कोशिश हुई थी तो इस पर काफी हो-हल्ला मचा था. सरकार किसी आधिकारिक नोट-शीट पर लिखी जानकारी को प्रशासनिक ज़रूरत और अधिकारियों को प्रताड़ना से बचाने के नाम पर इस अधिनियम के दायरे से बाहर कना चाहती थी.

हालांकि इन सब के बीच लोग यह नहीं समझ पाए थे कि यह अधिनियम अभी शैशवास्था में था और पूरी ताक़त से काम करने में इस वक़्त लगेगा. जल्द ही लोग इस अधिनियम से मिले अधिकार के महत्व और शक्ति को समझने लगे. अब वे इस अधिनियम का इस्तेमाल अपने अधिकारों से जुड़े सभी मामलों में करने लगे हैं.

हालांकि शुरुआत में आरटीआई के अंतर्गत सूचना मांगने वाली बहुत कम याचिकाएं थीं, आज हर विभाग और एजेंसी में सूचना मांगने वाले आवेदनों की भरमार है. इससे न केवल जनता के बीच किसी भी सरकारी जानकारी को मांगने के लिए आरटीआई के इस्तेमाल को लेकर विश्वास बढ़ा है, बल्कि इससे सरकारी कार्यालयों और विभागों को बहुत पारदर्शी भी बनाया है, जो कि इस अधिनियम का मूल उद्देश्य था.

> कई सरकारी विभागों और संस्थाओं जैसे न्यायपालिका ने जानकारी मांगने और पाने को बहुत महंगा बना दिया है. सूचना पाने की क़ीमत को कुछ एजेंसियों और विभागों ने लोगों की पहुंच से ऊपर कर दिया है. इससे इस अधिकार की मूल आत्मा ही क्षतिग्रस्त हुई है. जब सूचना साझा करने के तरीक़ों का मूल्य तय करने का अधिकार विभिन्न राज्य सरकारों और स्वायत्त संस्थाओं को दे दिया गया है, तब वे क़ीमत को बेमतलब बढ़ाकर सूचना साझा न करने का बहाना गढ़ ले रहे हैं.

केंद्रीय सूचना आयोग और अन्य राज्य सूचना आयोगों ने आरटीआई के तहत आई अपीलों पर कई अहम फ़ैसले किए हैं. इससे आधिकारिक रिकार्डों पर लगा ताला खुल रहा है. साथ ही इसने उस ऑफिसियल सिक्रेट्स एक्ट, 1923 को कमज़ोर किया है, जिसका इस्तेमाल कोई भी नौकरशाह जनता को राज्य-सुरक्षा और बड़े जनहित के बहाने से जानकारी न देने के लिए करता था.

अब इन फ़ैसलों के बाद बड़े जनहित के इस सिद्धांत को ही अलग तरीक़े से व्याख्यायित करके केंद्र और राज्य सरकारों की अलग-अलग शाखाओं के जनता के साथ जानकारी साझा करने का आधार बनाया जा रहा है. अब आरटीआई के तहत जानकारी पाने का हक़ भले ही मज़बूत हो गया है लेकिन अभी भी इस हक़ को और मज़बूत करने के लिए बहुत कुछ करने की ज़रूरत है, ताकि यह सरकारी महकमों पर नियंत्रण का एक कारगर हथियार बन सके.

यह सच है कि आरटीआई के अंतर्गत आने वाले आवेदनों की संख्या बहुत बढ़ी है लेकिन अभी भी में इसमें बहुत ज़्यादा इजाफ़े की गुंजाइश है. लोगों के बीच आरटीआई के तहत मिलने वाली शक्तियों के बारे में और जागरूकता फैलाने की ज़रूरत है.

कई सरकारी विभागों और संस्थाओं जैसे न्यायपालिका ने जानकारी मांगने और पाने को बहुत महंगा बना दिया है. सूचना पाने की क़ीमत को कुछ एजेंसियों और विभागों ने लोगों की पहुंच से ऊपर कर दिया है. इससे इस अधिकार की मूल आत्मा ही क्षतिग्रस्त हुई है. जब सूचना साझा करने के तरीक़ों का मूल्य तय करने का अधिकार विभिन्न राज्य सरकारों और स्वायत्त संस्थाओं को दे दिया गया है, तब वे क़ीमत को बेमतलब बढ़ाकर सूचना साझा न करने का बहाना गढ़ ले रहे हैं.

सूचना पाने के अगंभीर प्रयासों को हतोत्साहित करने के लिए बढ़ाई गई यह क़ीमत कुछ ऐसे सच्चे आवेदनकर्ताओं को भी परेशान कर रही है जिनके पास सूचना पाने के लिए ज़रूरी पैसे नहीं हैं. हालांकि अधिनियम में ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वालों से कोई मूल्य नहीं लेने का प्रावधान है लेकिन हमें यह समझना होगा कि हमारे देश में ऐसे कई हैं जो भले ही ग़रीबी रेखा से नीचे न हों लेकिन उससे कोई ख़ास बेहतर हालात में नहीं हैं. ऐसे लोग सूचना पाने के लिए एक मोटी रक़म नहीं ख़र्च कर सकते.

इसके अलावा एक और समस्या जो अधिकार के लागू होने के बाद सामने आई है, वह सूचना देने के लिए तैयार किए गए तंत्र में अधिकारियों और कर्मचारियों की कमी की है. इसी वजह से विभिन्न सूचना आयोगों और सरकारी संस्थाओं में लंबित आवेदनों की कतार है.

अब जबकि कई सरकारी अफसरों को समय सीमा के अंदर सूचना न देने के लिए जुर्माने का सामना करना पड़ा है और उन्हें यह जुर्माना अपनी जेब से चुकाना पड़ा है, तब से सरकारी कर्मचारी और अधिकारी इस अधिनियम के तहत आने वाली याचिकाओं पर कार्रवाई करने और निर्धारित 30 दिनों के भीतर सूचना देने के लिए तत्पर रहते हैं.

आज अधिकतर सरकारी विभाग कर्मचारियों की कमी से जूझ रहे हैं, इन विभागों के आम कामकाज पर असर पड़ा है. चूंकि आरटीआई के मामलों में काम नहीं करने से सीधे उनकी जेब पर असर पर पड़ता है इसलिए वे सबसे पहले उन्हीं मामलों को उठाते हैं.

ऐसी समस्याएं इसलिए भी उठी हैं क्योंकि कई सरकारी विभागों और संस्थाओं ने अभी भी अपनी आंतरिक जानकारी को सार्वजनिक क्षेत्र में नहीं रखा है. इससे सूचना देने में देरी या पूरी तरह से मना करने की बातें भी सामने आती हैं. जब न्यायपालिका के कंप्यूटराइजेशन के लिए नेशनल पॉलिसी एंड एक्शन प्लान पर जानकारी की अर्ज़ी क़ानून मंत्रालय के पीआईओ (जन सूचना अधिकारी) को भेजी गई तो जवाब में कहा गया-कि इस प्लान को लागू करने की जानकारी अभी तैयार हो रही है, ऐसे में इस स्तर पर इसके बारे में कोई जानकारी देना संभव नहीं है.

इतना ही नहीं, कई सरकारी विभागों ने अभी तक सहायक जन-सूचना अधिकारी (एपीआईओ), जनसूचना अधिकारी(पीआईओ) और अपेलैट अथॉरिटी(एए) तय नहीं किए हैं. इस वजह से कई बार आरटीआई आवेदन एक अधिकारी से दूसरे तक भेजे जाते रहते हैं क्योंकि उनमें से किसी को भी एपीआईओ, पीआईओ और एए की ज़िम्मेदारी नहीं दी गई है. इससे इस क़ानून के उद्देश्य को धक्का लगा है.

इसलिए, इस अधिनियम के पालन को लेकर एक गंभीर समीक्षा की ज़रूरत है. सभी सरकारी विभागों को न केवल सारी जानकारी लोगों से साझा करने के लिए तैयार रहना होगा, बल्कि अपने यहां लोगों को एपीआईओ, पीआईओ और एए की ज़िम्मेदारी देकर उन्हें इस सूचना को जनता तक पहुंचाने का माध्यम बनाना होगा. उम्मीद यह भी की जाती है कि जिन अधिकारियों को यह ज़िम्मेदारियां दी जाएं वे उसी कार्यालय में रहें. असल में, यह प्रस्ताव है कि जहां तक संभव हो सके एक बड़े कार्यालय में एपीआईओ, पीआईओ और एए उसी परिसर में हों. इससे सिस्टम अधिक प्रभावी और जनसुलभ बनेगा.

इसके साथ ही केंद्र व राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आरटीआई के तहत सूचना मांगने और पाने की क़ीमत ज़रूरत से ज़्यादा न हो. साथ ही आरटीआई आवेदन की पूरी प्रक्रिया को और आसान किया जाए. बिहार में शुरू किया गया फोन-इन (सीधे फोन के द्वारा जानकारी) की सुविधा पूरे देश में फैलनी चाहिए. आम जनता को बेमतलब सरकारी दफ़्तरों के चक्कर न लगाने पड़ें, इसके लिए ज़रूरी है कि ई-गवर्नेंस को आरटीआई में पूरी क्षमता से इस्तेमाल किया जा सके.

साथ ही ऐसे अधिकारी और कर्मचारी होने चाहिए, जो सिर्फ़ आरटीआई आवेदनों पर केंद्रित हों और कार्यालय के दूसरे कर्मचारियों को इस काम में लगना पड़े जिससे दूसरे कामकाज भी सुचारू ढंग से चलते रहें. सरकारी कार्यालयों को सूचना मुहैया कराने की प्रक्रिया के ख़र्चे के लिए ख़ास अनुदान भी मिलने चाहिए.

अगर हम इन बातों को ध्यान में रखकर इस अधिनियम में ज़रूरी सुधार और बदलाव कर सके तो इसमें कोई शक़ नहीं कि आमजन को मिले अधिकार हमारे लोकतंत्र को और मज़बूत करेंगे.

(लेखक प. बंगाल में आईएएस अधिकारी हैं. आलेख में व्यक्त विचार उनके अपने हैं और इनका सरकार के विचारों से संबंध नहीं है.)

feedback@chauthiduniya.com

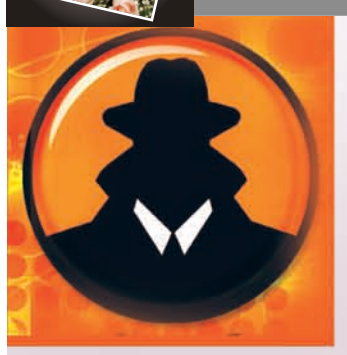

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

जब एफबीआई एजेंट बना अपराध की दुनिया का सरगना

एफबीआई के तौर-तरीक़े ही उसे बाक़ी ख़ुफ़िया एजेंसियों से अलग करते हैं. कई बार तो अपराधियों के गढ़ में घुसकर उनको मात देने के लिए एफबीआई के एजेंट ख़ुद अपराध की दुनिया में प्रवेश करते हैं.

यह बात तीन दशक पहले की है. उस वक़्त एक एफबीआई एजेंट ने अपराधियों के सफाए के लिए ख़ुद अपराध की दुनिया में क़दम रखा. उसकी वजह से सैकड़ों माफियाओं को सलाखों के पीछे जाना पड़ा. जी हां, जोए पिस्टॉन ही वह ख़ुफ़िया एफबीआई एजेंट थे, जिन्होंने जान का जोख़िम लेते हुए इस कारनामे को अंजाम दिया था. हालांकि, इन सबके लिए उन्हें अपनी पहचान और पेशा तक बदलना पड़ा.

बात उन दिनों की है, जब अमेरिका के न्यूयॉर्क शहर में पांच कुख्यात आपराधिक घरानों का दबदबा था. यह वह दौर था जब अमेरिका में प्रशासन और क़ानून ख़स्ताहाल थे. अपराध का आतंक चारों तरफ़ बढ़ रहा था. ऐसे में दुनिया की सबसे बड़ी ख़ुफ़िया एजेंसी एफबीआई को इस आतंक को ख़त्म करने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई और इस काम के लिए एफबीआई एजेंट जोए पिस्टॉन को चुना गया. जोए पिस्टॉन ने सत्तर के दशक में वह कारनामा कर दिखाया, जिसने उसे एफबीआई के इतिहास का सबसे मशहूर ख़ुफ़िया एजेंट बना दिया.

न्यूयॉर्क के ख़तरनाक इस आपराधिक घराने में घुसपैठ करने के लिए पिस्टॉन ने अपनी पहचान डॉनी द ज्वेलर के नाम से पहचान बनाई और इस तरह उसने अपराध की दुनिया में घुसपैठ किया. जहां उसने देखा कि अमेरिकी और सिसिलियन गुटों के बीच नशीली दवाओं के कारोबार पर वर्चस्व को लेकर टकराव अपने चरम पर था, उस समय भी ये माफ़िया घराने अभूतपूर्व समृद्धि और वैभव की ज़िंदगी जी रहे थे.

जोए पिस्टॉन इन माफ़िया संगठनों में हमेशा एक निचले दर्ज़े के सहायक के तौर पर ही काम करते रहे, लेकिन उन्होंने इनको काफी नुक़सान पहुंचाया. इसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि साल 1981 में एफबीआई से सेवानिवृत होने के पहले वह लगभग 120 ख़तरनाक माफ़िया को जेल में पूरी ज़िंदगी बिताने का इंतजाम कर चुके थे. पिस्टॉन एक ऐसे शख़्स थे जो हमेशा लो-प्रोफाइल रहना पसंद करते थे. ख़तरे से भरे ख़ुफ़िया एजेंट के तौर पर काम करने के दौरान उन्हें अपने कई जांबाज साथियों से हाथ धोना पड़ा. ऐसे में यह काम उनके आसान नहीं था. फिर भी 1969 में एफबीआई एजेंट के तौर पर अपना करियर शुरू करने वाले पिस्टॉन ने बोन्नानो परिवार में अपनी मर्ज़ी से घुसपैठ करने का फ़ैसला किया. उनका मक़सद इस परिवार के सभी सदस्यों की जानकारी हासिल करना था ताकि उनके ख़िलाफ़ कड़े क़दम उठाए जा सके. और इन सब कामों के लिए उन्हें जिस बात ने सबसे ज़्यादा आकर्षित किया वह था-इस पूरे ऑपरेशन के लिए उन्हें चुना जाना. जिसके लिए उन्होंने काफी मेहनत की.

इन ख़तरनाक आपराधिक घराने में घुसपैठ के लिए पिस्टॉन ने सबसे पहले एक मनगढ़ंत कहानी बनाई. ख़ुद को उन्होंने ज्वेल-थीफ की दुनिया का बेताज बादशाह और अपना नाम डॉनी ब्रॉस्की बताया. इस लिहाज़ से पिस्टॉन को सभी बहुमूल्य जवाहरातों के बारे में अच्छी तरह मालूम होना चाहिए था ताकि कोई उस पर शक न कर सके. नतीजतन ज्वेल-थीफ के इस किरदार को निभाने के लिए उन्होंने काफी वक़्त ज्वेलर्स के साथ बिताए और उनसे इन सबका प्रशिक्षण भी लिया. इस दौरान पिस्टॉन का अपने बच्चों और परिवार से भी मिलना जुलना काफी कम हो गया. और अपने काम में लगन की वजह से ही वह जल्द ही अपने सीनियर और मालिक बेजामिन रूगेरियो और डॉमनिक नेपोलिटानो का विश्वास जीतने में सफल हो सके. वह बहुत जल्द ही उनके हावभाव और काम करने के तरीक़े से भी अच्छी तरह वाक़िफ हो गए. पिस्टॉन ने ख़ुद बताया कि जुर्म की इस दुनिया में काम करने के लिए आपको अपने विरोधियों के हर क़दम से परिचित होने के साथ कब कुछ बोलना है और कब चुप रहना है यह अच्छी तरह पता होना चाहिए, क्योंकि इस खेल में आपको कोई भी कुछ नहीं बताता और सबसे बड़ी बात कि इन बातों के लिए आपको मानसिक स्तर पर काफी मज़बूत होने की ज़रूरत है.

इन सबके बीच काम करते हुए वह वक़्त भी आया जब पिस्टॉन पर 2,50,000 अमेरिकी डॉलर के गबन का आरोप भी लगा और यह आरोप लगाया था बन्नानो परिवार के सबसे ख़ासमख़ास टॉनी मिर्रा ने, जो कभी साबित नहीं हो सका, लेकिन इसके साबित होने का मतलब था, जोए पिस्टॉन की मौत. पिस्टॉन का बुरा वक़्त अभी ख़त्म नहीं हुआ था. बन्नानो फैमिली उसे अपना मेड मैन बनाना चाहती थी, जिसका मतलब था कि ब्रॉस्की (पिस्टॉन) उनका पारिवारिक सदस्य है. लेकिन सबसे बड़ी आफ़त यह थी कि इसके बदले पिस्टॉन को किसी का क़त्ल करना होगा. पर हर बार की तरह इस बार भी वह भाग्यशाली साबित हुए और यह ज़िम्मा किसी और को सौंप दिया गया. पिस्टॉन की चुनौतियां अभी ख़त्म नहीं हुईं थीं. इस बार ख़तरा काफी गंभीर था. बात 1981 की है. बन्नानो परिवार में ही सत्ता को लेकर आपस में ख़ूनी संघर्ष शुरू हो चुका था. इस ख़तरे को देखते हुए इन माफ़िया घरानों में डॉनी ब्रॉस्की के नाम से काम करने वाले पिस्टॉन को एफबीआई ने वापस बुलाने का फ़ैसला किया. लेकिन तबतक पिस्टॉन उन माफ़िया परिवारों की कमर तोड़ चुके थे, उनमें कई या तो पकड़े गए नहीं तो मारे गए. जिस ब्रॉस्की (पिस्टॉन) पर उन्होंने सबसे अधिक यक़ीन किया था, उसी ने अदालत में कई ऐसे दस्तावेज़ जमा किए जिससे न्यूयॉर्क और कई जगहों पर फैले उनके काले कारनामों के नेटवर्क का भंड़ा फोड़ हो सका. बाद में जिस नाम से पिस्टॉन ने माफ़िया फैमिली में घुसपैठ किया उसी किरदार को लेकर उन पर एक हॉलीवुड फिल्म डॉन ब्रॉस्की भी बनी.

ख़ुद पिस्टॉन ने सेवानिवृति के बाद अपना करियर एक फिल्म और टेलीविज़न निर्माता के तौर पर शुरू किया. इस तरह जोए-पिस्टॉन ने एफबीआई के मौजूदा समय के सबसे चुनौतीपूर्ण और ख़तरनाक मिशन को अंजाम दिया.

जोए पिस्टॉन (डॉनी ब्रास्को)

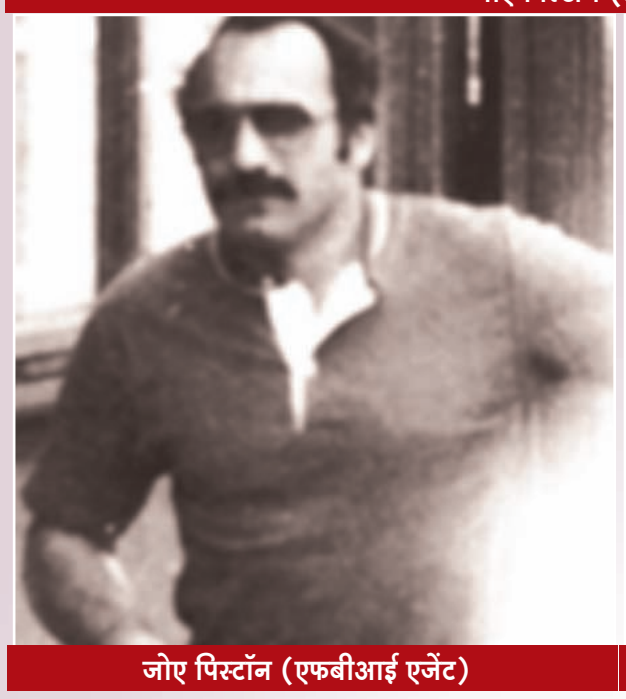

जोए पिस्टॉन (एफबीआई एजेंट)

डॉनी ब्रास्को (हॉलीवुड फ़िल्म)

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

शादी बचाइए, क्योंकि शादी बचा सकती है कैंसर से

कहते हैं कि शादी एक ऐसा लड्डू है कि जो खाए वह भी पछताए जो न खाए वह भी, लेकिन अगर आपने एक बार इसे खाने का फ़ैसला कर लिया हो तो कोशिश करें कि इस लड्डू को पूरा पचा लें. अपनी शादी टूटने न दें. इससे प्यार तो बढ़ता ही है, आपकी सेहत भी सलामत रहती है. शोध के अनुसार विवाह टूटने का तनाव कैंसर से लड़ने की क्षमता कम करता है. एक नए शोध के अनुसार विवाहित लोगों में कैंसर का सामना करने की संभावना अधिक होती है जबकि ऐसे लोगों के लिए कैंसर से बचना मुश्किल हो सकता है, जिनकी शादी टूटने की स्थिति में है.

शोधकर्ताओं ने अमेरिका के इंडियाना विश्वविद्यालय ने 1973 से 2004 के बीच 38 लाख कैंसर रोगियों के आंकड़ों का अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला है. शोधकर्ताओं ने पाया कि शादीशुदा कैंसर रोगियों में रोग होने के बाद पांच साल तक जीवित रह पाने की संभावना 63 प्रतिशत होती है. इसकी तुलना में ऐसे लोगों के कैंसर से पांच साल तक लड़ पाने की संभावना 45 प्रतिशत होती है, जिनकी शादी टूटने के कगार पर है. विज्ञान जर्नल कैंसर में प्रकाशित होनेवाली शोध रिपोर्ट में कहा गया है कि संभवतः शादी टूटने के तनाव के कारण रोगियों के कैंसर से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है. इसके पूर्व भी शादी और स्वास्थ्य को लेकर अध्ययन किए गए हैं. कई अध्ययनों में पाया गया है कि जीवनसंगी का प्रेम और साथ रोग से लड़ने के लिए बहुत आवश्यक होता है.

शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययन के दौरान विवाहित, अविवाहित, विधवा-विधुर, तलाक़शुदा और शादी टूटने की स्थिति वाले कैंसर रोगियों के बारे में अध्ययन किया और यह पता लगाने का प्रयास किया कि इनमें से कितने लोग कैंसर के बाद पांच से 10 साल तक जीवित रह पाते हैं. उन्होंने पाया कि विवाहित और अविवाहित रोगियों के कैंसर से लड़ पाने की संभावना सबसे अधिक रही. उनके बाद तलाक़शुदा और विधवा-विधुर रोगियों का स्थान आता है. इस शोध की मुख्य वैज्ञानिक डॉक्टर ग्वेन स्प्रेन ने कहा कि इस अध्ययन से यह पता चलता है कि कैंसर रोगियों में ऐसे लोगों पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए जिनकी शादी टूटने वाली है. उन्होंने कहा कि इलाज के दौरान रिश्तों के कारण होनेवाले तनाव की पहचान करने से चिकित्सक और पहले हस्तक्षेप कर सकेंगे जिससे कि रोगियों के बचने की संभावना बेहतर हो सकती है.

हालांकि, उन्होंने यह भी कहा कि इस दिशा में और अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है.

करिश्मा क़िस्मत का

पुरानी कहावत है कि देने वाला जब भी देता है, छप्पर फाड़ के देता है. लगता है यह कहावत इटली के एक शख़्स के लिए ही गढ़ी गई हो. उस शख़्स ने एक यूरो यानी क़रीब 70 रुपये में जैकपॉट का एक फॉर्म ख़रीदा. हज़ारों फॉर्मों के बीच इस शख़्स ने अपने फॉर्म में 1,16,38,67,70 और 84 नंबर पर टिक लगाए और यही अंक लकी ड्रॉ में सबसे ऊपर आए. अब इटली के इस आम शख़्स की ज़िंदगी ही बदल गई है. मज़ाक में जैकपॉट लॉटरी ख़रीदने वाले इस आदमी की क़िस्मत ने उसका बड़ा साथ दिया और यूरोप की सबसे बड़ी लॉटरी उसके हाथ लग गई. यह लॉटरी 14.70 करोड़ यूरो यानी 1020 करोड़ रुपये की लॉटरी थी. अपना नाम न बताने की शर्त पर सुपर एनालोटो जैकपॉट विजेता का कहना है कि उसने यह जैकपॉट का फॉर्म जर्मनी और फ्रांस के कुछ खिलाड़ियों की देखा-देखी करते हुए मज़ाक में ख़रीदा. इटली के छोटे शहर बॉगनन में रहने वाला यह भाग्यशाली इंसान एक छोटी सी फ़र्म में काम करता है.

लॉटरी के विजेता के बराबर ख़ुशी इटली की सरकार को भी हो रही है. दूसरे विश्वयुद्ध के बाद सबसे भयानक मंदी का सामना कर रही इटली की सरकार को लॉटरी की जीत में से क़रीब आधा हिस्सा टैक्स के रूप में मिलेगा. यह रक़म सीधे इटली सरकार के खाते में जाएगी. लॉटरी विजेता को इससे कोई दिक़्क़त नहीं हैं. फ़िलहाल साल 2007 के बाद दुनिया के इस सबसे बड़े जैकपॉट का विजेता यह शख़्स इटली के मीडिया में हीरो बना हुआ है. अब क़िस्मत मेहरबान हो तो गधा भी पहलवानी करने लगता है, फिर इस शख़्स की क़िस्मत देखकर लगता है कि लिखनेवाले ने बड़े आराम से उसकी क़िस्मत का हाल लिखा है.

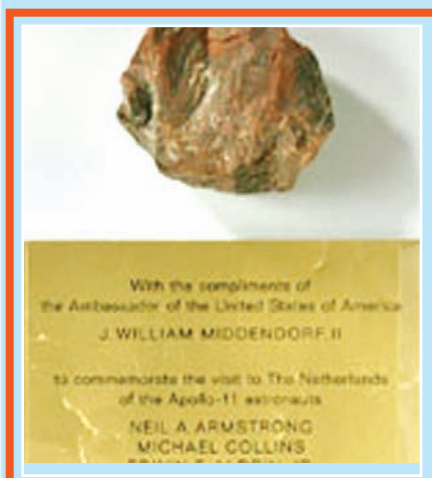

चांद का टुकड़ा जिसको माना, निकली वह बेकार सी लकड़ी

एक पत्थर, जिसे देखने के लिए दूर-दूर से लोग आया करते थे. उसकी झलक देखने के लिए टिकट ख़रीदते थे. ऐसा हो भी क्यों न, आख़िर वह चांद से जो आया था. हालांकि अब पता चला है कि वह चांद से नहीं आया, बल्कि वह पत्थर है ही नहीं, लकड़ी है. अब तक माना जाता था कि यह पत्थर अपोलो-11 के अंतरिक्षयात्री चांद से लेकर आए थे. हालैंड के राष्ट्रीय संग्रहालय का कहना है कि वे ठगे गए हैं क्योंकि जिस पत्थर के टुकड़े को वे चांद का टुकड़ा समझ रहे थे, असल में वह बस सख्त लकड़ी है और कुछ नहीं. संग्रहालय के कर्मचारियों के अनुसार उन्होंने इस पत्थर के टुकड़े को बहुत संभालकर रखा था, लेकिन वह लकड़ी का एक टुकड़ा भर है, जो पत्थर जैसा सख्त हो गया है. यह पत्थर पिछले 40 वर्षों से हॉलैंड की राजधानी एम्सटर्डम के संग्रहालय में रखा हुआ था और सभी लोग यही समझ रहे थे कि यह चांद की सतह से उठाया गया एक पत्थर है. संग्रहालय के निरीक्षकों ने इसे बेहद महत्व-पूर्ण वस्तु मानकर बहुत संभालकर रखा हुआ था. संग्रहालय को यह पत्थर वर्ष 1988 में पूर्व डच प्रधानमंत्री विलेम ड्रीस की मृत्यु के बाद मिला था. विलेम ड्रीस को यह पत्थर वर्ष 1969 में अमरीका के तत्कालीन राजदूत जे विलियम मिडेनडॉर्फ़ ने अपोलो-11 के तीन अंतरिक्षयात्रियों की हॉलैंड यात्रा के दौरान दिया था. तीनों अंतरिक्षयात्री चांद पर कदम रखने के बाद जायंट लीप नाम की एक सद्भावना यात्रा पर थे. हालैंड की एनओएस न्यूज़ से बात करते हुए मिडेनडॉर्फ़ ने कहा कि उन्हें यह पत्थर अमरीकी विदेश विभाग से मिला था, लेकिन इसके बारे में विस्तार से उन्हें बहुत कुछ याद नहीं है. हेग में अमेरिकी दूतावास ने कहा है कि वे मामले की जांच कर रहे हैं. कहते हैं कि विलेम ड्रीस की इस पत्थर के टुकड़े में बहुत दिलचस्पी थी लेकिन यह पत्थर चांद से नहीं आया है, इसके बारे में उन्हें कुछ पता नहीं है. एक वक़्त ऐसा भी था जब इस पत्थर का क़रीब डेढ़ मिलियन डॉलर यानी क़रीब साढ़े सात करोड़ का बीमा हुआ था. अब संग्रहालय का कहना है कि वे इस पत्थर को एक जिज्ञासा की वस्तु मानकर संभाल कर रखेंगे.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

हकीमुल्ला के हाथ तालिबान का जिहाद

पाकिस्तान में आतंक का एक नया चेहरा दुनिया के सामने आया है. बैतुल्लाह की मौत के बाद तहरीक-ए-तालिबान की कमान हकीमुल्ला ने संभाल ली है. बैतुल्लाह महसूद की मौत की पुष्टि हो चुकी है. बैतुल्लाह वह शख़्स था, जो अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान के तालिबान गुटों को एकजुट करने का माध्यम था. अब सबके सामने एक ही सवाल है. कौन है हकीमुल्ला महसूद? क्या वह बैतुल्लाह का असली वारिस बनने की ताक़त रखता है? क्या वह बैतुल्लाह की तरह अफगानिस्तान और पाकिस्तान के अलग-अलग तालिबानी गुटों में सामंजस्य बनाने में क़ामयाब हो पायगा. क्या सचमुच वह तहरीक-ए-तालिबान का सर्वमान्य नेता है? अगर इन सवालों का जवाब है तो अब देखना यह है कि उसके निशाने पर कौन आने वाला है?

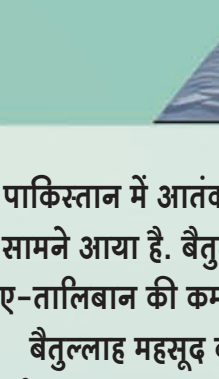

राहुल मिश्र

तहरीक–ए–तालिबान के एक ख़ौफनाक चेहरे, यानी बैतुल्लाह महसूद की कहानी ख़त्म हो चली है. वह 5 अगस्त 2009 को ड्रोन हमले में बुरी तरह घायल हो गया था. घायल होकर वह दक्षिणी वज़ीरिस्तान के किसी छोर पर अपनी आख़िरी सांसे गिन रहा था. आख़िरकार उसने 23 अगस्त 2009 को दम तोड़ दिया. इस हमले में उसके साथ उसकी पत्नी, ससुर और कुछ उसके नज़दीकी सुरक्षाकर्मी भी मारे गए. उसकी मौत के बाद से ही पाकिस्तान की तमाम तालिबानी ताकतें तहरीक़ –ए–तालिबान पर अपनी पकड़ मज़बूत करने में जुट गईं. बैतुल्लाह के दौर में ही उसके दो सबसे नज़दीकी डिप्टी चीफ हकीमुल्ला महसूद और वलीउर रहमान महसूद में भी वर्चस्व की लड़ाई शुरू हो गई थी. पाकिस्तान की सुरक्षा एजेंसी आईएसआई और विदेश मंत्रालय ने तो यहां तक दावा कर दिया कि हकीमुल्ला और वलीउर दोनों वर्चस्व की इस लड़ाई के दौरान हुई गोली–बारी में मारे जा चुके हैं. बहरहाल, तालिबान को पाकिस्तान के दावों को झुठलाने की आदत पड़ चुकी है. 26 अगस्त 2009 को हुई शूरा में हकीमुल्ला महसूद को तहरीक़ –ए–तालिबान का नया मुखिया चुन लिया गया. यह ख़बरें तालिबान के ही मार्फत उनके चुनिंदा मीडिया कर्मियों और मीडिया हाउसेज़ को मिलने लगी.

हकीमुल्ला महसूद, पुराने सरदार यानी बैतुल्लाह का दाहिना हाथ था. आतंक के कारोबार में उसपर ओरकज़ई, कुर्रम और ख़ैबर इलाके में दहशत कायम करना और तालिबानी जिहाद की जड़ों को मज़बूत करना था.

यह जानना दिलचस्प होगा कि पाकिस्तान के होम मिनिस्टर रहमान मलिक के दावे के मुताबिक तो बैतुल्लाह की मौत 5 अगस्त के ड्रोन हमले में ही हो गई थी. साथ ही, मलिक का यह बयान भी आ गया कि उसकी मौत के बाद शुरू हुई वर्चस्व की लड़ाई में डिप्टी चीफ हकीमुल्ला मारा गया. दूसरा डिप्टी वलीउर रहमान बुरी तरह से घायल हुआ. इस दावे के हिसाब से बैतुल्लाह की मौत की सच्चाई को तालिबान ने 19 दिनों के बाद स्वीकारा. हां, इन 19 दिनों के दौरान तहरीक–ए–तालिबान ने बैतुल्लाह का न केवल वारिस चुना, बल्कि उन लोगों (मुख़बिरों) की भी शिनाख्त की जिन्होंने अमेरिका या फिर पाकिस्तान को उसकी ख़बर दी. मतलब यह कि तालिबान ने पहले अपना घर दुरुस्त किया. मुख़बिरों को सज़ा दी और फिर आगे की लड़ाई के लिए नया सिपहसालार चुना. ओरकजई में शूरा कराई गई. वहीं, हकीमुल्ला को नया नेता चुना गया.

ओरकज़ई, हकीमुल्ला महसूद का गढ़ है. दक्षिणी वज़ीरिस्तान में वलीउर रहमान की तूती बोलती है. रिश्ते से बैतुल्लाह महसूद का भाई वलीउर उसके काफी करीब था. वलीउर, बैतुल्लाह की इकट्ठा की हुई आर्थिक संपदा का हिसाब– किताब रखता था. वज़ीरिस्तान के तमाम महसूद मानते हैं कि बैतुल्लाह अपनी मौत के बाद वलीउर महसूद को वारिस बनाना चाहता था.

वहीं हकीमुल्ला की भी पैदाइश महसूद सरज़मी दक्षिणी वज़ीरिस्तान में हुई. आतंक की दुनिया में हकीमुल्लाह ने वज़ीरिस्तान में पाकिस्तानी सेना के ख़िलाफ अपने कारनामों से खूब शोहरत बटोरी. इसके बावजूद, वह बैतुल्ला महसूद का य़कीन नहीं जीत सका. खासतौर पर रुपए–पैसों के मामले में बैतुल्लाह के लिए हकीमुल्ला एक बेईमान था. लिहाज़ा, उसे ओरकज़ई, खैबर और खुर्रम में ज़िहाद छेडने के लिए भेज दिया गया. हकीमुल्ला ने इन इलाकों में आतंक का जाल बुनने के साथ–साथ इसी रास्ते से अफगानिस्तान में नाटो सेना के लिए पहुंचाई जा रही रसद की जमकर लूटपाट की. यहां तक कि पाकिस्तान सेना के लिए यह नामुमकिन हो गया कि वे अमेरिकी रसद को सुरक्षित अपनी सरहद पार करा सकें. इसके साथ ही हकीमुल्ला ने इसी इलाके से नॉर्थ–वेस्ट फ्रंटियर प्रोविंस में आत्मघाती हमलों को अंजाम देना शुरु किया. अपने भाई कारी हुसैन महसूद की मदद से प्रशिक्षित किए हुए सैकड़ों युवाओं की आत्मघाती सेना तैयार कर ली. इनकी मदद से वह लगातार पाकिस्तान के गैर कबीलाई इलाकों में समय–समय पर अत्मघाती हमलों को अंजाम देता रहा. इसके अलावा, हकीमुल्ला ने इस इलाके में मौजूद अल्पसंख्यक शियाओं के खिलाफ़ भी एक अभियान शुरू किया. खुर्रम एजेंसी में हुसैन अली शाह की सरफरोशी में चल रहे सिपाही मोहम्मद अतिवादी आंदोलन को आड़े हाथों लिया. इसके बाद वह इलाकाई बाहुबलियों का भी चहेता बन गया. महज़ दो हज़ार की सैन्य टुकड़ी के साथ ओरकज़ई पहुंचे हकीमुल्ला की सैन्य क्षमता आठ हज़ार लड़ाकों तक पहुंच गई. ओरकज़ई में बैतुल्लाह की सरपरस्ती से दूर हकीमुल्ला ने कई कारनामे किए. ख़ैबर एजेंसी में नाटो सैनिक दस्तों पर कई सफल हमलों को अंजाम देकर उसने अपने लड़ाकों के लिए भारी मात्रा में आधिनिक असलहे और गोला बारूद के साथ–साथ कई सैन्य उकरण हासिल कर लिए. इसमें से कुछ असलहे और उपकरण उसने दक्षिणी वज़ीरिस्तान में लड़ रहे बैतुल्लाह के लड़ाकों के लिए भी भेजा, लेकिन ज्यादातर सामान उसने अपने लिए सुरक्षित रख लिया. पाकिस्तान की फ्रंटियर कॉन्सटिब्युलरी (एक सैन्य टुकड़ी का नाम) और अर्ध सैनिक बलों पर भी कई हमले करके उसने काफी असलहे और गोला–बारूद बटोर लिए थे. उसकी सैन्य क्षमता में हुए इज़ाफे से तहरीक–ए–तालिबान में यह साफ होने लगा था कि भले ही बैतुल्लाह का वारिस वलीउर रहमान महसूद बने, हकीमुल्ला तालिबान की सैन्य क्षमता का बेताज बादशाह बन चुका है. आज बैतुल्लाह की मौत के बाद भले ही उसके तीस हज़ार लड़ाके वलीउर रहमान की कमान में दक्षिणी वज़ीरिस्तान में तैनात है लेकिन अपने आठ हज़ार के लाव–लश्कर और गोला–बारूद के साथ हकीमुल्ला तहरीक़ –ए–तालिबान में अपना दबदबा बना चुका है. आतंक के जाल में आज सभी तालिबानी संगठनों को पाकिस्तानी सेना और नाटो के खौफ़ के खिलाफ मोर्चा बनाए रखने के लिए उसकी मदद की ज़रूरत है.

लिहाज़ा आज दक्षिणी वज़ीरिस्तान के महसूद तहरीक–ए–तालिबान में अपने तीस हज़ार लड़ाकों के साथ मोर्चा संभालेंगे. पाकिस्तानी सेना के खिलाफ़ मुहिम में वे वलीउर रहमान की सरपरस्ती में रहते हुए लड़ेंगे. वहीं, आठ हज़ार लड़ाके और सैकड़ों आत्मघाती हमलावरों की सेना हकीमुल्लाह के अधीन रहते हुए मोर्चा संभालेगी. वलीउर रहमान अगर तहरीक–ए–तालिबान की फंडिंग के लिए जिम्मेदार होगा तो वहीं गोला–बारूद और असलहों के लिए तहरीक के सभी संगठन हकीमुल्लाह की मदद लेते रहेंगे.

फिलहाल, बैतुल्लाह महसूद की मौत के झटके से उबर रहे पाकिस्तानी तालिबान ने इस शूरा के जरिए तहरीक़ –ए–तालिबान की एकता को दिखाने की कोशिश की है. इसके जरिए हज़ारों महसूद और गैर–महसूद तालिबानी लड़ाकों को एकजुट रखने की कवायद की गई है और बैतुल्लाह की मौत के बाद वर्चस्व की लड़ाई को ऐसे समय में टाल दिया गया है, जब पाकिस्तानी सेना के ऊपर तालिबान के सफाए का अंतरराष्ट्रीय दबाव बढ़ाता जा रहा है. ग़ौरतलब है कि 2007 में इस्लामाबाद की लाल मस्जिद पर कब्ज़ा करने के बाद से ही पाकिस्तनी तालिबान पर बैतुल्लाह महसूद की मज़बूत पकड़ बनी, जिसके चलते दक्षिणी वज़ीरिस्तान के महसूद तालिबान का दूसरा नाम बन गए. ओरकज़ाई में 23 अगस्त की शूरा में तहरीक–ए–तालिबान पाकिस्तान में महसूद वर्चस्व को लेकर किया गया समझौता कितना कारगर कारगर होगा यह तो आने वाला वक़्त ही बताएगा. अमेरिका पर हुए 11 सितंबर के हमले के बाद अफ–पाक इलाके में एक ख़ास बात देखने को मिली. जहां एक तरफ़ पाकिस्तान में हरकत.उल मुजाहिदीन टूट कर अलग हुआ और मौलाना मसूद अज़हर ने जैश–ए–मोहम्मद नाम से नया संगठन बना लिया वहीं जमात–उद–दवा से भी एक घटक अलग हुआ और ज़फर इकबाल और ज़की–उर–रहमान ने 2004 में कैरुन–नास नाम से नया आतंकी संगठन बना लिया. इसके अलावा, इस्लामिक जिहाद यूनियन, अल–कायदा, मुल्ला मोहम्मद ओमर का नया अफगानी तालिबान, तहरीक–ए–तालिबान पाकिस्तान जैसे कई संगठन अमेरिकी दबाव के चलते अपनी एकता बनाए ऱखने में सफल रहे हैं. इसलिए इस बात में कोई आश्चर्य नहीं कि बैतुल्लाह महसूद की मौत के बाद भी तहरीक़ –ए–तालिबान अपनी एकता कायम रखे और अमेरिका के साथ–साथ पाकिस्तान को भी चुनौती देता रहे.

पाकिस्तानी तालिबान भले ही संगठन के तौर पर एकजुट दिखता रहे लेकिन इतना साफ है कि तहरीके के अंदर अमेरिकी खुफिया एजेंसी घर करने लगी है. आज तहरीक के इसी महसूद वर्चस्व को तोड़ने में कामयाबी मिल रही है, और अमेरिका को वज़ीरिस्तान इलाके में ऐसे मेहसूद मिलने लगे हैं, जो डॉलर की चमक के आगे अपने कमांडरों की सूचना आसानी से उसे दे रहे हैं. यह, इन्हीं की सूचनाओं का असर है कि अमेरिकी ड्रोन हमले इतने प्रभावशाली है और वे धीरे–धीरे तालिबान की रीढ़ की हड्डी को कमज़ोर कर रहे हैं. 23 अगस्त की शूरा में कोशिश की गई है कि तालिबान को एकजुट रखना क्योंकि इस बार उनका मुकाबला महज़ पाकिस्तान की सेना या पुलिस से नहीं है, बल्कि एक ऐसी ताकत से है जो उनके ख़ात्मे के लिए दृढ़संकल्पित है और जिसके पास इस युद्ध में दुश्मन को कमजोर करने के लिए डॉलर की अथाह शक्ति भी है. यही वज़ह है कि हमें यह ख़बर भी मिल रही है कि तालिबान ने बैतुल्लाह के ससुर इक्रामुद्दीन को अपनी गिरफ्त में लेकर उसे मौत के घाट उतार दिया क्योंकि वह एक ऐसी कड़ी थी जिसने अमेरिकी ड्रोन को बैतुल्लाह तक पहुंचने में मदद की थी.

पंजाबी आतंकवादी संगठनों में से तीन ऐसे संगठन हैं जो तहरीक–ए–तालिबान के लगातार संपर्क में रहे हैं– जैश–ए–मोहम्मद स्वात घाटी में फजलुल्लाह के साथ मिलकर काम रही थी, हूजी के कारी सैफउल्लाह अख्तर दक्षिणी वज़ीरिस्तान में बैतुल्लाह महसूद के लड़ाकों के साथ मिलकर काम कर रहा था. वह शिया विरोधी लश्कर–ए–झांगवी के साथ कुर्रम, खैबर और ओरकज़ाई में हकीमुल्लाह के साथ मिलकर काम कर रहा था. जहां जैश–ए–मोहम्मद और पर तहरीक–ए–तालिबान को अभी भी पूरा भरोसा है, वहीं हूजी की गतिविधियों पर सवालियां निशान भी लग रहा है. आज पाकिस्तानी तालिबान हूजी को गद्दार मान रही है और उसे यह साफ हो चुका है कि हूजी या तो आईएसआई या फिर सीआईए और या फिर दोनों के ही इशारे पर काम कर रहा है.

पाकिसातन सेना और आईएसआई की मदद से बैतुल्लाह को खोज़ निकालने में मिली सफलता के बाद अमेरिका जलालुद्दीन हक्कानी के बेटे सिराजुद्दीन हक्कानी की तलाश में लग गया है. आज ड्रोन मिसाइलें उन जगह पर अपना कहर बरपा रही हैं जहां–जहां माना जाता है कि सिराजुद्दीन शिरकत कर सकता है. ख़ास बात है कि अमेरिकी ड्रोन हमले पाकिस्तानी तालिबान और अफगानिस्तानी तालिबान के खिलाफ केंद्रित है. जबकि इन हमलों की शुरुआत पूर्व राष्ट्रपति बुश के कार्यकाल के दौरान ओसामा बिन लादेन, अयमन अल–जवाहरी और दूसरे अलकायदा आतंकियों को निशाना बनाने के लिए हुई थी. लेकिन अफगानिस्तान में खुफिया ख़बरें बटोरने में अमेरिका को नाकामी मिली और ड्रोन हमलों में कोई भी बड़ा अल–क़ायदा आतंकवादी नहीं मारा जा सका. पाकिस्तानी तालिबान के खिलाफ अमेरिका के लिए ख़बर निकालना आसान रहा और एक–के बाद एक तालिबानी मारे जा रहे हैं. वहीं, अफ़गानिस्तानी तालिबानियों को खोजने में अमेरिका को अभी भी मुश्किल का सामना करना पड़े रहा है. अब यह देखना है कि आमिर की नई भूमिका में हकीमुल्ला तहरीक़ –ए–तालिबान के गढ़ के लिए ओरकजाई को चुनता है या फिर दक्षिणी वज़ीरिस्तान से ही आतंक की यह मुहिम ज़ारी रखता है. माना जा रहा है कि वह ख़ुद ओरकज़ई में रहने के लिए मज़बूर है क्योंकि दक्षिणी वज़ीरिस्तान में सीआईए की पैठ बन चुकी है और उस इलाके में उसकी शिरकत खतरे से खाली नहीं है. हकीमुल्लाह की कोशिश होगी कि अगले कुछ दिनों में सीआईए और आईएसआई के गुप्तचरों को एक–एक करके पहचान की जाए और उनका खात्मा किया जाए ताकि दक्षिणी वज़ीरिस्तान की दुर्गम पहाड़िया एकबार फिर आतंक के इस खेल को पनाह देने के लिए तैयार हो सके. लिहाजा, ओरकज़ई के साथ–साथ दक्षिणी वजीरिस्तान पाकिस्तानी तालिबान की किलेबंदी के लिए काफी महत्वपूर्ण है.

क्या बैतुल्लाह महसूद की मौत का बदला लेने के लिए किसी बड़े हमले को अंजाम दिया जाएगा. अगर हां तो इस हमले में अमेरिका, पाकिस्तानी सेना या फिर आईएसआई को शिकार बनाया जाएगा. अगर हमला अमेरिका पर होगा तो फिर यह हमला पाकिस्तान की सरहद के अंदर होगा या फिर कहीं और. यह कुछ महत्वपूर्ण सवाल हैं जिनका जवाब मौजूदा समय में नहीं दिया जा सकता.

फोटो–पीटीआई

> **“हकीमुल्ला महसूद, पुराने सरदार का दाहिना हाथ था. आतंक के कारोबार में उसपर ओरकजाई, कुर्रम और ख़ैबर एजेंसी में दहशत क़ायम करना और तालिबानी जिहाद की जड़ों को मज़बूत करना था.इससे पहले यह जानें कि हकीमुल्लाह कौन था, यह जान लेना जरूरी है कि पाकिस्तान के होम मिनिस्टर रहमान मलिक ने दावा किया था कि बैतुल्लाह की मौत 5 अगस्त के ड्रोन हमले में हो गई थी. उसकी मौत के बाद शुरू हुई वर्चस्व की लड़ाई में डिप्टी चीफ हकीमुल्ला मारा गया, वहीं दूसरा डिप्टी वलीउर रहमान बुरी तरह से घायल हुआ.”**

rahul@chauthiduniya.com

रमज़ान में रखें संतुलित खानपान

रीतिका सोनाली

रमज़ान का मुबारक महीना स्वस्थ शरीर और व्यक्तित्व के विकास के लिए एक सही मौक़ा है. रमज़ान में एक महीने का उपवास रोज़ेदार को आध्यात्मिक, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक लाभ पहुंचाता है. बस ध्यान यह रखा जाए कि इस दौरान खानपान का संतुलन बना रहे, वरना खानपान की गड़बड़ी रोज़ेदार के लिए स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं खड़ी कर सकती है. रमज़ान के महीने में लगभग 12 वर्ष की उम्र से लेकर बड़े-बूढ़े तक रोज़ा रखते हैं. ऐसे में हर किसी के शरीर में इसकी अलग-अलग प्रतिक्रिया होती है. अपोलो अस्पताल की न्यूट्रीशनिस्ट डॉ. करूणा चतुर्वेदी के अनुसार व्रत या रोज़ा दरअसल शरीर को डि-टॉक्सीफाई करने के लिए बेहतरीन उपाय हैं. हालांकि, एक महीने का उपवास काफी लंबा वक़्त है, इसलिए इसमें खाने-पीने की कुछ सावधानियां बरतनी ज़रूरी है. रोज़ा सुबह सूरज की पहली किरण से लेकर शाम को सूरज डूबने तक होता है. रोज़ेदार के शरीर का मेटाबोलिक रेट यानी चयापचय दर धीमा हो जाता है और दूसरे नियामक तंत्र काम करने लगते हैं. इस वक़्त शरीर में पहले से मौजूद और रोज़ा खोलने के बाद लेने वाले आहार में मौजूद फैट (वसा) दिनभर के कार्य के लिए इस्तेमाल होने लगता है. रोज़ेदार व्यक्ति के लिए रमज़ान के दिनों में आम दिनों में लिए जाने वाले भोजन की मात्रा से कम भोजन लेना ही सही है. इस वक़्त संतुलित आहार ब्लड कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखता है, गैस व एसिडीटी के साथ-साथ पाचन की परेशानी को दूर रखता है. रमज़ान के महीने में सहरी आम दिनों के सुबह के नाश्ते के जैसा होता है. यह माना गया है कि सुबह का नाश्ता दिनभर का सबसे ज़रूरी खाना होता है. इस समय शरीर को कई प्रकार के ऊर्जावर्धक, पुष्टिदायक तत्वों की ज़रूरत होती है और रमज़ान में तो पूरे दिन का उपवास होता है इसलिए कितनी भी नींद आए और जगकर खाने की इच्छा न हो, फिर भी इस वक़्त शरीर की ज़रूरत के हिसाब से संपूर्ण आहार लें. सहरी में फल, सब्ज़ियां, मांस, ब्रेड, दालें, दूध इत्यादि शामिल हो. इससे पूरे दिन भूख की वजह से होने वाले रोग जैसे सरदर्द, थकान, नींद आना, बेचैनी दूर रहती है. रमज़ान में रोज़े पूरे एक महीने तक चलते हैं, यह काफी लंबा वक़्त है. इस वजह से शरीर में अपच की संभावना ज़्यादा होती है. इससे बचने के लिए इस दौरान धीरे-धीरे और आसानी से पचने वाली फाइबरयुक्त चीज़ें लें. धीरे-धीरे पचने वाली चीज़ें पूरी तरह से पचने में लगभग आठ घंटे का समय लेती हैं, जबकि जल्दी पचने वाली चीज़ें 3 से 4 घंटे में पच जाती हैं. दानेदार खाद्य पदार्थ जैसे बार्ली, गेंहू, जौ, बाजरा, सूजी, बींस, दालें, बिना पॉलिश का चावल आदि में कॉम्प्लेक्स कार्बोहाइड्रेट होने की वजह से यह धीरे-धीरे पचते हैं. जल्दी पचने वाली चीज़ें जैसे मैदा इत्यादि में परिष्कृत यानी रिफाइंड कार्बोहाइड्रेट होता है जिससे भूख का अहसास पूरे दिन होता रहता है और पाचन तंत्र भी बिगड़ जाता है. सहरी के वक़्त कॉम्प्लेक्स कार्बोहाइड्रेट वाली चीज़ें लेना ही बेहतर होता है, जिससे दिनभर भूख का अहसास न हो. इस समय प्रोटीन भी अधिक मात्रा में लें, इससे कम भूख लगती है और वजन भी घटता है. प्रोटीन के लिए चिकन, लैंब, अंडा और सी-फूड लें. मांस से शरीर में कॉलेस्ट्रॉल का स्तर नियतिम रहता है और ब्लड- शुगर घटता है. शाम के इफ्तार से सोने के वक़्त तक ख़ूब सारा पानी और जूस पिएं, जिससे शरीर में फ्लूइड का स्तर सामान्य बना रहे. रोज़ेदार इस वक़्त चीनी की अधिक मात्रा न लें और ज़्यादा मसालेदार भोजन से परहेज करें. फलों का सेवन दोनों वक़्त के भोजन के बाद अत्यंत आवश्यक है. पेप्सी, चाय, कॉफी, धूम्रपान, शराब इत्यादि का सेवन न करें. इफ्तार के वक़्त शरीर को ऊर्जा की सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती है. इसलिए इस समय ग्लूकोज की मात्रा बढ़ाने वाली चीज़ें लें जैसे शरबत, खजूर, मिठाई. इन सबका सेवन संतुलित मात्रा में करें, पेट भरने के लिए नहीं. क्योंकि अधिक ग्लूकोज शरीर का संतुलन बिगाड़ सकता है. एक बात का ध्यान अवश्य रखें, रोज़े में ब्रश करने को दरकिनार न करें, यह बेहद ज़रूरी होता है. संभव हो तो नीम का दातुन इस्तेमाल करें.

रोज़ेदार व्यक्ति के लिए रमज़ान के दिनों में, आम दिनों में लिए जाने वाले भोजन की मात्रा से कम भोजन लेना ही सही है. इस वक़्त संतुलित आहार ब्लड कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखता है, गैस व एसिडीटी के साथ पाचन की परेशानी को दूर रखता है. रमज़ान के महीने में सहरी आम दिनों के सुबह के नाश्ते जैसा होता है.

ritika@chauthiduniya.com

आयुर्वेद बचाएगा स्वाइन फ्लू से

आयुर्वेद को सदियों से जीवनरक्षक के रूप में देखा गया है और इसे किसी भी प्रकार की बीमारी के इलाज के लिए कारगर समझा जाता रहा है. इन दिनों जब स्वाइन फ्लू का कहर चारों ओर बरपा हुआ है और आने वाले दो वर्षों तक इसके और अधिक फैलने की संभावना विश्व स्वास्थ्य संगठन ने जता दी है, इससे बचने का एकमात्र उपाय इससे बचाव ही है.

डाबर रिसर्च एंड डेवलपमेंट सेंटर के आयुर्वेद रिसर्च हेड डॉक्टर चंद्रकांत कात्याल के अनुसार प्राकृतिक औषधि, आहार और विहार से हर प्रकार के रोग दूर रहते हैं. स्वाइन फ्लू के लक्षण मौसमी फ्लू के जैसे ही बुख़ार, गले में दर्द, नाक बहना, बदन दर्द, सिरदर्द, कंपकपी और थकान होते हैं. इन सब लक्षणों के शिकार होने की वजह वायरस और बैक्टीरीया होते हैं जिससे बचने के लिए आर्युवेद में कई जड़ी-बूटियां हैं जैसे उड़ीसी, आंवला, अश्वगंधा इत्यादि. आम जन-जीवन में फ्लू को फैलने से रोकने के लिए तुलसी का सहारा लिया जा सकता है. हमारे देश में तुलसी को इसकी गुणवत्ता के लिए जीवन सुधा मानकर सदियों से पूजा जाता रहा है.

यही औषधि अब स्वाइन फ्लू के बचाव के रूप में और फ्लू से पीड़ित लोगों को जल्दी ठीक करने के लिए इस्तेमाल किए जाने की सलाह दी जा रही है. तुलसी शरीर के संपूर्ण रक्षा तंत्र को सुधारता है और किसी भी प्रकार की बीमारी को पास नहीं आने देता. तुलसी के इस्तेमाल से ही जापानी एनसेफलाइटिस को ठीक किया गया था और अब फ्लू से बचाव के भी यही उपाय अपनाए जा सकते हैं.

फ्लू के रोगी को जल्द स्वस्थ करने में भी तुलसी का बड़ा योगदान है. फ्लू से बचाव के लिए तुलसी के 20-25 ताजे पत्ते पीस कर खाली पेट दिन में दो बार लें. इससे शरीर की प्रतिरोधी क्षमता बढ़ जाती है और इस तरह फ्लू के वायरस से हमले की संभावना कम हो जाती है. इसके अलावा चाय में अदरक और काली मिर्च मिलाकर दिन के एक पहर लें तो प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है. शरीर की प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाने के लिए सुबह और शाम को पंद्रह ग्राम च्यवनप्राश का सेवन करें. विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियों से बना च्यवनप्राश फ्लू से बचाने में औषधि का काम करता है. इस वक़्त भोजन का ख्याल रखना भी ख़ास ज़रूरी होता है. ऐसे में भारी भोजन, मुश्किल से पचने वाले भोजन, तली-भुनी चीजें, मसालेदार खाने से परहेज रखें. बटर, चीज और डेयरी का पनीर ना लें. बासी या फ्रिज में रखा खाना न खाएं. वैसा खाना जिसमें प्रिर्जवेटिव, आर्टिफिसीयल फ्लेवर, रंग हों उससे परहेज रखें. सॉस, विनेगर, अचार, चटनी और मांसाहार न लें. रात को दही कभी न लें. ख़ूब पानी पीएं. नींद पूरी लें लेकिन दिन में न सोएं. फ्लू के आक्रमण से बचने के लिए यह ध्यान रखें कि कफ में वृद्धि ना हो वरना वायरस और बैक्टीरीया का आक्रमण आसानी से होता है. साथ ही नाक बंद न हो. इसके लिए सोते वक़्त नाक में दो बूंद सरसों का तेल डालें. कभी भी नाक बंद होने की स्थिति आए तो बिना वक़्त गंवाए गर्म पानी की भाप लेनी चाहिए.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

फ्लू से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक है टीबी

राहुल को तीन-चार दिनों से खांसी हो रही थी. चारों ओर स्वाइन फ्लू का ख़ौफ़ फैला देख वह भी घबरा गया. बिना वक़्त गंवाए वह संक्रमण के कारण का पता लगाने के लिए जांच करवाने गया. सबकी सलाह पर उसने पहले स्वाइन फ्लू का टेस्ट करवाया लेकिन राहत इस बात की थी कि उसे फ्लू नहीं हुआ था. हां, उसकी खांसी जारी रही. उसने दूसरे टेस्ट करवाए तब जाकर पता चला कि उसे ट्युबरकुलॉसिस है. दरअसल ग़लती राहुल की नहीं है, चारों ओर फ्लू का ही शोर है. किसी भी तरह की खांसी के मरीज़ भी स्वाइन फ्लू की जांच कराने जा रहे हैं. अजीब बात यह है कि इससे स्वाइन फ्लू का ख़तरा ही बढ़ रहा है क्योंकि दूसरी तरह के खांसी के मरीज़ भी जांच कराने के लिए संभावित फ्लू वालों की लाइन में खड़े हैं. इससे एक से दूसरे में संक्रमण फैल सकता है. स्वाइन फ्लू के शोर में कई ख़तरनाक बीमारियां नज़रअंदाज़ हो रही हैं. टीबी, ख़ासकर जो मल्टी-ड्रग रेसिस्टेंट हो, फ्लू से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक होती है.

दरअसल रेस्पिरेटरी सीक्रेसंस (सांस लेने वाले अंगों में विकार से होने हार्मोन की निकासी) दो प्रकार के होते है. जो सीक्रेसंस 5 माइक्रॉन से अधिक के आकार के होते हैं, वे एच1एन1 होते हैं. ये वातावरण में नहीं रुक पाते और सतह पर तुरंत जम जाते हैं. इनको ड्रॉपलेट इंफेक्शन कहते हैं. ऐसे में संपर्क में सावधानी बरतनी होती है और संक्रमित व्यक्ति से 3 फीट दूर रहना होता है. इस बीमारी के फैलने से रोकने के लिए सर्जिकल थ्री-लेयर वाला मास्क पहनना काफी होता है.

वहीं जो सीक्रेसंस 5 माइक्रॉन से कम के होते है उन्हें ड्रॉपलेट न्यूक्ली इंफेक्शन कहते हैं. यह हल्के होते है और मुक्त वातावरण में भी रह सकते है और एक जगह से दूसरी जगह में हवा के ज़रिए पहुंच जाता है, इसलिए इसमें ख़ास सावधानी बरतनी होती है, जिसके लिए एन95 मास्क की ज़रूरत होती है. इसके साथ ही रोगी को आइसोलेशन रूम में प्रति घंटे के हिसाब से छह बार हवा का बदलाव करना होता है, एचईपीए फिल्टर एक्जॉस्ट के साथ बंद कमरे में रखना होता है.

देश में अधिकतर केंद्रों/अस्पतालों में इस तरह की सुविधा नहीं है, जिससे टीबी को रोका जा सके. इसकी वजह से सिर्फ़ दिल्ली में ही हर साल 2500 लोग टीबी से मौत के शिकार होते हैं. डा.के.के.अग्रवाल का कहना है कि भारत में अगर टीबी से बचाव के तरीक़े अपनाए जाएं तो स्वाइन फ्लू पर अपने आप रोक लग जाएगी.

भारत में टीबी मृत्यु का एक बड़ा कारण है, जिससे हर तीन मिनट में दो लोग मौत के शिकार होते हैं और 1,000 लोग रोज़ाना मरते हैं. हर साल 3.7 लाख लोग मारे जाते हैं. अनुमान के मुताबिक हर साल 18 लाख नए मरीज़ इसका शिकार होते है. आठ लाख नए स्मीयर पॉजिटिव के मामले सालाना आते हैं, 75 नए स्मीयर पॉजिटिव टीबी मामले प्रति एक लाख की आबादी पर हर साल सामने आते हैं और यह भी अनुमान है कि टीबी के 5 फीसदी मरीज़ एचआईवी संक्रमित हैं.

भारत में टीबी फैलने की प्रमुख वजहें -

1. ड्रॉपलेट न्यूक्ली से बचाव के लिए कोई टीबी आइसोलेशन रूम निगेटिव प्रेशर वाला न होना. इस लक्ष्य को लागू करने के लिए दरवाज़ों को अनिवार्य रूप से बंद रखना होता है और निगेटिव प्रेशर की रोज़ाना पड़ताल की जाती है. जिस कमरे में मरीज़ हों, वहां प्रति घंटे छह बार हवा का बदलाव करना ज़रूरी होता है और यदि इमारत नई बनी हो तब प्रति घंटे 12 बार बदलाव की ज़रूरत होती है. हवा का निकास बाहर होना चाहिए जो दूर तक जाए और किसी के सीधे संपर्क में न आए. अगर दोबारा सामान्य वेंटिलेंशन न हो सके तो एचईपीए फिल्टर को एक्जॉस्ट के लिए अनिवार्य तरीक़े से लगवाना चाहिए.

2. अस्पतालों में रेसपिरेटरी प्रोटेक्शन के मास्क मौजूद नहीं होना. ये मास्क एक माइक्रॉन तक डायमीटर के इंफेक्शन को भी फिल्टर करते है. इनकी क्षमता कम से कम 95 फ़ीसदी के गुण वाली (एन95) जितनी होती है. इसका लो-रेट 50 एल प्रति मिनट होता है. यह मास्क व्यक्ति के चेहरे पर फिट होना चाहिए, जिसमें 10 फ़ीसदी से कम लीकेज हो. यह हर उम्र के मरीज के लिए अलग-अलग साइज में उपलब्ध होने चाहिए. सभी स्वास्थ्यकर्मियों को फिट और टेस्ट किए गए मास्क पहनने चाहिए और समय के हिसाब से इनकी टेस्टिंग भी होती रहनी चाहिए. जो स्वास्थ्यकर्मी एन95 मास्क का इस्तेमाल सही तरीक़े से नहीं कर पाते हैं, मसलन दाढ़ी के चलते तो इनको पावर्ड एयर प्यूरीफाइंग रेसपायरेटर (पीएपीआर) का इस्तेमाल करना चाहिए.

मास्क पहनने के पहले ध्यान दें-

1. जब कोई व्यक्ति आइसोलेशन रूम में प्रवेश करे और वहां पर मरीज़ हो तो मास्क की ज़रूरत पड़ती है.

2. जब व्यक्ति को खांसी आ रही हो या फिर ऐसी क्रिया के दौरान जहां सीक्रेसंस से उसका सामना हो जैसे कि ब्रांकोस्कोपी, थूक जमा करने के दौरान या एरोसोलाइज्ड पेंटामिडाइन देने के दौरान.

3. ऐसी जगह जहां पर प्रशासन की ओर से वातावरण को क़ाबू करने में दिक़्क़त हो, मसलन आपातकालीन परिहवन के वाहन.

4. आरएनटीसीपी कार्यक्रम के तहत बीमारी का जल्द पता लगाने और उपचार का तरीक़ा और इससे बचाव के लिए बदलाव की ज़रूरत होनी चाहिए.

डा. आर.पी. वशिष्ठ के अनुसार पल्मोनरी टीबी यानी फेफड़ों के टीबी होने पर सीने में दर्द, खांसी, शाम को बढ़ने वाला बुख़ार, बलगम के साथ खून आना, वजन कम होना जैसे लक्षण दिखाई देते हैं.

एक्सट्रा पल्मोनरी यानी ग्लैंड, मस्तिष्क, गुर्दे, हड्डी, आंत में होनेवाले टीबी में इन सब लक्षणों के बजाय गांठ बन जाती है. पल्मोनरी टीबी ड्रॉपलेट इंफेक्शन यानी हवा के संक्रमण से फैलता है. एक्सट्रा पल्मोनरी टीबी भी संक्रमण से ही होता है, यह वैसे लोगों को होता है जिनकी प्रतिरोधी क्षमता तेज़ होती है. ऐसे में संक्रमण फेफड़ों में असर ना करके ग्लैंड, मस्तिष्क, गुर्दे, हड्डी, आंत में असर करती है और वहां इंफेक्शन पैदा करता है. टीबी से बचाव के लिए डॉट्स का इस्तेमाल किया जाता है, जो हर सरकारी स्वास्थ्य केंद्र पर आसानी से उपलब्ध है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

मूर्ति तस्करों के साये में यूपी

सुरेंद्र अग्निहोत्री

उत्तर प्रदेश में भक्तों के लिए सावधान होने का समय आ गया है. अष्टधातु की प्राचीन मूर्तियां तस्करों और चोरों के निशाने पर है. मूर्ति तस्कर इतने दमदार हैं कि प्रदेश में पुलिस के राज को बिल्कुल धता बताने पर आमादा हो गए है. लगने लगा है कि यहां प्रशासन का नहीं, मूर्ति चोरों का राज चलता है. अभी लखीमपुर खीरी पुलिस ने 22 अगस्त को भगवान बुद्ध की सोने की मूर्ति के साथ दो बदमाशों को देवीबांध नहर के पास पकड़ा. उनके पास से बरामद मूर्ति की क़ीमत साढ़े तीन करोड़ रुपए थी. भगवान बुद्ध की अत्यन्त प्राचीन मूर्ति बरामद की यह मूर्ति कुशीनगर से चुराई गई थी. पकड़े गए मूर्ति चोरों के नाम पप्पू पटेल और विष्णु कुशवाहा हैं. इसी जनपद के राधाकृष्ण ठाकुर द्वार मंदिर में मूर्ति चोरों ने 20 जून 2009 को राधाकृष्ण की पांच मूर्तियां पुजारी को चकमा देकर चुरा ले गए थे. पंजाब पुलिस ने 26 जुलाई को भगवान बुद्ध की मूर्ति के साथ दो अपराधियों को गिरफ़्तार किया. यही नहीं, आगरा के 100 साल पुराने कृष्ण मंदिर से चोर अष्टधातु की मूर्ति ले जाने में कामयाब हुए. चित्रकूट के एसओजी टीम ने सात किलो वजन की गौतम बुद्ध की मूर्ति बरामद की, तो शाहजहांपुर में 231 वर्ष पुरानी चौकसी नाथ परिसर (हनुमान मंदिर) से राधाकृष्ण की अष्टधातु की मूर्ति चोरी हो गई. इतना ही नहीं, इसके अलावा भी कई सारे उदाहरण हैं, जहां चोरों ने मूर्तियों पर हाथ साफ किया. जैसे, वाराणसी के फूलपुर थाना क्षेत्र के श्रीराम जानकी मंदिर से, जौनपुर के खोतासराय थाना क्षेत्र के जानकी मंदिर से और आगरा के अछनौरा दिगंबर जैन मंदिर से अष्टधातु निर्मित मूर्ति इसी साल 16 जुलाई को माहीपुर सहारनपुर के पंचायती शिव मंदिर से चांदी की कृष्ण मूर्ति चोर चुराने में कामयाब हो गए.

सोनभद्र पुलिस ने 9 अगस्त को मूर्ति तस्कर छोटे मियां, बंशगोपाल, बंशीधर और मनोज को पकड़ा. उनके पास से चार करोड़ रूपए मूल्य की अष्टधातु निर्मित भगवान बुद्ध की प्रतिमा बरामद हुई. उनकी गिरफ़्तारी ने साफ कर दिया कि उत्तर प्रदेश में मूर्ति चोरों का मकड़जाल बुरी तरह से फैल गया है. इसी दिन जालौन जनपद के रामपुरा किरवाहा के प्राचीन मंदिर से बेशक़ीमती मूर्तियां चोरी हो गईं. इसके पहले इसी जनपद के गोवर्द्धनपुरा गांव के मंदिर से मूर्तियां चोरी हो चुकी है.

अष्टधातु निर्मित ढाई फुट लंबी 15 किलो वजन की राधा कृष्ण की मूर्तियों को भी तस्कर उठा ले गए. चोरी करने से पहले उन्होंने पुजारी को मंदिर में ही बांध दिया. 13 अगस्त को मुट्ठीगंज, इलाहाबाद पुलिस ने तस्कर कमलाकांत यादव को अष्टधातु से बनी भगवान महावीर की मूर्ति के साथ दबोचा. इस मूर्ति चोर ने बताया कि इलाहाबाद और कौशांबी जनपद में अनेक मूर्ति चोरियों में शामिल रह चुका है. मथुरा जनपद पुलिस की एसओजी टीम ने मुठभेड़ के दौरान दो तस्करों को अष्टधातु की तीन मूर्तियों के साथ धर दबोचा. पकड़े गए तस्करों में लक्खी और इंद्रजीत थे. इनके पास से भगवान बुद्ध और राधाकृष्ण की मूर्ति बरामद हुई. इसी तरह, बहराइच में पकड़ी गई 16 करोड़ मूल्य की अष्टधातु की प्रतिमाएं 16 वर्ष पहले झांसी जनपद के मऊरानीपुर तहसील के एक मन्दिर से चुराई गई थी. बहराइच पुलिस ने स्पेशल ऑपरेशन के तहत चार अप्रैल को इस मूर्ति तस्कर गिरोह को गिरफ़्त में लिया था. इस वर्ष एक जनवरी को राजधानी लखनऊ की पुलिस ने अल्लाजानी और शहजाद नाम के दो तस्करों के पास से राधा-कृष्ण की अष्टधातु से निर्मित दो करोड़ रुपए मूल्य की मूर्तियां बरामद की थी. इस घटना के कुछ ही दिनों के बाद गोरखपुर क्षेत्र की सहजनवा पुलिस ने 12 जनवरी को 10 करोड़ मूल्य की भगवान सीताराम की मूर्तियों के साथ तीन तस्करों को गिरफ़्तार किया था.

इस घटना के थोड़े दिन बाद 20 फरवरी को कानपुर देहात के घाटमपुर क्षेत्र के ग्राम भदरस स्थित राधाकृष्ण मंदिर से चुराई गई अष्टधातु की 85 किग्रा वजनी मूर्तियों के साथ पांच तस्करों को गिरफ़्तार किया था. इनमें श्याम जी गुप्ता, अंकित कुशवाहा, सोनू चिकना, अंकुर सिंह और मोहम्मद हसीम थे. ये सभी बोलेरो गाड़ी (नंबर-यूपी 77 डी 6697) से इन मूर्तियों को बेचने के लिए ले जा रहे थे. 21 मई को एटा जनपद के जलेसर क्षेत्र के जैन मन्दिर से अष्टधातु की मूर्तियां चोरों ने चुरा ली. इसी दिन आजमगढ़ जनपद पुलिस ने चेकिंग के दौरान योगेंद्र, अजय कुमार, रमेश निषाद तथा रामचंद्र को तीन किग्रा वजन की भगवान बुद्ध की अष्टधातु की प्रतिमा के साथ गिरफ़्तार किया. 13 जून को फैज़ाबाद जनपद के अयोध्या कोतवाली क्षेत्र के अंतर्गत श्रृंगार घाट से ग्रेट स्टोन का दुर्लभ कटोरा बरामद किया. इस कटोरे की क़ीमत 25 लाख रुपए आंकी गई. 19 जून को बकेवर, इटावा के ग्राम धर्मपुरा के महामाया देवी मंदिर से अष्टधातु की भगवान बुद्ध की बहन महामाया की मूर्ति चोरी कर ली गई. ललितपुर जनपद के तालबहेट क्षेत्र के एक जैन मन्दिर से भी मूर्तियां चुराने का मामला इसी समय प्रकाश में आया.

पिछले दो दशकों से उत्तर प्रदेश मूर्ति चोरों की गिरफ़्त में बड़ी तेज़ी से आ गया है. पहले प्राचीन दुर्लभ मूर्तियां पाषाण निर्मित ही चुराई जाती रही, लेकिन विगत दो तीन वर्षो से अष्टधातु की मूर्तियां तस्करों के निशाने पर है. सच्चाई यह है कि उत्तर प्रदेश में लखनऊ, वाराणसी, झांसी तथा चित्रकूट, इलाहाबाद, कानपुर, आजमगढ़ मंडल मूर्ति तस्करों की गिरफ़्त में आ चुके हैं. प्रदेश के पूर्वांचल से पिछले एक वर्ष के दौरान लगभग सौ करोड़ रुपए की प्राचीन मूर्तियों चोरी हो चुकी हैं. आज, मकड़जाल की तरह फैले चुके माफ़िया नेटवर्क के निशाने पर प्रदेश की दुर्लभ अष्टधातु की प्राचीन मूर्तियां हैं. जरायम की दुनिया में पिछले एक दशक के दौरान मूर्ति चोरी एक हाई क्लास परफामेंस व ईज़ी टारगेट के रूप में उभरी है. क्यों चोरी हो रही हैं अष्टधातु की प्राचीन मूर्तियां? सोने चांदी की मूर्तियों पर माफ़ियाओं की नज़र क्यों नहीं? यदि गाहे बगाहे सोने चांदी की कोई मूर्ति चोरी हो भी जाती है तो इसे छुटभैया लोगों का काम मान लिया जाता है.

सारनाथ से चोरी की गयी भगवान बुद्ध की स्वर्ण प्रतिमा का मामला अपवाद माना जा सकता है. यह प्रतिमा स्वर्ण के कारण नहीं वरन एंटिक पीस के कारण ही बेशक़ीमती थी. इस एक मामले में यह कहा जा सकता है कि इस मूर्ति को चोरी करने वाले अनाड़ी थे क्योंकि वहीं सामान्य तरीक़े से रखा भगवान बुद्ध का दांत इन्होंने नहीं उड़ाया जबकि इसकी क़ीमत मूर्ति की क़ीमत से कई कई गुना ज़्यादा है. एंटिक पीस की मूर्तियों को खुले बाज़ार में नहीं बेचा जा सकता. इस काले कारोबार के दस्तूर के अनुसार चोरी के पहले ही प्रतिमाओं का सौदा हो चुका है. जब सौदे की पेशगी अदा हो चुकी होती है तब चोरी की घटना को अंजाम दिया जाता है.

सोनभद्र पुलिस ने 9 अगस्त को मूर्ति तस्कर छोटे मियां, बंशगोपाल, बंशीधर और मनोज को पकड़ा. उनके पास से चार करोड़ रूपए मूल्य की अष्टधातु निर्मित भगवान बुद्ध की प्रतिमा बरामद हुई. उनकी गिरफ़्तारी ने साफ कर दिया कि उत्तर प्रदेश में मूर्ति चोरो का मकड़जाल बुरी तरह से फैल गया है. इसी दिन जालौन जनपद के रामपुरा किरवाहा के प्राचीन मंदिर से बेशकीमती मूर्तियां चोरी चली गईं. इसके पहले इसी जनपद के गोवर्द्धनपुरा गांव के मंदिर से मूर्तियां चोरी हो चुकी हैं.

प्रदेश की बड़ी घटनाओं पर नज़र डालें तो पाएंगे कि अब तक की सबसे बड़ी मूर्ति चोरी बीते वर्ष 2006 जनवरी के दूसरे सप्ताह में मऊ के रैकवारडीह ग्राम में हुई. श्रीराम, लक्ष्मण और जानकी की 173 किलो वजनी अष्टधातु की सैकड़ों वर्ष प्राचीन प्रतिमाओं को चोरों ने चुरा लिया था. इसी जनपद में 9 नवंबर 05 को हलधरपुर थाना क्षेत्र के चकरा ग्राम स्थित मंदिर से चोर श्रीराम, जानकी और हनुमान की अष्टधातु की प्राचीन मूर्ति ले उड़े. क़ीमत आंकी गई 90 लाख रुपए. इसी जनपद के घोसी कोतवाली के सेमली जमालपुर और मुहम्मदाबाद के कोठियां ग्राम से अष्टधातु की मूर्तियां चोरी हो गई. मिर्ज़ापुर के मड़िहान थाना क्षेत्र के अमोई ग्राम स्थित शिवमंदिर से अष्टधातु की दो प्राचीन मूर्तियां लगभग एक वर्ष पूर्व चोरी हो गईं. बलिया के दोकती थाना क्षेत्र के लच्छूटोला ग्राम में सनेही डाक की मठिया में चोरों ने हाथ साफ कर दिया और गोपाल जी की चार किलो वजनी अष्टधातु की प्राचीन मूर्ति उठा ले गए. इसी जनपद के सिकंदरपुर थाना क्षेत्र के कथौरा ग्राम में जंगलीबाबा के विख्यात मंदिर से राम, लक्ष्मण जानकी और लालजी भगवान की अष्टधातु की मूर्तियां चोरों ने उड़ा दीं. यहीं मनिहर थाना क्षेत्र के बड़ासरी में ठाकुरजी के मंदिर से राम, लक्ष्मण की प्राचीन मूर्ति चोरों ने झटक ली. सोनभद्र के रौप गांव में कालभैरव बाबा की मूर्ति चोरी चली गई तो गाजीपुर में दुलहपुर के ददरा ग्राम स्थित मंदिर से चोरों ने राम, लक्ष्मण, जानकी, राधा और कृष्ण की मूर्तियां साफ कर दीं. चंदौली के धीना थाना क्षेत्र के ग्राम महुली स्थित मंदिर से बलभद्र व तीन अन्य देवों की बेशक़ीमती मूर्तियां चोरों ने ग़ायब कर दीं. घटनाओं की एक लंबी और अंतहीन कड़ी है. एकाध मामले को छोड़ किसी चोरी का पर्दाफाश नहीं हो पाया. मिर्जापुर के शिवनाथपुर स्थित पांच मंदिरों में एक साथ चोरी हुई, लेकिन मंदिर में ऐसी छोटी चोरियां अब सुर्खियां नहीं बटोरती हैं. ख़तरा तो अष्टधातु की प्राचीन मूर्तियों पर है. पिछले दिनों राजधानी की पुलिस ने अष्टधातु की बेशक़ीमती मूर्तियों के साथ तीन बदमाशों को गिरफ़्तार किया था. बरामद प्राचीन मूर्तियां जैन तीर्थंकर भगवान महावीर व बाहुबली की हैं. अंतरराष्ट्रीय बाजार में इनकी क़ीमत क़रीब चार करोड़ रुपए आंकी जा रही है.

बुंदेलखंड की बड़ी घटनाओं पर नज़र डालें तो पाएंगे कि अब तक के सबसे बड़े, मूर्ति चोरों का गिरोह बांदा में गिरफ़्तार हुआ है. उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के दो मंदिरों से चोरी की गई 13 बहुमूल्य मूर्तियों के साथ मूर्ति चोर गिरोह के 10 गुर्गों को गिरफ़्तार कर लिया गया है. बरामद मूर्तियों की क़ीमत अंतरराष्ट्रीय बाजार में लगभग एक करोड़ रुपए बताई जा रही हैं. पुलिस ने गिरोह को उस वक़्त दबोचा जब एक घर से मूर्तियों का सौदा किया जा रहा था. मूर्ति चोरों के पास 315 बोर की एक देसी राइफल भी बरामद हुई.

तत्कालीन पुलिस अधीक्षक के. सत्यनारायण ने सटीक ख़बर मिलने पर एसओजी प्रभारी अभिमन्यु सिंह यादव, अतर्रा थानाध्यक्ष ए यू सिद्दीकी और गिरवां थानाध्यक्ष धनंजय सिंह ने पुलिस जवानों के साथ अतर्रा थाना क्षेत्र के बजरंगपुर गांव में चिरौंजीलाल विश्वकर्मा के घर छापा मारा. वहां मूर्तियों की ख़रीद-फरोख्त की बातचीत चल रही थी. गिरोह के सदस्य वहीं मौजूद थे. पुलिस ने घेराबंदी कर सभी दस चोरों को दबोच लिया. इनके पास से 13 मूर्तियां भी बरामद हो गई. पकड़े गए मूर्ति चोरों में चिरौंजीलाल पुत्र शिवराम बढ़ई निवासी ग्राम बजरंगपुर, थाना अतर्रा, शिव शर्मा दीक्षित पुत्र चंद्रिका प्रसाद निवासी ग्राम ओरहा, थाना अतर्रा, धनंजय पुत्र कालीचरन अवस्थी निवासी बिसंडा, रामबिहारी पुत्र बसंतलाल निवासी राजनगर, नरैनी, सत्यस्वरूप पुत्र शिवगोपाल निवासी बिज्जूपुरवा, थाना-कालिंजर, गंगा पुत्र शंभू यादव निवासी ग्राम पहड़िया बुजुर्ग, थाना-भरतकूप (चित्रकूट), राधाकृष्ण पुत्र रामकिंकर सोनी निवासी खोही (चित्रकूट) और सचिन पुत्र लक्ष्मी शर्मा निवासी कटरा बाज़ार अतर्रा शामिल है. एसपी ने बताया कि मूर्ति ख़रीदने और बेचने का सौदा राधाकृष्ण सोनी जरिए हो रहा था. इन्होंने बताया कि बरामद मूर्तियां बांसी गांव और मध्य प्रदेश के पन्ना जनपद के अजयगढ़ में स्थित बरकोला मंदिर से चुराई गई थी. अमूमन मूर्तियों की चोरी सीमाओं पर होती है ताकि एक दूसरे क्षेत्र में प्रवेश कर पुलिस की गिरफ़्त से बच सकें. ललितपुर जनपद के देवगढ़ में दशावतार मंदिर काल के थपेड़ों को झेल रहा है. इसके कराहने की आवाज़ से पुरातत्व विभाग के अधिकारी बेख़बर हैं. कुछ यही दशा चौथी शताब्दी की विश्व प्रसिद्ध नर-वाराह की आदमकद प्रतिमा की है, जिसे मूर्ति तस्करों ने तीन हिस्सों में काट कर चोरी कर लिया. इसे बरामद तो कर लिया गया, लेकिन कई वर्षों से सरकारी मालखाने में धूल फांक रही इस देव प्रतिमा को जीर्णोद्धार का इंतज़ार है. सामाजिक कार्यकर्ता गिरीश पटैरिया कहते है कि देश के उत्तर-मध्य क्षेत्र में मौजूद भारतीय कला संस्कृति के महत्वपूर्ण अवशेषों को समाप्त करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर के गिरोह सक्रिय हैं जो हमारे अतीत के गौरव को ख़त्म कर रहे हैं.

बेतवा नदी के किनारे देवगढ़ के मैदानी भाग में गुप्तकालीन दशावतार मंदिर स्थित है. यहाँ अतीत से लेकर कालांतर तक बनाई गई मूर्तियों व मंदिरों का स्वर्णिम अतीत छिपा हुआ है. देवगढ़ के मैदानी भाग में गुप्तकालीन दशावतार मंदिर स्थित है. इसका निर्माण चौथी शताब्दी के आस-पास कराया गया था. उत्तर प्रदेश की कला संस्कृति के महत्वपूर्ण अवशेषों के प्रति प्रदेश सरकार की उदासीनता उनको धीमे-धीमे समाप्ति की ओर धकेल रही है.

feedback@chauthiduniya.com

मीडिया वाच

दिखाओ वही, जो बिकता है

व्यालोक

आपको एक राज़ की बात पता है. मधुर भंडारकर, जो आजकल की तथाकथित रियलिस्टिक फिल्मों के पुरोधा और कई प्रतिभाओं के गॉडफादर माने जाते हैं, की पहली फिल्म बिना किसी निशान के डूब गई थी. जी हां, आज के *मिडास टच* वाला यह फिल्मकार भी जब बॉलीवुड के कुचक्र में फंसा था, तो उसने भी फार्मूलों से अटी-फंसी फिल्म बना डाली थी. वह फिल्म थी-*त्रिशक्ति*. उस फिल्म का क्या हश्र हुआ, वह तो ख़ैर बाद की बात, लेकिन ज़रा सुन लीजिए कि मधुर का इस बारे में क्या कहना था. मधुर इस मसले पर बोलते हुए सदियों पुरानी बहस को फिर से छेड़ देते हैं. उनका कहना है कि उस फिल्म को बनाते वक़्त उन्होंने कई लोगों की बात सुन ली और इसी वजह से वह फिल्म न रहकर रायता बन गया. ख़ैर, मधुर अब खुश हैं कि वह अपनी तरह की फ़िल्में बना रहे हैं.

इसी जगह पर हम अपने अख़बार के कई अंकों में मीडिया(जिसमें टीवी, अख़बार, फिल्म आदि सभी माध्यम शामिल हैं) की दशा और दिशा पर काफी बहस कर चुके हैं. सवाल यह है कि क्या हमारे मर्सिया पढ़ने का कोई असर भी हो रहा है, या हम अरण्य-रोदन ही कर रहे हैं. ख़बरिया चैनलों के हमारे धुरंधरों की कमी नहीं है, जो मौक़ा मिलते ही दर्शकों की पसंद का अपना पसंदीदा और मुफ़ीद आनेवाला राग अलापने लगते हैं. बड़े-बड़े संपादक पूरी बेशर्मी से लिखित और मौखिक तौर पर तर्क देने लगते हैं कि भई, हम जबरिया तो किसी को कुछ दिखाते नहीं. अगर किसी को कुछ पसंद नहीं, तो फिर रिमोट उसके पास ही है. वह उसे बंद भी तो कर सकता है.

व्यावसायिक लोग यह सवाल उठाते हैं कि अगर वे बाज़ार की न मानें तो फिर आख़िर अपनी लागत कैसे निकालें? यह सचमुच वही दुष्चक्र है, जहां से हम बैक टू स्क्वायर वन हो जाते हैं. सेक्स बिकता है, बेचो. धर्म बिकता है, बेचो. एलियन बिकता है, बेचो. सांप-बिच्छू बिकते हैं, बेचो. यानी, वह सब कुछ बेच डालो, जिससे मुनाफा मिल सके.

यह बहस तो ख़ैर अंतहीन है. पसंद और आपूर्ति की आड़ में काफी दिनों से यह खेल चल रहा है. हालांकि सवाल तो यह भी लाज़िमी है, कि आख़िर उन्हीं कार्यक्रमों की टीआरपी सबसे अधिक क्यों होती है, जिनको हमारे और आपके जैसे दर्शक बाद में पानी पी-पीकर कोसते हैं. इस बारे में एक बड़ी मज़ेदार बात घाट-घाट का पानी पिए मेरे एक सीनियर पत्रकार मित्र ने दिया. वह कई ख़बरिया चैनलों और अख़बारों की यात्रा कर फ़िलहाल हरियाली फैलाने वाले एक अंतरराष्ट्रीय एनजीओ में संपादक की कुर्सी पर विराजे हैं. कैफे कॉफी डे में कॉफी की चुस्कियां लेते हुए उन्होंने कहा कि भई, यह समस्या तो गंभीर है, लेकिन लोगों की पसंद के नाम पर क्या आप कल को ब्लू फिल्मों का प्रसारण शुरू कर सकते हैं. उन्होंने हालांकि इस बात को स्वीकार किया कि हरेक उस कार्यक्रम की टीआरपी अधिक होती है, जो कहीं से भी विवादित हो. हालांकि, तुरंत ही उन्होंने अपनी ही बात को सुधारते हुए कहा कि विवादित से भी अधिक कहें तो थोड़ी भी लीक से अलग जो भी स्टोरी है, वह हिट है. यही वजह रही कि राखी सावंत ने अपनी इमेज के उलट जब एक लजीली कन्या का रूप धारण कर स्वयंवर कराया, तो चैनल टीआरपी बटोरने लगा. अपनी बात आगे बढ़ाते हुए मित्र ने कहा कि देखो न, *इस जंगल से मुझे बचाओ* में जैसे ही फिज़ा या श्वेता तिवारी की छुट्टी हुई, वैसे ही झरने के नीचे नहाने के लिए निगार ख़ान को बुला लिया गया.

मेरे मित्र ने अपनी बात को समाप्त करते हुए कहा कि हमारे जैसे लोग महज़ गाली देने के लिए ही सही, लेकिन वही कार्यक्रम ज़रूर देखते हैं. शो चाहे *सच का सामना* हो, या *इस जंगल से मुझे बचाओ* या कोई और.

मुर्गी पहले कि अंडा की तरह ही, यह बहस भी अंतहीन है. हालांकि उस मित्र की बातों में मुझे सार दिखाई पड़ता है. आप *दादागीरी* नाम के शो को देख लीजिए. वहां तो किसी प्रतियोगी को बाहर निकालने के लिए इस क़दर बेइज़्ज़त किया जाता है कि शर्म को भी शर्म आ जाए. इस शो में बाहर जाने वाले प्रतियोगी के मुंह पर बाक़ी प्रतियोगी कीचड़ फेंकते हैं. इसे देखने के बाद आपको यही ख्याल आएगा कि अब बस एक चीज़ ही किसी शो में होनी बाक़ी रह गई है. वह है-प्रतियोगियों का किसी निर्णायक के जूते को अपनी जीभ से साफ़ करना, या अपने पिछवाड़े को पूरी तरह उघाड़ देना.

व्यावसायिक लोग यह सवाल उठाते हैं कि अगर वे बाज़ार की न मानें तो आख़िर अपनी लागत कैसे निकालें? यह सचमुच वही दुष्चक्र है, जहां से हम *बैक टू स्क्वायर वन* हो जाते हैं. सेक्स बिकता है, बेचो. धर्म बिकता है, बेचो. एलियन बिकता है, बेचो. सांप-बिच्छू बिकते हैं, बेचो. यानी, वह सब कुछ बेच डालो, जिससे मुनाफ़ा मिल सके.

अंत में, फिर अपने उसी दोस्त की बात याद आती है. मीडिया का पूरा खेल दरअसल तनी हुई रस्सी पर चलने की बाज़ीगरी सरीखा है. हरेक पिता जानता है कि शादी के बाद उसका बेटा क्या करने वाला है, लेकिन क्या बेटा इसी वजह से अपने पिता की आंखों की परदेदारी ख़त्म कर देगा. मीडिया को भी आंखों की इसी शर्म को बचाने की ज़रूरत है.

vyalok@chauthiduniya.com

राशिफल

(7 सितंबर से 13 सितंबर तक)

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)

मनोरंजन के अवसर आएंगे. सभा-समारोहों का आयोजन कर सकते हैं. किसी को कोई ग़लत बात न कहें, क्योंकि विवाद की स्थिति बनी हुई है. आपने जो कामना की थी, वह पूरी हो जाएगी. जीवनसाथी के स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. किसी अनचाही यात्रा पर जाना पड़ सकता है.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)

आत्मविश्वास में बढ़ोतरी होगी. प्रतियोगी परीक्षा में सफलता मिलेगी. श्रम का उचित फल अवश्य मिलेगा. समाज में ख़ूब इज़्ज़त प्राप्त करेंगे. किसी मित्र की बातों में आने से बचें. छोटी बात पर ख़ुश होकर कोई जोख़िम भरा कार्य करने की न सोचें.

मिथुन (21 मई से 20 जून)

परिवार के बुज़ुर्गों का सहयोग मिलेगा. यात्रा की स्थितिया बन रही हैं, जो लाभदायक हो सकती है. रचनात्मक कार्यों की दिशा में किया जा रहा प्रयास सफल होगा. स्वास्थ्य संबंधी परेशानी आ सकती है. चिकित्सक से समय-समय पर सलाह अवश्य लें. आर्थिक मामलों पर चल रहा प्रयास सफल रहेगा.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)

घर में भौतिक सुख-सुविधाओं की वस्तुएं बढ़ेंगी, लेकिन अधिक ख़र्च होने की संभावना भी है. फ़िज़ूलख़र्ची आर्थिक स्थिति को असामान्य करेगी, उसके प्रति सचेत रहें. सत्ता का सहयोग मिलेगा. संबंधित अधिकारी या पिता से चली आ रही बहस ख़त्म हो जाएगी. स्वास्थ्य पर ध्यान दें.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)

आप काफी लंबे समय से जिस वस्तु को पाने की सोच रहे थे, वह आपको मिल जाएगी. समाज के कार्यों में अधिक व्यस्त होने की वजह से मनोरंजन के अवसरों का आनंद नहीं उठा पाएंगे. घर पर किसी अतिथि के आने से आपका मन बेहद ख़ुश होगा. आलस्य की भावना पर नियंत्रण आवश्यक है.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)

कार्यस्थल और आस-पास के माहौल में सहयोगियों का भरपूर सहयोग मिलने की संभावना बनी हुई है. संतान के दायित्व की पूर्ति होगी. किसी मूल्यवान वस्तु के खोने की आशंका है. दुश्मनों से ख़तरा मोल न लें तो अच्छा रहेगा. आपको छोटी-मोटी यात्रा करनी पड़ सकती है. दूसरों से कार्य निकालने में सफल होंगे.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)

मकान, संपत्ति एवं ज़मीन आदि को लेकर चली आ रही समस्या का समाधान हो जाएगा. आप किसी यात्रा पर जा रहे हैं तो अपने सामान की सुरक्षा के प्रति सचेत रहें. आप अगर घर में किसी मांगलिक कार्य की दिशा में सक्रिय हैं, तो उसमें सफलता मिल सकती है. देवदर्शन के योग हैं.

वृश्चिक (21 अक्तूबर से 20 नवंबर)

किसी को अप्रिय बात कह देने से विवाद की स्थितियां उत्पन्न हो सकती है. आपके कुछ कार्य सफल होंगे, जिनकी वजह से आपको उपहार और सम्मान प्राप्त होंगे. अगर आप किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता के योग बने हुए है. विरोधी सक्रिय रहेंगे.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)

आप कुछ नया करने की सोचेंगे तो उसमें सफलता मिलेगी. कुछ ऐसा काम न करें जिससे बेकार की परेशानी का सामना करना पड़े. आय के क्षेत्र में वृद्धि के साथ ही अगर कोई परिवर्तन करने की सोच रहे हैं तो उसमें भी सफलता मिलेगी. निकट संबंधियों से प्रगाढ़ता बढ़ेगी.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)

काम अधिक रहेगा, जिसकी वजह से व्यस्तता भी बढ़ी रहेगी. व्यस्त रहने के कारण स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है, इसलिए स्वास्थ्य पर ध्यान अवश्य दें. दूसरों से कार्य निकालने में सफलता प्राप्त होगी. पारिवारिक दायित्व की पूर्ति होगी.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)

जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. अपनी वाणी की मधुरता के कारण हर तरफ़ सम्मान मिलेगा. कहीं दूर जाने की सोच रहे हैं तो अवश्य जाएं क्योंकि यात्रा सफल साबित होगी. उदर विकार हो सकता है. उन्नति का नया मार्ग बनेगा.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)

किसी अधीनस्थ कर्मचारी का भरपूर सहयोग प्राप्त होगा साथ ही किसी संबंधित अधिकारी से अनबन की स्थिति भी पैदा हो सकती है जिसके कारण आपको तनाव हो सकता है. वाणी पर सौम्यता बनाएं रखने में ही भलाई है. राजनैतिक दिशा में चल रहा प्रयास सफल होगा.

ज्योतिषाचार्य पं. सुदर्शन

दो जन्मदिन, दो अहसास

अनंत विजय

पिछले हफ़्ते साहित्य से जुड़ी दो हस्तियों के जन्मदिन के अवसर पर जाना हुआ. दिल्ली के ऑफिसर्स क्लब में हंस संपादक राजेंद्र यादव का जन्मदिन मनाया गया, जिसमें साहित्य और पत्रकारिता से जुड़े सौ से ज़्यादा लोग मौजूद थे. राजेंद्र यादव के जन्मदिन समारोह का एक बेहद दिलचस्प निमंत्रण पत्र मिला था जो उनकी बेटी रचना यादव ने भेजा था. रचना ने लिखा था- 28 अगस्त को राजेन्द्र यादव यानी मेरे पापू अस्सी वर्ष पूरे कर रहे हैं. उन्हें इस बात का एहसास दिलाने के लिए मुझे आपका सहयोग चाहिए. मुझे बहुत खुशी होगी यदि पापा के ख़ास दोस्त होने के नाते आप मेरे निमंत्रण को स्वीकार करें. चाहे प्रशंसा करते हुए आएं या भर्त्सना, लेकिन आएं ज़रूर. बेहद सुरुचिपूर्ण काग़ज़ और हाथ से लिखा था यह पत्र. ज़ाहिर था वहां जाना ही था. वहां पहुंचा तो महफिल सज चुकी थी और रसरंजन का दौर जारी था. कई साहित्यकार अपनी रौ में आ चुके थे. इस बीच यादव जी के मित्र डॉ रमेश सक्सेना ने एक पगड़ी निकाली और वरिष्ठपत्रकार प्रभाष जी के हाथ में थमा दी. प्रभाष जी ने राजेंद्र यादव को पगड़ी पहनाई और उनका पांव छू कर कहा कि आप महान हैं. इसके बाद कवि अजीत कुमार ने राजेंद्र जी के साथ के अपने पुराने संस्मरणों को याद करते हुए कि कहा कि जब हम पतिदेव हुआ करते थे उस वक़्त राजेंद्र विपत्तिदेव थे. अजीत कुमार ने बेहद संक्षिप्त, लेकिन उतना ही दिलचस्प संस्मरण राजेन्द्र यादव के बारे में सुनाया.

राजेन्द्र यादव का जन्मदिन दिल्ली के साहित्यिक हलके में एक सलाना उत्सव की तरह होता है और राजेन्द्र जी से जुड़े लोग बग़ैर निमंत्रण के भी वहां जुटते हैं, इस बहाने लोगों की एक-दूसरे से मलाक़ातें और बातें होती हैं. कई समीकरण बनते-बिगड़ते हैं. इस बार कई नए चेहरे भी देखने को मिले. उनसे बात करने पर पता चला कि वे उत्सुकतावश इस जन्मदिन समारोह में आ गए. वह देखना चाहते थे कि राजेंद्र यादव का जन्मदिन कैसे मनाया जाता है. पत्रकारिता की एक प्रशिक्षु छात्रा से जब मैंने पूछा कि तुम यहां कैसे, तो उसका जवाब सुनकर मैं हैरान रह गया. उसने कहा कि वह वर्तिका नंदा और उदय सहाय की किताब के विमोचन समारोह में पहुंची थी. विमोचन के पहले जब चाय-पान चल रहा था तो कुछ साहित्यकार आपस में यादव जी के जन्मदिन के बारे में बात कर रहे थे, वहीं उसे पता चला कि ऑफिसर्स क्लब में हंस संपादक का जन्मदिन समारोह मनाया जा रहा है. जिज्ञासावश, बग़ैर निमंत्रण के यहां पहुंची उस लड़की से जब मैंने पूछा कि तुम्हें यहां आकर कैसा लगा तो उसका जवाब और भी हैरान करनेवाला था. उसने कहा कि जिनकी कहानियां और लेख पढ़कर मैं बड़ी हुई उन्हें नजदीक से देखना सुखद तो लगा लेकिन कुछ लोगों को जब मैंने शराब से सराबोर होश खोते देखा तो मेरा विश्वास दरक गया. जब मैं ये सुन रहा था तो मृदुला गर्ग के नए उपन्यास मिलजुल मन का एक प्रसंग याद आ रहा था जहां लेखिका ने लिखा है - हिंदी के लेखक शराब पीकर फूहड़ मजाक से आगे नहीं बढ़ पाते. मैं सोचा करती थी, लिक्खाड़ हैं, सोच-विचार करनेवाले दानिशमंद, पश्चिम के अदीबों की मानिंद, पीकर गहरी बातें क्यों नहीं करते, अदब की, मसाइल की, इंसानी सरोकार की. अब समझी कि वहां दावतों में अपनी शराब ख़ुद ख़रीदने का रिवाज़ क्यों है. न मुफ़्त की पियो और न सहने की ताक़त से आगे जाकर उड़ाओ. अपने यहां मुफ़्त की पीते हैं और तब तक चढ़ाते हैं जबतक अंदर बैठा फूहड़ मर्द बाहर ना निकल आए.

दूसरा जन्मदिन था, बांग्लादेश से निर्वासित लेखिका तसलीमा नसरीन का. यह एक बेहद ही निजी अवसर था जहां कुल जमा छह लोग मौजूद थे. जब रात के तक़रीबन ग्यारह बजे मैं तसलीमा के घर पहुंचा तो उनका ड्राइंग रूम गुब्बारों और फ्रिल्स से सजा हुआ था, केक काटा जा चुका था और वहां मौजूद दो-तीन लोग खाना खा रहे थे. मैंने घुसते ही उन्हें विश किया तो वह बेहद गर्मजोशी से मिलीं और तुरंत ही खाना खाने का अनुरोध कर डाला. तस्लीमा ने ख़ुद ही कई वेज और नॉनवेज डिशेज तैयार की थी.

इसमें हिलसा मछली और पॉमप्रेट बेहद स्वादिष्ट था. तस्लीमा मछली के अलावा चिकेन और मूंग दाल खिलाने पर ज़्यादा ज़ोर दे रही थी. खाना बेहद स्वादिष्ट बना था. तस्लीमा वहां मौजूद अपने दोस्तों को पूछ-पूछकर खाना खिला रही थी. दो-ढाई घंटे तक रुक-रुक कर खाना चलता रहा और साहित्य-संस्कृति पर बातें होती रहीं. उनकी रचनाओं और नया क्या लिख रही हैं, इस पर लंबी बात हुई. पूरे दक्षिण एशिया में महिलाओं की स्थिति पर चर्चा हुई. वहीं मौजूद एक पत्रकार मित्र ने तस्लीमा की रचनाओं का हिंदी में पाठ कर माहौल को गमगीन बना दिया. तस्लीमा की कविताओं का भी पाठ हुआ. अपनी रचनाओं को सुनते हुए तस्लीमा सिगरेट पर सिगरेट फूंकती जा रही थी. लग रहा था कि निर्वासन झेल रही यह बहादुर लेखिका कुछ छुपाना चाह रही हैं. ज़ाहिर तौर पर निर्वासन का दर्द. रचनाओं के पाठ के बाद जब बातचीत शुरू हुई तब भी तस्लीमा के चेहरे पर कई बार ग़म और दुख की छाया आती-जाती रही लेकिन कभी भी ग़म और दर्द की वजह को अपने लब पर नहीं आने दिया.

बातों का सिलसिला इस क़दर चल रहा था किसी को भी उठने का मन नहीं कर रहा था. नीचे बैठा मेरा ड्राइवर लगातार मुझे एसएमएस भेज रहा था कि चलो. आख़िरकार, लगभग एक बजे मैंने ही पहल कर इस गंभीर चर्चा को विराम लगवाया और रात लगभग एक बजे हमलोग वहां से निकले. अगले दिन तस्लीमा को विदेश जाना था. एक बार फिर हैप्पी बर्थ डे बोलते हुए हमने उनसे विदा ली और जब मैं उनके मकान से बाहर निकल रहा था तो ये सोच रहा था कि आख़िर कब तक तस्लीमा क़ैदियों जैसी ज़िंदगी बिताएंगी. कब तक अभिव्यक्ति की आज़ादी की क़ीमत उसे अपनी स्वतंत्रता को गिरवी रखकर चुकानी पड़ेगी.

(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

जैन धर्मः बग़ावत की पहली किरण

हममें से हरेक को कभी न कभी घाव का अनुभव हुआ ही होगा. घाव पूरी तरह फूटने से पहले वक़्त लेता है. वह पकता रहता है. यही हाल सनातन धर्म का भी है. जब भी इसके ख़िलाफ़ बग़ावत हुई, आवाज़ उठी, उसके पहले ही इस धर्म में अनेक कुरीतियां घर कर चुकी थीं. जब फोड़ा, नासूर की हद तक पक गया तो 600 ईस्वी पूर्व जैन धर्म और बौद्ध धर्म के रूप में सनातन धर्म को पहली औपचारिक और संगठित चुनौती दी गई.

वैदिक धर्म की अपूर्णता की बात तो उपनिषदों ने ही कर दी थी, और वेदों की दूसरी व्याख्या या आलोचना उसी समय शुरू हो गई थी. वैसे भी, कोई विचार पूरी तरह फैलने और निवर्तमान व्यवस्था को चुनौती देने से पहले काफी समय तक अधपकी अवस्था में रहता है.

दरअसल, किसी भी धर्म के प्रति विद्रोह का कारण क्या होता है? इसके लिए सबसे पहले हमें धर्म के मायने समझने होंगे. धर्म मतलब क्या? ज़ाहिर तौर पर, जो कुछ भी हम अपने जीने के तरीक़े के रूप में अपनाते हैं-धारयति इति धर्मः, यहीं सोचने की बात यह भी है कि धर्म को बनाया किसने. अंडा पहले या मुर्गी पहले की बहस में पड़े बिना अगर हम बात करें, तो ज़ाहिर तौर पर मनुष्य ने ही अपने जीवन को व्यवस्थित करने के लिए धर्म की रचना की. प्रकृति के जो रहस्य उसके लिए अबूझ, अपरिचित थे, उनकी भी वह पूजा करने लगा. इस पर हम पहले भी चर्चा कर चुके है. अब उस पर अधिक बात करना महज शब्दों का दुहराव होगा.

सनातन धर्म की विकास यात्रा का क्रम भी इससे अलग नहीं रहा. बाद में हुआ यह कि इसमें यज्ञों पर इतना अधिक ज़ोर और कर्मकांड का इतना महत्व हो गया कि ब्राह्मणों का बहुत सम्मान और महत्व हो गया. वे ही पूरे जीवन की धुरी हो गए. इससे लोगों का विरोध स्वाभाविक ही था. आम जन को यह लगने लगा कि परम सत्ता और उनके बीच ब्राह्मण नाम के दलाल की कोई उपयोगिता तो है नहीं, फिर उसे इतना अधिक महत्व क्यों दिया जाए. इसके अलावा यज्ञ में होने वाली हिंसा का भी विरोध बड़े पैमाने पर हो रहा था. हालांकि, यह बात दीगर है कि हिंसा का विरोध जैन धर्म के पहले भी हो रहा था. ब्राह्मण ग्रंथों में भी मा हिस्यात् सर्वभूतानि (किसी भी जीव को मत मारो) का आदेश दिया जाना इसका प्रमाण है. साथ ही, ब्राह्मणवाद का विरोध भी वेदांत के साथ ही शुरू हो गया था. शायद यही वजह थी कि जैन और बौद्ध धर्म को भी नास्तिक दर्शनों में गिन लिया गया. हालांकि, यह भी पहले की चर्चा में साफ़ हो चुका है कि बौद्ध और जैन दर्शन उन अर्थों में नास्तिक नहीं थे, जिस तरह हम बृहस्पति और चार्वाक को पाते हैं.

विद्रोह का मूल कारण सीधे तौर पर ब्राह्मणों की बढ़ती हठधर्मिता, चहुंओर व्याप्त कर्मकांड, हिंसा की प्रधानता और परम सत्ता व इंसान के बीच में किसी तीसरे इंसान का आना शामिल था. इस तरह की घटना हम भारत में चौदहवीं सदी में भी देख सकते हैं, जब सनातन धर्म की सड़ांध के ख़िलाफ़ दक्षिण भारत से लेकर उत्तर भारत तक भक्ति आंदोलन ने व्यापक सुधारवादी कार्यक्रम चलाया. इसके अलावा 19 वीं-20वीं सदी में भी राजा राममोहन राय से लेकर स्वामी दयानंद तक ने सनातन धर्म को सुधारने की कोशिश की.

ठीक इसी तरह, ईसाई धर्म में भी जब भ्रष्टाचार हद दर्ज़े तक बढ़ गया, पादरी लोग ताम्रपत्र की मार्फत स्वर्ग का सौदा करने लगे, तो उसके ख़िलाफ़ भी प्रतिक्रिया हुई और एक नए धर्म का उदय हुआ.

कहने का मतलब यह कि जैन धर्म दरअसल बगावत की पहली चिंगारी थी, जिसने बाद में इतना बड़ा रूप ले लिया कि सनातन धर्म का कलेवर ही बदल दिया. जैन धर्म की मुख्य रीतियों और प्रवृत्तियों पर चर्चा अगले अंक से.

व्यालोक

vyalok@chauthiduniya.com

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि भेसाड़िया ने इक़बाल को फोन करके भवंस कॉलेज के पास बुलाया. अब आगे पढ़िए कि इसके बाद दोनों के बीच क्या बातचीत हुई...

मुसलमान

इक़बाल को देखकर उसने दांत चमकाकर मुस्कराहट बिखेरी. इक़बाल के चेहरे पर इसकी कोई प्रतिक्रिया न देख उसने पूछा, बेटा, आज इतना ढीला-ढाला क्यों लग रहा है?

इम्तिहान सिर पर आ रहे हैं.

तेरे जैसे होनहार लड़के भी परीक्षा की चिंता करेंगे तो बाक़ी विद्यार्थियों का क्या होगा?

इक़बाल ने उनसे साफ़-साफ़ बता दिया, आपके दिए आख़िरी पांच सौ रुपये कब के ख़र्च हो गए. मुझे नियमित काम नहीं मिलेगा तो मैं मन लगाकर पढ़ाई कैसे करूंगा?

हूं.. बात तो सही है, भेसाड़िया ने थोड़ा सोचकर कहा, ठीक है, मैं कोई बंदोबस्त करूंगा. आज शाम का कोई प्रोग्राम है?

उसने ना कहा.

छह बजे पेट्रोल पंप पर आ जाना.

वह समझ गया. फिर वही चक्कर, इंस्पेक्टर भेसाड़िया कहीं से एक-दो जॉकिटों का जुगाड़ करके उसे सौंपने वाला था. कैरियर के रूप में ये जॉकिटें किसी जौहरी को देकर वह एक बार फिर पांच सौ-हज़ार कमाने वाला था. उसकी गुज़र-बसर इसी तरह चलने वाली थी.

कॉलेज की परीक्षाएं पूरी होते-होते भेसाड़िया ने और दो बार उसे काम सौंपा. दोनों बार उसे डिलीवरी के लिए एक-एक जॉकिट दी गई थी.

देखो बेटा, आख़िर भेसाड़िया ने उसे एक दिन समझाया, तेरी समस्या मैं समझता हूं, पर तुझे नियमित काम दे सकूं, ऐसी मेरी स्थिति नहीं है. जो कुछ मैं कर रहा हूं, वह मेरा धंधा नहीं है. थोड़ी ऊपर की कमाई हो जाए, इससे ज़्यादा इसमें मेरी दिलचस्पी भी नहीं है. पर चिंता मत कर, तेरी नैया मैं डूबने नहीं दूंगा. तू ईमानदार और भरोसेमंद है, तुझे जीने और जीवन में आगे बढ़ने का पूरा हक़ है.

नारंगी का रस पीते हुए दोनों हाजी अली के समुद्र के किनारे खड़े थे. सामने समुद्र लहरा रहा था. समुद्र में होकर दरगाह तक जाती सीमेंट की संकरी सड़क पर ज्वार का पानी फिर लौट आया था.

तूने गेलार्ड रेस्तरां देखा है? अंत में भेसाड़िया ने पूछा.

उसने हां कहा.

वहां जाकर काउंटर पर मिस्टर सिंघ को पूछना. वह अंदर कहीं बैठा होगा.

उससे क्या कहूं?

मेरा नाम बता देना, वह समझ जाएगा.

उससे मिलने का समय?

शाम को पांच से सात.

इक़बाल ने कलाई घड़ी देखी. चार बज गए थे. उसने एक बार फिर अपने गॉडफादर की ओर देखा.

जा बेटा, फ़तह कर.

इतनी बातें हो जाने के बाद सूफ़ी को रोककर मैंने पूछा, इंस्पेक्टर भेसाड़िया के बारे में आज आपकी क्या राय है?

उसने प्रतिप्रश्न किया, किस संबंध में आप यह सवाल कर रहे हैं? जब भी आपके जीवन में आर्थिक संकट आया, उन्होंने आपको सहारा दिया. मैंने कहा, माना कि मदद करने का उनका तरीक़ा वाजिब नहीं था, फिर भी वे आपके गॉडफादर बन गए थे. सिर्फ़ अपना ही नहीं, वे आपका भी हित चाहते थे.

अगर वे सचमुच मेरा हित चाहते होते तो पहली मुलाक़ात में ही उन्होंने मुझे जेल के सीखचों के पीछे धकेल दिया होता.

तो आपका घर कैसे चलता? आपकी पढ़ाई कैसे होती?

मेरे शब्दों को जैसे सुना ही न हो, ऐसे सूफ़ी आकाश की ओर देख रहा था. उसका संकेत शायद ऊपरवाले की ओर था. शायद यही उसका जवाब भी था. हम मकान के टेरेस पर कुर्सियां डालकर बैठे थे.

मैं बाल अपराधी था. थोड़ी देर बाद उसने बात आगे बढ़ाई, भेसाड़िया ने मुझे गड्ढे में से निकालकर कुएं में डाला था. इस तालाब में से निकलकर मैं अपराध के समंदर में कूदने वाला था. एक गहरी सांस लेकर उसने जोड़ा, जैसी अल्लाह की मर्जी, अगर उसकी इच्छा होती तो मेरे जीवन में भी कोई फ़रिश्ते जैसा आदमी क़दम रखता. आपके हमदर्द डॉ. चीनवाला की तरह वह मेरा मार्गदर्शक बनता. ख़ैर, जाने दीजिए इस बात को, मेरे हाथ की रेखाओं में मेरी राह पहले से ही कुरेदी जा चुकी है. किसी को दोष देने से क्या लाभ?

उसने चश्मा उतारकर कुर्ते की कन्नी से कांच पोंछे और अपनी अधूरी कहानी आगे बढ़ाई.

इक़बाल ने रास्ता पार कर सामने के चर्च गेट की बस पकड़ी. गेलॉर्ड रेस्तरां वहीं था. बस के सफ़र के दौरान उसे ख़याल आया-जिस आदमी से वह मिलने जा रहा था, वह सिख होगा. यह उसने उसके नाम के आधार से कम घटिया तो नहीं होगा.

चर्चगेट उतरकर उसने फिर कलाई घड़ी में देखा. वह दस मिनट जल्दी आया था. थोड़ा समय उसने पास के इरोज थियेटर के बाहर लगे चेज अ क्रूकेड शैडो के पोस्टर तथा स्टिल फोटोग्राफ्स देखते हुए बिताए.क़रीब सवा चार बजे सड़क पार कर उसने गैलॉर्ड रेस्तरां के काउंटर पर बैठे सज्जन से मि. सिंघ के बारे में पूछा, जवाब में उसने उंगली दिखाई. इक़बाल ने अपना चेहरा घुमाया.

उसने देखा कि चौड़े कंधों और मज़बूत काठी का एक पुरुष हल्के तपकीरी रंग का सफ़ारी सूट पहने कुछ सोचता हुआ बैठा था. पर उसके सिर पर सरदारों जैसी पगड़ी नहीं थी. उसने बाल सज्जनों को शोभा दें, इस तरह संवारे हुए थे.

इक़बाल धीरे-धीरे आगे बढ़कर उसके सामने आया. वह किसी गहरी चिंता में है, यह समझने में इक़बाल को समय नहीं लगा.

मि. सिंघ?

उसने चेहरा उठाकर सफ़ेद शर्ट और पैंट पहने सामने खड़े इक़बाल को देखा.

भेसाड़िया साहब ने मुझे भेजा है, कहते हुए इक़बाल उसके सामने की कुर्सी खींचकर बैठ गया. बीच में मेज थी. कॉफी का अधूरा कप उस पर पड़ा हुआ था. पास ही पड़ी ऐश-ट्रे में सिगरेट के तीनेक टोटे स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे. एक सिगरेट सिंघ की उंगलियों में भी फंसी हुई थी.

सामान्यतः सिख सिगरेट नहीं पीते, इक़बाल के दिमाग़ में कंप्यूटर शुरू हो गया था, वह पी रहा था. दूसरे सरदारों की तरह उसके दाढ़ी-मूंछ भी नहीं थीं, बल्कि उसका चेहरा सफाचट तथा वर्गाकर था. नाक चौड़ी थी.

क्या पियोगे? थोड़ी देर बाद उसने होंठ खोले.

मैं पीता नहीं.

सिगरेट का कश लेते हुए सिंघ को व्यंग्य सूझा, मैंने चाय या कॉफी के बारे में पूछा है.

मैंने भी इसी संदर्भ में जवाब दिया है.

अब उसे थोड़ा अचरच हुआ, सुबह पीते हो या नहीं?

दो कप.

तो इस समय पीने में क्या हर्ज़ है?

मुझे आदत नहीं.

दोनों के बीच कुछ पलों के लिए ख़ामोशी उतर आई. इस बार इक़बाल ने पहल की, उम्मीद करता हूं, भेसाड़िया साहब ने मेरे बारे में सब कुछ बता दिया होगा.

सही, उसने स्वीकार किया, पर मैं अपने ख़ुद के तजुर्बे में यक़ीन रखता हूं.

आज़माकर देख लो.

उनके कहने के मुताबिक़ तुम्हारी ईमानदारी में शक़ की कोई गुंजाइश नहीं. इस बार उसने कॉफी का घूंट भरकर सिगरेट राखदान में दाब दी. उन्होंने यह भी बताया कि तुम गाड़ी उड़ाना जानते हो और गाड़ी से उड़ाना भी जानते हो.

सिंघ की आंखों में वह देखता रहा. ये शब्द उसने भेसाड़िया के सामने कहे थे.

अब ये बताओ कि अब तक तुमने कितनों को उड़ाया है?

एक को भी नहीं.

तो मैं यह मान लूं कि तुमने शेख़ी बघारी थी.

इक़बाल ने सिर हिला दिया.

उत्तर ना में मिलने पर सिंघ चौंका.

मैं कारण जान सकता हूं?

ज़रूर भेसाड़िया साहब को मुझ पर पूरा विश्वास है और मेरे शब्द पत्थर की लक़ीर समान हैं. अभी भी भरोसा न बैठता हो तो मैं फिर कहूंगा कि आज़माकर देख लो.

(अगले अंक में जारी)

मैं बाल अपराधी था. थोड़ी देर बाद उसने बात आगे बढ़ाई, भेसाड़िया ने मुझे गड्ढे में से निकालकर कुएं में डाला था. इस तालाब में से निकलकर मैं अपराध के समंदर में कूदने वाला था. एक गहरी सांस लेकर उसने जोड़ा, जैसी अल्लाह की मर्जी, अगर उसकी इच्छा होती तो मेरे जीवन में भी कोई फ़रिश्ते जैसा आदमी क़दम रखता.

स्वास्थ्य में मिलेगा तकनीक का साथ

केयरस्ट्रीम हेल्थ इंडिया ने एक और मील का पत्थर रखा है. कंपनी ने अब देश में 300 ड्राईव्यू, 5800 मॉडल के ड्राई लेज़र इमेज़र की आपूर्ति करने की घोषणा की है. यह इमेज़र पुणे के प्रतिष्ठित रूबी हॉल क्लीनिक एंड हॉस्पिटल में लगाया गया है.

ड्राईव्यू 5800 एक कॉम्पैक्ट टेबलटॉप इमेज़र है. जिसे ख़ासतौर पर पीएसीएस, सिटी, एमआरआई, एनएआई, यूएस, सीआर और दूसरे ग्रे-स्केल इमेज़िंग अप्लीकेशंस से आउटपुट देने के लिए डिज़ाइन किया गया है. मेडिकल प्रिंटिंग के क्षेत्र में ड्राईव्यू 5800 एक अग्रणी उत्पाद है. जिससे ग्राहकों को काम में लचीलेपन के साथ, विश्वास की गारंटी भी मिलती है. इससे प्रति घंटे 75 रेडियोग्राफिक फिल्म निकल सकती है और पहला प्रिंट 80 सेकेंड से भी कम समय में निकल जाता है. प्रिंटर 325 पिक्सल का रेजॉल्यूशन देता है और कोडैक प्वाइंट-ऑफ-केयर सीआर सिस्टम्स के लिए भी बिल्कुल उपयुक्त है. पुणे स्थित रूबी हॉल क्लीनिक एंड हॉस्पिटल में इमेज़िंग विभाग के प्रमुख डॉ.अविनाश नानीवेदकर के मुताबिक, कॉम्पैक्ट और सुविधाजनक डिज़ाइन के कारण ड्राईव्यू 5800 हमारे लिए एक आदर्श समाधान है और हम केयरस्ट्रीम हेल्थ के उत्पादों का इस्तेमाल पहले भी करते रहे हैं, इससे हमें जैसी तत्परता और पेशेवराना मदद मिली है, उसका हम सम्मान करते हैं. वहीं इसके सीईओ श्री भोमी भोते का कहना है कि हेल्थ सेक्टर में अग्रणी संस्थान होने के नाते मरीज़ों की बेहतर देखभाल के लिए इस अत्याधुनिक उपकरण और तकनीक का इस्तेमाल करना हमारा दायित्व है. साथ ही एक सर्वश्रेष्ठ कंपनी के सर्वश्रेष्ठ उत्पाद होने की वजह से ड्राईव्यू 5800 लगाने का फ़ैसला हमारे लिए आसान था.

ड्राईव्यू 5800 एक कॉम्पैक्ट टेबलटॉप इमेज़र है. जिसे ख़ासतौर पर पीएसीएस, सिटी, एमआरआई, एनएआई, यूएस, सीआर और दूसरे ग्रे-स्केल इमेज़िंग अप्लीकेशंस से आउटपुट देने के लिए डिज़ाइन किया गया है. मेडिकल प्रिंटिंग के क्षेत्र में ड्राईव्यू 5800 एक अग्रणी उत्पाद है. जिससे ग्राहकों को काम में लचीलेपन के साथ, विश्वास की गारंटी भी मिलती है.

केयरस्ट्रीम हेल्थ के लेज़र इमेज़िंग सिस्टम पोर्टफोलियो में कोडैक ड्राईव्यू 6800 और 5850 लेज़र इमेज़र भी शामिल किए गए हैं. केयरस्ट्रीम हेल्थ इंडिया के प्रबंध निदेशक श्री प्रबीर चटर्जी ने कहा कि प्रदर्शन और विश्वसनीयता के मामले में हमारे उत्पाद पहले ही अपनी धाक जमा चुके हैं और यह पूरी दुनिया में हेल्थकेयर सुविधा देने वाले संस्थानों की प्रिंटिंग ज़रूरतों को संतोषजनक तरीक़े से पूरा भी करता आया है. हमें ख़ुशी है कि रेडियोलॉजी जगत हमारे काम की सराहना करने के साथ उसे मान्यता भी दे रहा है. यही वजह है कि हम अपने काम में एक अलग मुक़ाम हासिल कर रहे हैं.

केयरस्ट्रीम हेल्थ के पास बाज़ार की सभी ज़रूरतों को पूरा करने के लिहाज़ से ज़रूरी उत्पादों की हर रेंज मौजूद हैं. ग़ौरतलब है कि पहले कोडैक हेल्थ ग्रुप के नाम से जानी जाने वाली केयरहेल्थ इंडिया ने साल 2007 में एक स्वतंत्र कंपनी के रूप में काम करना शुरू किया था.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

नोकिया : अब कंप्यूटर में भी कनेक्टिंग पीपल

विश्व में सबसे ज़्यादा सेलफोन बनाने वाली कंपनी नोकिया अब कंप्यूटर के क्षेत्र में भी हाथ आजमाने जा रही है. नोकिया जल्द ही बाज़ार में मिनी लैपटॉप नोकिया बुकलेट 3 जी नाम से उतारेगी. हालांकि एक बात देखने वाली होगी कि जिस तरह का विश्वास उसने मोबाइल के क्षेत्र में हासिल किया है, क्या वैसा ही कमाल वह लैपटॉप के क्षेत्र में कर पाएगी. ख़ैर, यह तो आने वाले समय में ही पता चलेगा. इस लैपटॉप में माइक्रोसॉफ्ट विंडोज़ और दस इंच का स्क्रीन है. इसका वजन 1.25 किलोग्राम है. ज़ाहिर तौर पर यह काफी हल्का है और देखने में भी आकर्षक है. बुकलेट 3 जी के फीचर्स ऐसे हैं जो आपको अपना मुरीद बना लेंगे. इसमें बदले जाने की सुविधा वाला सिम कार्ड और 3 जी मोबाइल सर्विस की सुविधा मौजूद है. नोकिया के मुताबिक इसके दस इंच के स्क्रीन पर आप एचडी रेजोल्यूशन मूवीज देख सकते हैं. यह उन गिने-चुने नोटबुक में है जिसमें एचडीएमआई पोर्ट लगा हुआ है. इस लैपटॉप में वीडियो कॉलिंग के लिए एक कैमरा, इंटीग्रेटेड ब्ल्यूटूथ और एक एसडी कार्ड रीडर आदि सुविधाएं हैं. सिर्फ़ दो सेंटीमीटर मोटाई वाले इस बुकलेट के बारे में नोकिया ने दावा किया है कि इसकी बैटरी लगातार 12 घंटे तक चल सकती है. इसमें जीपीएस नेविगेशन चिप और नोकिया ओवी-मैप सॉफ्टवेयर इन-बिल्ट है. हालांकि अभी इसकी क़ीमत और लांचिंग के बारे में कुछ नहीं बताया गया है. वैसे कंपनी ने कहा है कि 2 सितंबर को बार्सिलोना और स्पेन में इसके दाम और लांचिंग डेट के बारे में बताया जाएगा. नोकिया ने पहले भी सेलफोन के अलावा कंप्यूटर (टैबलेट) क्षेत्र में विस्तार करने की कोशिश की थी, लेकिन उसे ख़ास सफलता नहीं हासिल हुई थी. अब देखने वाली बात यह होगी कि कंपनी इस बार इस नए प्रयास में कहां तक सफल हो पाती है.

यू-ट्यूब का नया वर्जन नक़ा-ट्यूब

यू-ट्यूब ने सऊदी अरब में वीडियो साझा करने वाली एक साफ-सुथरी वीडियो साइट लॉन्च की है. इसकी ख़ासियत यह है कि वहां की सांस्कृतिक, धार्मिक और नैतिक संवेदनशीलताओं को ध्यान में रखते हुए इसे शुरू किया गया है.

नक़ा ट्यूब (नक़ा मतलब शुद्ध) यू-ट्यूब के ही संपादित और साफ़-सुथरी वीडियो क्लिप का संग्रह है. दैनिक समाचार पत्र अरब-न्यूज़ के अनुसार इस साइट पर सऊदी अरब सरकार, वहां के बुद्धिजीवियों और नागरिकों पर नकारात्मक असर डालने वाले वीडियो नहीं होंगे. साथ ही,धार्मिक दिशानिर्देशों के मुताबिक, इस साइट पर न तो महिलाओं के चित्र और न ही गीत-संगीत हो सकते हैं. नक़ा-ट्यूब का इस्तेमाल करने वाले अपने वीडियो ऑन-लाइन अपलोड करने से पहले उसे संपादित भी कर सकते हैं.

नक़ा-ट्यूब संचालक अबू इब्राहिम की मानें तो, दो महीने पहले शुरू किए गए इस साइट पर अब तक लगभग 5000 से 6000 विज़िटर आ चुके हैं. सऊदी अरब ने साइबर-वर्ल्ड में अपने युवाओं में तहज़ीब और धार्मिक पहचान सुरक्षित रखने के लिए इस नई तरकीब का ईजाद किया है. कुछ महीने पहले, -सऊदी फ्लैगर- के सदस्यों ने यू-ट्यूब से अनुचित सामग्री हटाने के लिए एक अभियान चलाया था, जिसके बाद साइट के संचालकों द्वारा उसे हटा दिया गया. उसी का नतीजा है कि सऊदी अरब निवासियों के लिए साफ़-सुथरी वीडियो साइट की शुरूआत की है, जिस पर किसी भी तरह के अश्लील वीडियो सामग्री नहीं होंगे और यह उनके धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों को भी सुरक्षित रखेगा.

नोकिया करेगी ट्रिपल धमाका

नोकिया एक साथ तीन धमाके करने वाली है, यानी वह तीन सेलफोन एक साथ लांच करेगी. मुंबई में एक उत्सव के दौरान नोकिया ने तीन नए म्यूज़िक सेलफोन लांच करने की घोषणा की है. नोकिया 5230, 5530 और 5630 एक्सप्रेस म्यूज़िक ही वे सेलफोन हैं जिसे नोकिया जल्द ही बाज़ार में उतारेगी. सेलफोन के शैकीन के लिए यह अच्छी ख्बर है. फ़िलहाल, हम आपको नोकिया 5530 के फीचर्स के बारे में बताते हैं. नोकिया 5530 में वे सभी फीचर्स मौजूद हैं, जो नोकिया 5800 में है. दोनों में अंतर सिर्फ़ इतना है कि नोकिया 5530 नोकिया 5800 के मुक़ाबले अट्रैक्टिव और स्लिम है. इसके लिए आपको ज़्यादा क़ीमत चुकाने की जरूरत भी नहीं. जब आप इस सेलफोन का उपयोग करेंगे तो नोकिया 5800 की तुलना में सबसे पहले इसके स्लिम होने का अनुभव होगा. निश्चित रूप से इसका डिज़ाइन दोनों सेलफोन से काफी अट्रैक्टिव है.

इसके डिस्प्ले स्क्रीन को नीचे तक बढ़ाया गया और सिर्फ़ तीन की (कॉल, एंड और मेन्यू) को टच स्क्रीन के लिए नीचे दिया गया है. सेलफोन के ऊपरी हिस्से में एक कैमरा लगा है. नोकिया 5530 से कार्ल ज्वाइस ऑप्टिक्स और दो एलईडी फ्लैश को हटा दिया गया है, इसके बावजूद इसमें ऑटोफोकस मशीन लगा हुआ है. इस सेलफोन के कैमरे से ली गई फोटो की क्वालिटी काफी अच्छी है, जो नोकिया 5800 के जैसा है. कुल मिलाकर क्वालिटी के मामले में यह काफी अच्छा सेलफोन है. यह सिंबियन एस-60 के फिफ्थ एडिशन जैसा है. इसके यूज़र इंटरफेस (यूआई) में थोड़ा सुधार किया गया है. इसी वजह से यह फ्लिकर स्क्रॉलिंग के साथ ही केनेटिक स्क्रॉलिंग को सपोर्ट करता है. हालांकि नोकिया 5230 की तरह ही इसमें भी स्क्रॉलिंग सिर्फ़ स्क्रीन पर ही काम करता है. वैसे इसका यूआई काफी सक्रिय है, जिसका फीडबैक अच्छा है. 5530 का म्यूज़िक फीचर्स काफी बढ़िया और मज़बूत है. इसमें दो स्टीरियो स्पीकर्स और 3.5 एमएम का हेडफोन जैक लगा हुआ है. इसके अलावा यह फोन 16 जीबी का कार्ड एक्सेप्ट कर सकता है. फोन पर लगे लाउडस्पीकर की साउंड क्वालिटी भी काफी अच्छी है और देख्ने में इतना अट्रैक्टिव है कि इसे खरीदने के लिए आप आतुर हो जाएंगे.

कुल मिलाकर नोकिया 5530 काफी अच्छा सेलफोन है. इसकी क़ीमत भी ज़्यादा नहीं है, इस फोन के लिए आपको केवल 13,999 रुपए अदा करना होगा. तो हो गए न, आम के आम, गुठलियों के दाम. अब देर किस बात की बाज़ार में यह सेलफोन आपका इंतजार कर रहा है.

जादू की जगह 4जी!

भारत में हमलोग 3जी स्पेक्ट्रम के इस्तेमाल को लेकर ही अभी काफी उत्सुक हैं और इसी बीच 4जी का भी आग़ाज़ हो चुका है. शायद 3जी के दिन पूरे होने वाले हैं. जिसके फीचर्स किसी जादू से कम नहीं, अब उसी 3जी से भी आगे की चीज़ आ गई है. जी हां, मोटोरोला भारत में 4जी का ट्रायल रन शुरू करने जा रहा है.

वे इसके लिए बहुत ही आशावादी भी नज़र आ रहे हैं. कंपनी के उच्च अधिकारी के मुताबिक, कंपनी भारत में एलटीई (लांग टर्म इवोल्यूशन) सेवा के स्पेक्ट्रम ट्रायल के आवंटन के लिए जल्द ही टेलीकम्युनिकेशन डिपार्टमेंट से संपर्क करेगी. अभी भारत सरकार ने 3जी सेवा निजी क्षेत्र में उतारने का फैसला ही किया है. इसके उलट अंतरराष्ट्रीय टेलीकम्युनिकेशन दिग्गज मोटोरोला इस साल के अंत तक 4जी को बाज़ार में लाने का मन बना चुका है. अब, सोचने वाली बात यह है कि क्या इससे भारत सरकार की 3जी स्पेक्ट्रम सेवा बेचकर 35,000 करोड़ रुपए अर्जित करने की योजना पर पानी फिर जाएगा. ग़ौरतलब है कि 4जी डाटा-ट्रांसमिशन के मामले में काफी तेज़ है और इसकी स्पीड लगभग 100 मेगाबाइट प्रति सेकेंड के बराबर है. पहले जैसी स्पीड, यहां तक कि अपने ब्रॉडबैंड नेटवर्क पर भी अब हमें झेलने की ज़रूरत नहीं होगी. ऐसे कई फीचर्स इस तकनीक में होंगे. यहां तक कि एक सेल फोन उपभोक्ता अपने ऑफिस में ही इसके हाई-क्वालिटी वीडियो से अपने क्लाइंट से वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के ज़रिए जुड़ सकता है. ये कहीं बस ख्याली पुलाव तो नहीं, आने वाले समय में साफ हो जाएगा. मोटोरोला का यह प्रयोग यदि सफल होता है तो ऐसे में 3जी का क्या होगा, इस पर सबकी नज़र रहेगी. एक रिपोर्ट के मुताबिक मोटोरोला के अलावा और भी कई कंपनियां इस 4जी स्पेक्ट्रम के ट्रायल में लगी हुई हैं. हालांकि मोटोरोला अपने सेट के साथ ही यह प्रयोग कर रहा है, लेकिन वह दूसरी कंपनियों के साथ भी इस पर काम करने को इच्छुक है. इस नई तकनीक के आने से जिस तरह सरकार चिंतित दिख रही है, उसे समझने के लिए बहुत दिमाग लगाने की ज़रूरत नहीं. मामला 35,000 करोड़ रुपए के नफ़ा-नुक़सान से जुड़ा है. यही वजह है कि इस 4जी की भारत में मंजूरी को लेकर टेलीकम्युनिकेशन डिपार्टमेंट ने कोई भी टिप्पणी करने से इंक़ार कर दिया है.

पीसीबी के दोनों हाथों में लड्डू

अगले क्रिकेट विश्व कप 2011 की मेज़बानी को लेकर अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट परिषद (आईसीसी) और पाकिस्तान के बीच उपजा विवाद आख़िरकार दोनों की रज़ामंदी से सुलझ गया है. ग़ौरतलब है कि सुरक्षा कारणों का हवाला देते हुए पाकिस्तान को मेज़बानों की सूची से हटा दिया गया था.

फ़िलहाल, इसका फ़ायदा पीसीबी को मिलता दिख रहा है. अगर देखा जाए तो समझौता होना अच्छी बात है, लेकिन सबसे बड़ी बात तो यह है कि मेज़बानी के तौर पर उसे जो धन मिलता, वह उसे अब बिना आयोजन कराए भी मिलेगा. इसके अलावा हर्जाना भी मिलेगा. इस तरह से पाकिस्तान को बिना मैच कराए दोहरे फायदे मिलेंगे. विश्व कप के 14 मैच पाकिस्तान में होने थे, लेकिन लाहौर में श्रीलंकाई क्रिकेट टीम पर हुए हमले के चलते पाकिस्तान में मैच न कराने का फ़ैसला लिया गया था. पाकिस्तान ने इसका विरोध किया था. हालांकि दोनों पक्षों के बीच इस विवाद को सुलझाने के लिए काफी लंबी बातचीत चली. आईसीसी के बोर्ड ने विश्व कप 2011 के 14 मैच सुरक्षा लिहाज़ से पाकिस्तान में न कराने का फ़ैसला अप्रैल 2009 में लिया था, क्योंकि पाकिस्तान दौरे पर गई श्रीलंकाई टीम पर कुछ आतंकवादियों ने हमला किया था. जिसमें सात लोग मारे गए थे और छह खिलाड़ी भी घायल हो गए थे. अब यह 14 मैच भारत, श्रीलंका और बांग्लादेश में होंगे. आईसीसी के अध्यक्ष डेविड मॉर्गन और पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड (पीसीबी) के अध्यक्ष के बीच हुई बैठक में सहमति के बाद यह फ़ैसला लिया गया. इस सहमति के बाद पाकिस्तान अपनी क़ानूनी चुनौती भी वापस लेने को राजी हो गया है. आईसीसी ने एक वक्तव्य में यह कहा है कि दोनों पक्षों के बीच सहमति हुई है कि पाकिस्तान को मेज़बानी के तौर पर जो धन मिलता, वह उसे अब भी मिलेगा. इसके अलावा कुछ धनराशि मुआवज़े के तौर पर भी मिलेगी.

आईसीसी अध्यक्ष डेविड मॉर्गन ने ख़ुशी व्यक्त करते हुए कहा कि दोनों पक्षों के बीच आपसी समझ से ही समझौता हो गया. उन्होंने कहा कि यह समझौता विश्व कप क्रिकेट 2011 के लिए काफी अच्छा है क्योंकि विवाद खड़ा होने के बाद विश्व कप को लेकर कुछ अनिश्चितताएं फैल गई थी, जो अब समाप्त हो जाएगी. ग़ौरतलब है कि पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड को हल के समय ख़ासी मुश्किलों का सामना करना पड़ा है क्योंकि 2008 की चैपियंस ट्रॉफी भी सुरक्षा कारणों से वहां नहीं हो पाई थी. अब वह प्रतियोगिता सितंबर में दक्षिण अफ्रीका में प्रस्तावित है. पाकिस्तान ने आईसीसी के साथ हुए समझौते का स्वागत करते हुए उम्मीद जताई कि इससे देश में क्रिकेट का माहौल कुछ बेहतर होगा, क्योंकि कई टीमों के नहीं आने की वजह से उसकी छवि ख़राब हो गई थी. पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड के अध्यक्ष ने कहा कि बोर्ड इस समझौते से संतुष्ट है. हमारी तो दुआ यही है कि पाकिस्तान में क्रिकेट को बेवजह नुक़सान नहीं हो.

ऐसे कैसे बनेंगे सुपर : पावर

ओलंपिक जैसे खेल में सवा अरब की आबादी वाला यह देश सात पदक भी क्यों नहीं जीत पाता? दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी आबादी वाला यह मुल्क क्यों चंद खेलों की छोटी-मोटी सफलता पर ही गुमान करने लगता है ? आज जिधर देखें क्रिकेट की ही धुन है. इसके सामने बाक़ी कुछ भी नहीं. कहने को तो सरकार में एक खेल मंत्रालय भी है, लेकिन उसकी हालत दिल बहलाने को ग़ालिब ये ख्याल अच्छा है, वाली ही है. उसका होना भी जैसे न होने के बराबर है. खेल मंत्री एम एस गिल साहब को मौक़ा मिलता है तो वह भी गाहे-बेगाहे क्रिकेट के ही पीछे पड़ जाते हैं.

दरअसल, जब बात अंतरराष्ट्रीय स्पर्धाओं की आती है तो भारतीय झोली में सिर्फ़ एक-दो पदक ही आते हैं. जिस तरह से भारत में दूसरे खेलों के खिलाड़ियों के साथ व्यवहार किया जाता है, इसमें कोई अचरज की भी बात नहीं है. क्रिकेटर्स की छोटी-सी भी चोट पर उनका इलाज विदेशों में होता है, लेकिन डिस्कस थ्रो में राष्ट्रीय स्तर पर 17 मेडल जीत चुके अंकुश पूनिया की शायद ऐसी क़िस्मत नहीं है. भारतीय क्रिकेट खिलाड़ी सुरेश रैना के सहपाठी रहे अंकुश को प्रतियोगिता के दौरान ही रीढ़ की हड्डी में चोट लगी थी. सरकार ने फिर भी उसकी कोई खोज-ख़बर नहीं ली. ऐसे में उसके किसान पिता ने इलाज में लाखों रुपए ख़र्च किए. नतीजतन घर की आर्थिक हालत बेहद ही ख़राब हो गई और आज वे रोजी-रोटी को भी मोहताज हैं. इन सबके बावजूद अंकुश ने हिम्मत नहीं हारी और चोट से उबरने के बाद एकबार फिर डिस्कस-थ्रो में वापसी को तैयार है, लेकिन प्रैक्टिस के लिए पैसे की ज़रूरत पूरी नहीं हो पाने से उसकी सारी उम्मीदों पर पानी फिरता नज़र आ रहा है. और यह किसी सपने के टूटने से कम नहीं, सपना भारत को बुलंदियों तक पहुंचाने का, अंतरराष्ट्रीय खेलों में पदकों के शिखर तक पहुंचने का. फ़िलहाल सरकार भारत-निर्माण में लगी है, ये कैसा भारत-निर्माण है कि एक उभरते खिलाड़ी को खेलों में आगे बढ़ने का मौक़ा तक नहीं देती. ऐसे में किसी भी अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में पदकों की संख्या का बढ़ना बिल्कुल बेमानी हो जाता है, जब सरकार ही डिस्कस-थ्रो खिलाड़ी अंकुश पूनिया जैसे खिलाड़ियों को मदद के नाम पर उन्हें उनके हाल पर छोड़ देती है. कुछ ही दिनों बाद दिल्ली में कॉमनवेल्थ गेम्स शुरू होने वाले हैं, कितने पदक भारतीय झोली में आते हैं, यह भी साफ हो जाएगा. आज हम चीन और अमेरिका जैसे देशों से भी आगे निकलने की बात करते हैं, एक महाशक्ति बनने की बात करते हैं, लेकिन चीन ने ये बात गत ओलंपिक में साबित कर दी और वहीं हम अभिनव बिंद्रा के स्वर्ण और विजेंद्र के कांस्य पदक से संतुष्ट हो गए.

न जाने ऐसे कितने खिलाड़ी धूल फांक रहे हैं जिनमें प्रतिभा भी थी, ख़ुद को उन्होंने राष्ट्रीय-स्तर पर साबित भी किया लेकिन सरकार और खेल-प्रशासन के ढुलमुल रवैए ने उनको कहीं का नहीं छोड़ा. आज जितने भी विकसित देश हैं वहां खेलों की स्थिति भारत से लाख गुणा बेहतर है, इसकी वजह यह नहीं कि वे विकसित हैं बल्कि उनमें प्रतिभा की समझ है. जबकि हमारे यहां अंकुश पुनिया जैसे खिलाड़ी गुमनामी के अंधेरे में जीने को मजबूर हैं. यहां जब बात खेलों की आती है तो वह क्रिकेट से शुरू होकर क्रिकेट पर ही ख़त्म होती है, थोड़ा और आगे बढ़ें तो बैडमिंटन, शतरंज और निशानेबाज़ी बस इनके अलावा किसी भी खेल में हमारी पहचान क्या है, यह सभी जानते हैं. जबकि इनके अलावा कई ऐसे खेल हैं जिसमें हम हमेशा फिसड्डी ही साबित होते हैं. दूसरे खेलों की बात तो छोड़ दीजिए जिस खेल में पहले कभी चैंपियन हुआ करते थे अब उसमें भी मात खाने लगे हैं. राष्ट्रीय खेल हॉकी की जो हालत हो चुकी है, यह किसी से छुपी नहीं है. कभी लगातार 8 ओलंपिक गोल्ड मेडल जितने वाला यह देश गत बीजिंग ओलंपिक के लिए क्वालिफाई भी नहीं कर पाया. अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में जब दूसरे देशों के पदकों की संख्या बढ़ती रहती है, ऐसे में हमारी आस विजेंद्र (बॉक्सिंग) और सुशील(कुश्ती) जैसे खिलाड़ियों पर ही टिकी रहती है. ऐसे कई विजेंद्र और सुशील कतार में खड़े हैं, लेकिन उनकी हालत ऐसी नहीं है कि अपने अभ्यास तक का ख़र्च उठा सकें, कुछ अंकुश पूनिया जैसे खिलाड़ी हैं जो कमज़ोर आर्थिक स्थिति को भी धता बताते हुए राष्ट्रीय स्तर तक पहुंच तो जाते हैं लेकिन एक चोट के बाद सरकार या खेल प्रशासन की तरफ़ से कोई मदद नहीं मिल पाने के कारण उनका पूरा करियर ही बर्बाद हो जाता है.

ऐसी एक नहीं कई कहानियां है जब सरकारी उपेक्षा की वजह से कई प्रतिभाएं सामने नहीं आ सकी, दरअसल यह किसी खिलाड़ी के बर्बादी की कहानी नहीं है, ऐसे हर मामले के साथ हम एक-एक कर मेडल गंवाते जा रहे हैं. यदि सुपर-पावर बनना है तो हर लिहाज़ा से हमें अपनी श्रेष्ठता साबित करनी होगी और उसके लिए अंकुश और उन जैसे खिलाड़ियों की मदद करनी होगी और सरकार इस दिशा में क्या काम कर रही है यह सब के सामने है ?

खेल रत्नों को मिला, राजीव गांधी खेल रत्न

फोटो-सुनील मल्होत्रा

राष्ट्रीय खेल पुरस्कारों के इतिहास में पहली बार तीन खिलाड़ियों को भारत के सबसे बड़े खेल सम्मान से सम्मानित किया गया. ओलंपिक में कांस्य पदक जीतने वाले बॉक्सर विजेंद्र सिंह और पहलवान सुशील कुमार सहित चार बार की वर्ल्ड चैंपियन रह चुकी महिला बॉक्सर मेरीकॉम को इस सम्मान से सम्मानित किया गया. पुरस्कार के तौर पर इन सभी को 7.5 लाख रूपये और नई डिज़ाइन की प्रतिमा दी गई. इसके अलावा राष्ट्रपति ने 15 अन्य खिलाड़ियों को भी साल 2008 के अर्जुन अवार्ड से नवाज़ा गया है. जिनमें दुनिया की सातवें वरीयता की बैडमिंटन खिलाड़ी सायना नेहवाल, एशियाई शतरंज चैंपियन तानिया

सचदेव, हॉकी खिलाड़ी इग्नेस टिर्की भी शामिल हैं. जबकि सायना के कोच और पूर्व बैडमिंटन खिलाड़ी फुलेला गोपीचंद, बीजिंग ओलंपिक में बॉक्सिंग के असिस्टेंट कोच जयदेव बिष्ट और सुशील के कोच सतपाल सहित चार गुरुओं को द्रोणाचार्य अवार्ड से भी सम्मानित किया गया.

ग़ौरतलब है कि पिछले पांच वर्षों के बाद किसी क्रिकेटर को अर्जुन अवार्ड दिया गया. गौतम गंभीर के पहले हरभजन सिंह को साल 2003 में यह अवार्ड दिया गया था. इसके अलावा पुरस्कारों से सम्मानित होने वाले खिलाड़ियों में ध्यानचंद अवार्ड इश्वर सिंह देओल (एथलेटिक्स), अर्जुन अवार्ड सुरिंदर कौर (महिला हॉकी), पौलोमी घटक(टेबल टेनिस), रंजन सोढ़ी (निशानेबाज़ी) को जबकि राष्ट्रीय खेल प्रोत्साहन अवार्ड टाटा स्टील लिमिटेड और रेलवे स्पोर्टस प्रमोशन बोर्ड को दिया गया.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

भारत फिर बना चैंपियन

फोटो-सुनील मल्होत्रा

अंतरराष्ट्रीय नेहरू गोल्ड कप में हार से आग़ाज़ करने वाली भारतीय फुटबॉल टीम ने समापन प्रतियोगिता जीतने से की. फाइनल में सीरिया को हराकर भारत ने लगातार दूसरी बार नेहरू कप जीता. दिल्ली के अंबेडकर स्टेडियम में हुए इस मैच के हीरो रहे गोलकीपर सुब्रतो पॉल, जिन्होंने पेनाल्टी शूटआउट तक चले इस मैच में तीन शानदार गोल बचाए. जिसकी बदौलत भारत इस प्रतियोगिता को लगातार दूसरी बार जीतने में सफल हुआ. ग़ौरतलब है कि इस प्रतियोगिता के आख़िरी लीग मैच में भारत को सीरिया के हाथों हार का सामना करना पड़ा था. इस ख़िताबी भिड़ंत में काफी रोमांचक मैच देखने को मिला, जब निर्धारित समय तक दोनों टीमें गोलरहित बराबरी पर थीं, वहीं अतिरिक्त समय में रेनेडी सिंह द्वारा पहला गोल किए जाने के बाद भारत ने 1-0 की बढ़त बना ली, लेकिन खेल के आख़िरी मिनट में गोल कर सीरिया ने 1-1 की बराबरी कर ली. जिससे मैच का फ़ैसला पेनल्टी शूटआउट(सडेन-डेथ) के ज़रिए हो सका और गोलकीपर सुब्रतो पॉल के तीन शानदार बचाव की बदौलत भारत ने यह प्रतियोगिता 5-4 से जीतने में कामयाबी हासिल की. भारतीय कप्तान बाइचुंग भूटिया के नेतृत्व में इस टूर्नामेंट में भारतीय टीम की शुरुआत काफी ख़राब रही, जब भारत को अपने पहले ही मुक़ाबले में लेबनान से हार का सामना करना पड़ा.

भारतीय कप्तान बाइचुंग भूटिया के नेतृत्व में इस टूर्नामेंट में भारतीय टीम की शुरुआत काफी ख़राब रही, जब भारत को अपने पहले ही मुक़ाबले में लेबनान से हार का सामना करना पड़ा. फिर ज़बरदस्त वापसी करते हुए भारत ने किर्गिस्तान और श्रीलंका को धूल चटाई.

फिर ज़बरदस्त वापसी करते हुए भारत ने किर्गिस्तान और श्रीलंका को धूल चटाई. इस पूरी शृंखला में वह ऐतिहासिक पल भी आया जब बाइचुंग भूटिया भारत की ओर से 100 अंतरराष्ट्रीय मैच खेलने वाले पहले भारतीय खिलाड़ी बने. उम्मीद है, क्रिकेट के लिए जुनूनी चाहत वाले इस देश में फुटबॉल की यह सफलता उसे एक नए मुक़ाम तक पहुंचाएगी.

वन-डे का वजूद ख़तरे में

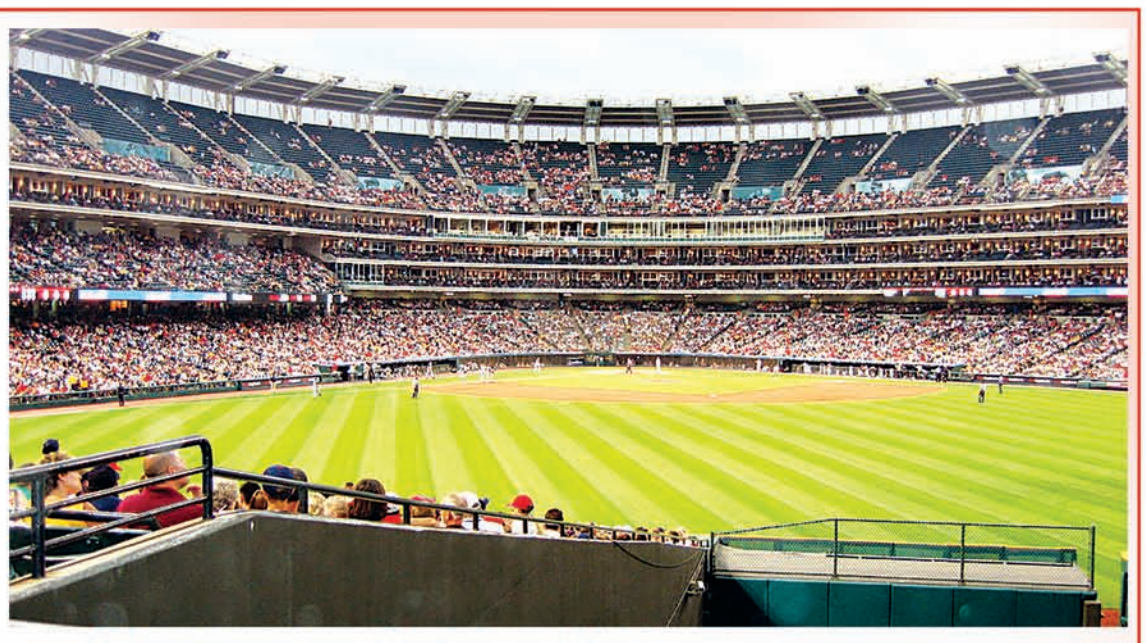

विश्व क्रिकेट से एकदिवसीय प्रारूप को अब शायद अलविदा कहने का वक़्त आ गया है. न तो कोई सचिन के सर्वाधिक शतकों और रनों का रिकॉर्ड तोड़ पाएगा और न ही अफ्रीदी के सबसे तेज़ शतक का रिकॉर्ड. क्रिकेट के तमाम दिग्गजों की मानें तो मुमकिन है, 2011 विश्वकप कप के बाद यह इतिहास की बीती कहानी बन कर रह जाएगा. खेल प्रेमियों का जुनून रहा यह खेल अब बदलाव के दौर से गुज़र रहा है. स्टेडियमों में दर्शकों के न आने की वजह से इसके अस्तित्व को बचाने की क़वायद शुरू हो चुकी है. जिस तरह पहले टेस्ट के बाद एकदिवसीय आया. आख़िर में, ट्वेंटी-20. पिछले दिनों ट्वेंटी-20 ने जिस तरह लोगों के बीच अपनी लोकप्रियता का जादू चलाया है, यह क्रिकेट के सभी प्रारूपों पर भारी पड़ा. नतीजा यह हुआ, पहले टेस्ट की बोरियत से बचने के लिए एकदिवसीय का सहारा लिया और अब ट्वेंटी-20 की शरण में लोग आ रहे हैं. मतलब फास्ट-फॉरवॉर्ड के ज़माने में फटाफट नतीजे की शरण में.

ग़ौरतलब है कि अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट परिषद (आईसीसी) ने भी दर्शकों की कम होती संख्या पर अपनी चिंता जताई थी और उसके बाद दर्शकों को स्टेडियम तक खींचने के लिए वन-डे क्रिकेट में फ्री-हिट, सुपरसब जैसे कई नियम लाए गए और पावर-प्ले में संशोधन भी किया गया, लेकिन इन सबका कुछ ख़ास असर पड़ता नज़र नहीं आया. अब तो इसे ख़त्म करने की बात चलने लगी है. मशहूर लेग-स्पिनर शेन वार्न ने भी इसकी वकालत शुरू कर दी है कि अब वन-डे क्रिकेट को अलविदा कहने का समय आ गया है. हालांकि उनके इस बयान से कई खिलाड़ियों ने असहमति ज़ाहिर की है. हालांकि, कई क्रिकेट बोर्ड ने इस पर अमल भी करना शुरू कर दिया है. इंगलैंड और वेल्स क्रिकेट बोर्ड (ईसीबी) ने 2010 के सीजन के लिए अपने घरेलू क्रिकेट कैलेंडर से 50 ओवर के फॉरमेट को हटा दिया है. ईसीबी के अध्यक्ष जाइल्स क्लार्क के मुताबिक़ आईसीसी भी 2011 के वर्ल्ड के बाद 50 ओवर के मैचों की समीक्षा करने वाली है और फ़िलहाल रैंकिंग में शिखर पर क़ाबिज़ दक्षिण अफ्रीका भी घरेलू-स्तर पर एकदिवसीय नहीं खेलती है, ऐसे में हमारे लिए यह बदलाव काफी अहम है. ध्यान देने वाली बात है कि क्रिकेट की शुरूआत भी इंग्लैंड में ही हुई थी और पहला एकदिवसीय मई 1962 में इंग्लैंड की ही दो काउंटी टीमों लिसेस्टशायर और डर्बीशायर के विरुद्ध खेला गया. पहला अंतरराष्ट्रीय एकदिवसीय जनवरी 1971 में ऑस्ट्रेलिया और इंग्लैंड के बीच मेलबर्न में खेला गया. तब ये मैच 65 ओवरों के होते थे. समय के साथ इसमें भी बदलाव आता गया, लेकिन अब बदलाव इतना आ चुका है कि इसे ख़त्म करने की ही क़वायद शुरू हो चुकी है. शुरुआत उसी इंगलैंड ने किया, जहां इसका आग़ाज़ हुआ. सबसे दिलचस्प बात यह कि अभी तक एकदिवसीय क्रिकेट के हुए तमाम महत्वपूर्ण टुर्नामेंट में वह एक भी ख़िताब नहीं जीत पाया है. चाहे वह विश्वकप हो या आईसीसी चैंपियंस ट्रॉफी. लेकिन हक़ीक़त यह भी है कि एकदिवसीय मैचों के प्रति लोगों की दिलचस्पी भी कम हुई है, जिसकी सबसे बड़ी वजह ट्वेंटी-20 क्रिकेट के तौर पर एक नई क्रांति का आना है. इसकी सफलता को देखते हुए न्यूज़ीलैंड के पूर्व क्रिकेटर मार्टिन क्रो ने सुझाव दिया है कि चार साल के अंतराल में होने वाले विश्वकप की जगह दो पारियों का ट्वेंटी-20 क्रिकेट विश्वकप आयोजित किया जाना चाहिए, जिसमें एकदिवसीय मैचों से कहीं ज़्यादा रोमांच है और इंग्लैंड में यह काफी सफल भी है. इस तरह देखा जाए तो क्रिकेट को लेकर एक व्यापक बदलाव की शुरुआत हो चुकी है. वैसे बदलाव तो प्रकृति का नियम है और यह बदलाव अब क्रिकेट में भी होने लगा है. कौन कह सकता था कि टेस्ट की जगह एकदिवसीय ले पाएगा और ट्वेंटी-20 के सामने कभी एकदिवसीय का जुनून भी लोगों के सर से उतर जाएगा, लेकिन आज यह हक़ीक़त बन गई है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

विश्व नृत्य समारोह का आग़ाज़

फोटो–प्रभात पाण्डेय

अगले महीने यानी सितंबर की 10 से 13 तारीख़ तक भारत में वर्ल्ड डांस फेस्टिवल का आयोजन होने जा रहा है. यह आयोजन हाल ही में बने गुड़गांव के होटल लीला केंपिंस्की में होगा. इस फेस्टिवल के मुख्य आयोजक सूर्या ब्राजील हैं, जिनको ब्राजील, क्यूबा, वेनेजुएला, डोमिनिकन रिपब्लिक और भारतीय दूतावास का समर्थन प्राप्त है. आयोजन से पहले ब्राजील की मुख्य नृत्य विधाओं को दिखाने के लिए पिछले सप्ताह ब्राजील के दूतावास में एक ख़ास कार्यक्रम का आयोजन किया गया. इसमें ब्राजील के प्रसिद्ध डांसरों ने भाग लिया तथा अलग-अलग तरह के डांस प्रस्तुत किए. वहां के दो मशहूर डांसर्स फर्नांडा डायस और सेर्गिन्हो ने अपनी कलात्मक प्रस्तुति से लोगों के दिल जीत लिए. भारत की प्रसिद्ध कथक नृत्यांगना उमा शर्मा ने भी अपने नृत्य की प्रस्तुति दी. ब्राजील की तरफ़ से कुछ ऐसे डांस भी पेश किए गए थे, जिन्हें लोग जानते तक नहीं थे. सांबा नृत्य लाजवाब था.

रियलिटी शो के विजेता अपने मुक़ाम से दूर

अपने अंदर छिपी हुई प्रतिभा को दिखाने के लिए हर कोई बेकरार रहता है. ऐसी प्रतिभाएं आजकल रियलिटी शो के ज़रिए ही मंच पर दिखाते हैं. हालांकि जीत हासिल करने में सफल होने के बाद पता ही नहीं चलता कि ये प्रतिभाएं कहां खो जाती हैं? उन्होंने जिस मुक़ाम को हासिल करने के लिए जीतोड़ मेहनत की थी, उसमें सफल होकर भी वह नाम न कमा पाए तो इसका क्या फ़ायदा? वे अगर दोबारा नज़र भी आते हैं तो केवल किसी सीरियल में होस्ट या फिर से प्रतियोगी के रूप में.

वैसे रियलिटी शो एक ऐसा मंच हैं, जहां प्रतियोगी नाचने, हंसने, गाने आदि की प्रतिस्पर्धा में भाग लेते हैं और देखते ही देखते पैसों के साथ-साथ नाम और शोहरत भी कमाने लगते हैं. इन शो में जजेज़ के अलावा दर्शक भी अपने वोट के ज़रिए इन्हें जिताने में मदद करते हैं. हां, सितारा बनने के बाद ये कहां जाते हैं यह पता नहीं चल पाता. यह भी सोचने की बात है कि जिस हुनर से उनकी पहचान बनती है, वह उसी क्षेत्र में कुछ ख़ास करते दिखाई नहीं देते. फेम गुरुकुल, जी सीने स्टार की खोज, एमटीवी रोडीज, इंडियन आइडल, सारेगामापा सरीखे कई रियलिटी शोज आए, जिनमें प्रतिभागियों ने जीत हासिल करने के लिए ख़ूब मेहनत की और जीते भी, लेकिन जीत के बाद कहां गए? उनका क्या हुआ? कुछ पता नहीं चला. ऐसे ही सोनी पर आने वाले रियलिटी शो इंडियन आयडल के कई सीजन आए, जिसमें प्रतिभागियों के चुनाव से लेकर उनके प्रदर्शन तक की हर याद शायद अब तक लोगों के जेहन में बनी हुई होगी. जहां एक ओर इस शो से निकले विनर अभिजीत सांवत, संदीप आचार्य, प्रशांत तमांग और सौरभी तमाम कोशिशों के बावजूद संगीत की दुनिया में अपनी जगह बनाने में नाकामयाब सिद्ध हुए, वहीं जीटीवी पर प्रसारित होने वाले रियलिटी शो सारेगामापा के विनर का भी हाल कुछ इसी तरह का ही है. इन तीनों सीज़न के विनर देबोजीत, ऑनिक और वैशाली भी अपनी चमक खो बैठे. यहीं नहीं, शो में इन लोगों के मेंटर्स की भूमिका निभा चुके म्यूज़िक डॉयरेक्टर भी इनके लिए कुछ न कर सके. शो में बड़े-बड़े वादे करने वाले इन मेंटर्स ने इन रियलिटी स्टार को अपने साथ एक दो गाने गवाकर चलता कर दिया. यह हाल केवल इन्हीं लोगों का नहीं है, बल्कि इन्हीं की तरह कई और रियलिटी विनर्स का भी है. भीड़ से अलग दिखने की चाह में वे इन रियलिटी शो का हिस्सा तो बने, लेकिन शो जीतने के बाद भीड़ में ही कहीं खो गए. अब रोडीज के आशुतोष को ही ले लीजिए. वह भी रोडीज के बाद बिग बॉस में विनर बने, लेकिन आज भी उनकी कोई ख़ास पहचान नहीं है. बस इतना है वह किसी न किसी शो में नज़र आ ही जाते हैं. नज़र आना ही सब कुछ नहीं होता काम करना भी बहुत कुछ होता है. फेम गुरुकुल में विनर बने काजी और रूपरेखा, वॉयस ऑफ इंडिया के हर्षित सक्सेना हों या फिर लाफ्टर चैंलेज के रऊफ लाला आदि कलाकार जो कुछ समय तक स्पॉट लाइट में तो रहे. फिर बाद में लगा जैसे लाइट हमेशा के लिए बुझ गई हो. दरअसल, इन बड़े रियलिटी शो मे तमाम तरीक़ों से मानसिक और शारीरिक संघर्ष कर हर पड़ाव को पार कर जीतने वाले ये रियलिटी स्टार सही मायनों में सितारों का मुक़ाम हासिल नहीं कर पाए.

अपनी प्रतिभा को दुनिया के आगे रखने के लिए और सिर्फ़ चंद दिनों की लोकप्रियता हासिल करने की ख़ातिर आज भी लोग घंटों लाइन में लगकर अपना ऑडिशन देते हैं. अपनी क़िस्मत को आज़माने के लिए आगे आते रहते हैं, ताकि उनको थोड़ी लोकप्रियता ही मिल जाए. कुछ को केवल निराशा हाथ लगती हैं.

फ्रीडा की इच्छा मधुर

रलमडॉग की कामयाबी के बाद फ्रीडा पिंटो की इच्छा हॉलीवुड में नहीं बॉलीवुड में आने की है. वैसे उन्होंने स्लमडॉग से तारीफ़ और नाम तो बहुत कमाया है, यहां तक कि हॉलीवुड में और भी पंख फैलाने के लिए एक एजेंट तक रख लिया. अब फ्रीडा हिंदी फिल्मों में भी अपने पांव पसारना चाहती हैं. हाल ही में एक इंटरनेशनल प्रेस कांफ्रेंस में उन्होंने बॉलीवुड में काम करने की अपनी इच्छा को ज़ाहिर किया. साथ ही इस बात पर ज़ोर दिया कि फिल्म मधुर भंडारकर की हो तो अच्छा है. इस बात से तो मधुर बेहद ख़ुश हैं और कह रहे हैं कि वह अपनी फिल्म में फ्रीडा के साथ काम ज़रूर करेंगे. मधुर पहले भी फैशन और पेज थ्री जैसी हिट और सशक्त फिल्में बना चुके हैं. लगता है फिर एक बार फिर नाम कमाने की बारी आ गई है. एक बात है फ्रीडा की समझदारी की तो दाद देनी ही पड़ेगी. उन्हें अच्छी तरह पता था कि बॉलीवुड में महिलाओं की ज़िंदगी पर ज़ोरदार फिल्म बनाने वाले निर्माता मधुर भंडारकर की फिल्म ही उनके लिए सबसे बेहतरीन साबित हो सकती है. बहरहाल मधुर की फिल्म में अगर फ्रीडा को देखा जाए तो कोई हैरानी नहीं होगी. देखना यह बाक़ी है कि फ्रीडा का फैशन मधुर के साथ उन्हें कहां तक लेकर जाता है. हम तो यही कह सकते हैं कि इस नए फैशन के लिए तो इंतज़ार ही करना पड़ेगा.

समीरा ने किया मिथुन दा को मना

आजकल बॉलीवुड में नए-नए चेहरे देखने को मिलते ही है. वैसे भी आजकल काम मिलना बहुत मुश्किल ही नहीं नाममुकिन है. क्योंकि नए-नए चेहरे जो आ गए है. लेकिन पुराने चेहरों का भी कोई जवाब नहीं. चाहे पुरानी अभिनेत्रियों ख़ुद फ्लॉप हो अगर काम किसी फ्लॉप हीरो के साथ मिले तो काम कतई नहीं करना चाहती .

ऐसा ही कुछ दक्षिण की नमकीन सुंदरी समीरा रेड्डी ने किया क्योंकि वह अपने फ्लॉप समय में भी ख़ुद को बेहद गंभीरता से ले रही है. भले ही उनकी कोई फिल्म हिट नहीं हुई हो, या उनकी झोली में बहुत अधिक फिल्में नहीं हों, फिर भी उनके भाव कम नहीं हो रहे.

हाल ही में, जब समीरा को मिथुन चक्रवती के प्रोडक्शन हाउस की फिल्म में काम करने का मौक़ा मिला तो पहले समीरा ने तो हां भर दी, लेकिन बाद में मुकर गईं. इसके पीछे की ख़बर यह है कि फिल्म के अभिनेता का नाम सुनकर उन्होंने अपना पल्ला झाड़ लिया. वह अभिनेता और कोई नहीं मिथुन का बेटा मिमोह है.

सोचिए ज़रा बेचारे मिथुन को अपने बेटे के लिए अभिनेत्री ढूंढने में कितनी बेइज़्ज़ती सहन करनी पड़ी. वैसे, मिमोह को परेशान होने की ज़रूरत नहीं है. बॉलीवुड में अभिनेत्रियों का अकाल तो है नहीं. एक जाती है तो दूसरी जल्द ही मिल जाती है. यह तो चलता ही रहता है.

किम का राज़ खुला

किम शर्मा याद हैं आपको? वही, मोहब्बतें की शोख-कमसिन बाला. हां हां, वही, उसके अलावा शायद उनके खाते में कोई और याद करने लायक फिल्म शायद ही हो. वैसे भी किम को फिल्मों में काम करने का अवसर ज़्यादा नहीं मिलता है. मिले भी क्यों?

क्योंकि वह ख़ुद ही मेहनत नहीं करना चाहती है. उनकी अभी तक कोई फिल्म चली क्यों नहीं यह तो वही बेहतर बता सकती हैं. वैसे भी वह तो किसी फ्लॉप फिल्म में भी नज़र नहीं आती. उन्होंने अपने काम को राज़ रखा हुआ है लेकिन हाल ही में उनके बारे में एक नया राज़ पता चला है. वह स्पेनिश भाषा सीख रही हैं. इसी में वह बहुत व्यस्त है. लोगों को समझ नहीं आ रहा था कि किम को स्पेनिश सीखने की क्या ज़रूरत पड़ गई. सीखने की वज़ह तो ख़ैर बेहद वाजिब है ही. उनका हमसफ़र और ससुराल जो स्पेन में है. जी हां, किम ने आख़िरकार सात फेरे लेकर अपना घर बसाने का फ़ैसला कर ही लिया है. वह अपने स्पेनिश दोस्त व गायक कालरेस मरीन के साथ शादी के बंधन में बंधने जा रही हैं. कालरेस स्पेन के मशहूर बैंड टू डिवो के सदस्य हैं. किम और मरीन ज़ोर-शोर से शादी की तैयारियों में व्यस्त हैं.

वार्षिक शुल्क :1000 रु.

कृपया अपने सबस्क्रिप्शन चेक अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के नाम पर अपने नाम और पूरे पते के साथ यहां भेजें : (गैनन) के-2, दूसरी मंज़िल, चौधरी बिल्डिंग, मिडिल सर्किल, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली -110001

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com